अमूल्य शास्त्र दानदाता

जैन स्तम्भ दानवीर

१ राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी जौहरी

[illegible]

जैन शास्त्रोद्धार मुद्रालय, सिकंदराबाद (दक्षिण)

जैन प्रभावक धर्म धुरंधर

S JWALAPRASHAD

लाला ज्वालाप्रसादजी जौहरी

जन्म सं [illegible]

दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र की विषयानुक्रमणिका.

प्रथम दशा-बीस असमाधीये दोष १
द्वितीय दशा-इक्कीस सबला दोष ४
तृतीय दशा-तेतीस अशातना ८
चतुर्थ दशा आचार्य की ८ सम्पदा १५
पंचम दशा-चित्तसमाधी के १० स्थान ३०
षष्ठम दशा श्रावक की ११ प्रतिमा ४३
सप्तम दशा-भिक्षुक की १२ प्रतिमा ६६
अष्टम दशा-महावीर के ५ कल्याण ८५
नवम दशा तीस महा मोहनीय स्थान ८७
दशम दशा-नव नियाने विस्तार से ९७

इत्यनुक्रमणिका

☞ परम पूज्य श्री कहानजी ऋषिजीमहाराज के सम्प्रदाय के बालब्रह्मचारी मुनि श्री अमोलकऋषिजीने सीर्फ तीन वर्ष में ३२ ही शास्त्रों का हिंदी भाषानुवाद किया, उन ३२ ही शास्त्रों की १०००-१००० प्रतों को सीर्फ पांच ही वर्ष में छपवाकर दक्षिण हैद्राबाद निवासी राजा बहादुर लाला सुखदेवसहायजी ज्वालाप्रसादजी ने सब को उन का अमूल्य लाभ दिया है।

सप्तविंशतितम-दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र-चतुर्थछेद

॥ प्रथम दशा ॥

णमो अरिहंताण, णमो सिद्धाण, णमो आयरियाण, णमो उवज्झायाण णमो लोए सव्वसाहुण ॥१॥ सुयमे आऊसतेण भगवयाएव मक्खाय इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं वीस असमाहिट्ठाण पण्णत्ता, ॥ कयरे खलु ते थेरेहिं भगवंतेहिं वीस असमाहिट्ठाणा

नमस्कार होवो अरिहंत भगवंत को, नमस्कार होवो सिद्ध भगवंत को, नमस्कार होवो आचार्य भगवंत को, नमस्कार होवो उपाध्याय भगवंत का और नमस्कार होवो लोकमें रहे सर्व साधु भगवंत को ॥ श्री सुधर्मा स्वामी कहते हैं कि अहो आयुष्मन जम्बु ! सुनो, भगवंत श्री महावीर स्वामीने ऐसा कहा है आगे कहेंगे सो स्थविर भगवंतने वीस असमाधि दोष के स्थानक कहे हैं अहो भगवन् ! स्थविर भगवंतने असमाधी दोष के वीस स्थानक कौनसे कहे हैं ? अहो शिष्य ! स्थविर भगवंतने वीस

दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र की प्रस्तावना

श्रुतसागर समुद्भूतं प्रणमामि जिनेश्वरं ॥ दशाश्रुतस्कन्धस्य वार्तिक करोम्यहं ॥१॥

जिन जिनेश्वर से श्रुत समुद्र का उद्भव हुआ है उन जिनेश्वर को प्रणाम करके दशाश्रुतस्कन्ध शास्त्र का हिन्दी भाषानुवाद करता हूं दश अध्ययन रूप श्रुत का स्कन्ध होने से इस का नाम दशा श्रुतस्कन्ध कहते हैं यह चौथा छेद सूत्र है इस में समाधियों के असमाधी सबला दोषों का यावत् नियाणों का दृष्टान्त पूर्वक अच्छा वर्णन किया है संयम की विशुद्धता जिस की समाधी व करणी का सम्पूर्णता से फल के इच्छकों को इस शास्त्र के ज्ञाता होने की परमावश्यकता है

इस शास्त्र की एक प्रत तो मेरे पास थी, एक प्रत कच्छ देश पावन कर्ता कवीवर श्रीनागचन्द्रजी महाराजजी तरफ से प्राप्त हुई उस परसे यथामति संशोधन करके पाठ लिखा है और तदनुसार भाषानुवाद किया है जिस में जो अशुद्धता रही हो उसे शुद्ध कर विद्वद्वरों पठन करेंगे

उप्पाइयावि भवति ॥ ११ ॥ पोराणाइं अधिकरणाइ खमितविउ सविचाइ उदीरिता भवति ॥ १२ ॥ अकाले सज्झायाओ कारियावि भवति ॥ १३ ॥ ससरक्खपाणिपादे ॥ १४ ॥ सद्दकरे ॥ १५ ॥ भेयकरे ॥ १६ ॥ झझकरे ॥ १७ ॥ कलह करे ॥ १८ ॥ सूरप्पमाण भोइए ॥ १९ ॥ एसणाइ असमियावि भवति ॥२०॥ एते खलु थेरेहिं भगवतेहिं वीस असमाहिट्ठाणा पण्णत्ता, त्तियेमि ॥पढमा दसा सम्मत्त ॥१॥*

आमरणावाद बोले-निन्दा करे, १० वारम्वार अन्यकी दुर्गुणों की उदीरणा करे, ११ नवे क्लेश झगडे जो पहिले उत्पन्न न हुवा उस को उत्पन्न करे, १२ प्रथम का क्लेश शान्त होगया क्षमत क्षमावना होगये पुनः उस की उदीरणा करे, १३ अकाल में स्वाध्याय करे अर्थात् कालिक सूत्र की तो दिन रात्रि के प्रथम और अन्तिम प्रहर छाडकर और उत्कालिक सूत्र की प्रातः सन्ध्या मध्यान्ह और आधी रात्री में पठन करे, १४ गृहस्थ के हाथ पांव व भाजन पृथ्वी पानी आदि सचित्त कर भरे हों उस से आहार आदि ग्रहण करे, १५ प्रहर रात्रि गये पाठ सूर्योदय न होवे वहां तक जोर २ से बोले, (पाठान्तर-परस्पर असमाधी उत्पन्न करे) १६ साधुओं में सघ में भेद करे फूट पडावे, १७ हर वक्त ज्यूजकार [तिरस्कार] युक्त वचन बोले, १८ साधुओं में या सघ में झगडे उत्पन्न करे या फेलावे, १९ सूर्योदय से सूर्य अस्त तक-सब दिन आहार करे अर्थात् मुह चलता ही रहे, और २० आहार वस्त्र पात्र स्थानक की पूरी एषणा नहीं करे जैसा मिले वैसा भोगवे ॥ अहो जम्बू ! स्थविर भगवन्तने वक्त वीस स्थानक असमाधी दोष के सयम में असमाधी उत्पन्न करने के कहे हैं ॥ इति प्रथम दशा समाप्तम् ॥ १ ॥

* *

पण्णत्ता ? इमा खलु ते थेरेहिं भगवंतेहिं वीस असमाहिट्ठाणा पण्णत्ता तंजहा—दवदव चारियावि भवति ॥ १ ॥ अप्पमज्जिय चारियावि भवति ॥ २ ॥ दुप्पमज्जिय चारियावि भवति ॥ ३ ॥ अतिरिय सेज्जासणिय ॥ ४ ॥ रायणिय परिभासी ॥ ५ ॥ थेरोवघाएए ॥ ६ ॥ भूतोवघातीए ॥ ७ ॥ संजलणे कोहणे ॥ ८ ॥ पिठमंसियावि भवति ॥ ९ ॥ अभिक्खणं २ उधारित्ता ॥ ११ ॥ णवाइं अधिकरणाइं अणुप्पण्णाइं

असमाधि * के स्थानक कहे हैं उन के नाम—१ शीघ्रता से दव २ चलता चले, २ दिन को दृष्टी से देखे बिना रात को रजोहरण से पूंजे बिना-चले बैठे शयन करे वस्त्र पात्रादि धारे, ३ अन्य स्थान देखे पूंजे और अन्य स्थान चले बैठे शयन करे व भंडोपकरण धरे, ४ अतिरिक्त-मर्याद (चाहिये जिस से) अधिक शैय्या स्थानक पाट पाटले पावे और भोगवे, ५ रत्नाधिक अपने से गुणों वृद्ध वयोवृद्ध आचार्य उपाध्याय साधु का पराभवकारी रेमू इत्यादि तुच्छ वचन से बोलावे, ६ स्थविर-साठ वर्ष से अधिक वयवाले वय स्थविर बीस वर्ष से अधिक दीक्षावाले दीक्षा स्थविर, और स्थानांग समवायांगादि सूत्र के ज्ञान सूत्र स्थविर इन की घात मृत्यु चिन्तवे ७ भूतोपघातिक-पृथव्यादि षट्काया जीवों की घात चिन्तवे ८ सदैव संताप क्रोधित बना रहे या क्षीण में क्रोध करे, ९ पृष्ट मांस भक्षी होवे, अर्थात् पीछे से अन्य का

---

* जिस प्रकार बीमारी से शरीर निर्बल बनता है इस प्रकार ही असमाधी दोष के सेवन करने से संयम निर्बल बनता ह

भुंजमाणे सबले ॥ ४ ॥ रायपिंडे भुंजमाणे सबले ॥ ५ ॥ कीय, पामिच्चं, अच्छिज्ज, अणिसिट्ठ, आहट्टुदिज्जमाण भुंजमाणे सबले ॥ ६ ॥ अभिक्खण पडिमाइखित्ता भुंजमाणे सबले ॥ ७ ॥ अतो छमासस्स गणाओगणं सकम्ममाणे सबले ॥ ८ ॥ अतोमासस्स तओ उदगलेवं करमाणे सबले ॥ ९ ॥ अतोमासस्स तओ माइट्ठाण करमाणे सबले ॥ १० ॥ सागारिय पिंड भुंजमाणे सबले ॥ ११ ॥ आउट्टियाए पाणाइवाय करेमाणे सबले ॥ १२ ॥ आउट्टियाए मुसावाय करेमाणे सबले ॥ १३ ॥

दानार लिया (४) मालिक की आज्ञा बिना लिया और (५) सन्मुख लाकर दिया यह पांच दोष युक्त आहार पादिक भोगवे तो सबल दोष लगे ॥ ६ ॥ बारम्बार नमोकारसी आदि तप तथा विगय आदि के प्रत्याख्यान का भंग करे अशनादि भोगवे तो सबल दोष लगे ॥ ७ ॥ दीक्षा लिये बाद छ महिने के अन्दर सम्प्रदाय का बदला करे तो सबल दोष लगे ॥ ८ ॥ एक महिने के अन्दर तीन लेप पानी के लगावे अर्थात् तीन दफा नदी नाले के पानी में पांव देकर उतरे तो सबला दोष लगे ॥ ९ ॥ महिने में तीन वक्त माया के स्थानक सेवन करे अर्थात् दगाबाजी करे ॥१०॥ शय्यातर [जिनकी आज्ञा ले मकान में उतरे हों] उन के घर का आहार आदि भोगवे ॥ ११ ॥ आकुट्टी अर्थात जानकर प्राणातिपात

॥ द्वितीय—दशा ॥

सुयंमे आउसंतेणं भगवया एवमक्खायं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पण्णत्ता कयरे खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पण्णत्ता? इमे खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एक्कवीसं सबला पण्णत्ता तंजहा—हत्थकम्मं करेमाणे सबले ॥ १ ॥ मेहुणं पडिसेवेमाणे सबले ॥ २ ॥ राइ भोयणं भुंजेमाणे सबले ॥ ३ ॥ अहाकम्मं

अहो आयुष्मन् जम्बू! मैंने सुना है भगवन्तने ऐसा कहा है यह आगे कहेंगे वे स्थविर भगवंतने इक्कीस सबल दोष कहे हैं * उन के नाम—१ हस्त कर्म करे अर्थात् हस्तादि की कुचेष्टा कर वीर्य का नाश करे तो सबल दोष लगे ॥ १ ॥ मैथुन सेवन करे तो सबल दोष लगे ॥ २ ॥ रात्रि को चारों प्रकार के आहार आदिक भोगवे तो सबल दोष लगे ॥ ३ ॥ आधाकर्मी—साधु के निमित्त किया हुआ आहार आदि भोगवे तो सबल दोष लगे ॥ ४ ॥ राजपिण्ड—महा पराक्रमी आहार मांस मदीरादि भोगवे तो सबल दोष लगे ॥ ५ ॥ (१) साधु नीमित्त मोल लिया (२) उधारा लिया (३) बलात्कार से

---

* जैसे निर्बल मनुष्य पर सबल (बलवंत) प्रहार पड़ने से उस की घात होती है वैसे इक्कीस सबले दोषों का सेवन करने से संयम की घात होती है

यणवा पुप्फभोयणवा फलभोयणवा, बीयभोयणवा हरिय भोयणवा भुंजमाणे सबले ॥ १८ ॥ अतो संवच्छरस्स दस उदगलेवे करेमाणे सबले ॥१९॥ अतो संवच्छरस्स दस माइट्ठाण करेमाणे सबले ॥ २० ॥ आउट्टियाए सीतोदग ओघाइएण, हत्थेणवा मत्तणवा दव्विए भायणेणवा असणवा पाणंवा खाइमवा साइमवा पडिग्गाहेत्ता भुंजमाणे सबले ॥ २१ ॥ एते खलु थेरेहिं भगवतेहिं एकवीस सबला पन्नत्ता त्तियेमी ॥ बितिया दसा सम्मत्त ॥ २ ॥

* * * *

का, * बीज का और १० हरित काय का भोजन करे ॥ १८ ॥ एक वर्ष में दश पनी के लेप लगावे अर्थात् दश वक्त नदी नाले के पानी में पांवसे उतरे ॥ १९ ॥ एक महिन में दश माया के स्थान सेवन करे दश वक्त दगल बाजी करे ॥ २० ॥ और जानकर सचित्त पानी से या सचित्त द्रव्य से हाथ पांव कुडछी-चाटू बरतन भरा हुवा हो उस में से अशनादि आहार देता हो उसे ग्रहण कर भोगवे तो सबल दोष लगे ॥ २१ ॥ यों निश्चय अहो जम्बू ' स्थविर भगवन्त इक्कीस प्रकार के सबल (भारी) दोषों कहे हैं भगवंत से सुना जैसा तेरे से कहा ॥ इति दशा श्रुतस्कंध की दूसरी दशा समाप्तम् ॥२॥

आउट्टियाए अविस्साराण निग्गिज्झमाण सचल ॥ १४ ॥ आउट्टियाए अणंतरहियाए पुढविए ठाणवा सज्जंवा निसीहियवा चेतेमाणे सबले ॥ १५ ॥ एव ससणिद्धाए पुढविए एवं ससरक्खाए पुढविए ॥ १६ ॥ एव आउट्टियाए चित्तमत्ताए सिलाए चित्तमंताएलेलूए कोलावास सिया दारुए जीव पइट्ठिए सअंडे सपाण सबीए सहरिए सउस्से सउत्तिंगे पणग दग मट्टिय मक्कड संताणए तहप्पगारं ठाणवा सिज्जवा निसिहियवा चेतमाणे सबले ॥ १७ ॥ आउट्टियाए मूलभोयणवा कंदभोयणवा खंधभोयणवा, तया भोयणवा पवालभोयणवा, पत्तभो

बीज की घात करे ॥ १२ आकुट्टी-मूल भोग ॥ १३ ॥ आकुट्टी अदत्त दानले चोरी करे ॥ १४ ॥ आकुट्टी अंतर रहित सचित्त पृथ्वी पर स्वाध्याय कर बैठे शयन करे ॥ १५ ॥ ऐसे ही सचित्त पानी से भींगी व सचित्त रज से भरी पृथ्वी पर बैठे शयनकर व स्वाध्याय करे ॥ १६ ॥ ऐसे ही जानकर सचित्त शिला पर सचित्त कंकर पर सडे हुवे लक्कड पर, जीवों का भरा हुआ चिंटी आदि के अंडे सहित बीज अंकुर सहित हरी-वनस्पति, ओसका पानी, कीडी के नगरे फूलन, कच्चा पानी, कच्ची मट्टी, मकड-दीमक, मकडी के जाले, इस प्रकार के स्थानक में स्वाध्याय करे बैठे शयन करे ॥ १७ ॥ जानकर—१ मूल का, २ कंदका, ३ स्कन्ध-पुटका, ४ त्वचा-छालका, ५ प्रवाल-कुंपल का, ६ पत्ते का, ७ फूल का, ८ फल

सादणा सेहस्स ॥ ४ ॥ सेहे राइणियस्स सपक्खचिट्ठिचा भवति आसदणा सेहस्सा ॥ ५ ॥ सेहे राइणियस्स आसणं चिट्ठिचा भवति आसादणा सेहस्स ॥ ६ ॥ सहे राइणियस्स पुरओ निसीइचा भवति आसादणा सेहस्स ॥ ७ ॥ सेहे राइणियस्स पक्खे निसीइचा भवति असाक्षणा सेहस्स ॥ ८ ॥ सेहे राइणियस्स आसन्न निसीइचा भवति आसाक्षणा सेहस्स ॥ ९ ॥ सेहे राईणिएण सार्द्धं बाहिया वियारभूमिवा निक्खते समाणे तत्थ पुव्वामेव सेहेतराए आयामति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्सा ॥ १० ॥ सेहे राइणिए सार्द्धं बाहिया वियारभूमिवा विहार भूमिवा निर्दिस्वत तत्थ पुव्वा

तो शिष्य का अशातना लगे ॥ ४ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ अड़कर खड़ा रहे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ५ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे अड़कर खड़ा रहे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ६ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के आगे बैठे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ७ ॥ जा शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ लगकर बैठे ते शिष्य को अशातना लगे ॥ ८ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे अड़कर बैठे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ९ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु के साथ बाहिर जंगल [दिशा] गया और एक ही पात्र लेगया है ! तहां शिष्य रत्नाधिक गुरु के पहिले शुची करे और फिर गुरु करे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १० ॥ रत्नाधिक गुरु के साथ बाहर थंडिल भूमि का

॥ तृतीय-दशा ॥

सुयम मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खाय इहखलु थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीस आसायणाओ पण्णत्ताओ कयरा खलु थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीस आसायणाओ पण्णत्ताओ, इमाओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीस आसायणाओ पण्णत्ताओ तंजहा—सेहे रायणियस्स पुरओगंता भवति आसादणा सेहस्स ॥ १ ॥ सेहे राइणियस्स पक्खगता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २ ॥ सेहे राइणियस्स आसण गंता भवति आसादणा सेहस्स ॥ ३ ॥ एवं एएणं अभिलावेणं सेहे राइणियस्स पुरओ चिट्ठित्ता भवति आ

अहो आयुष्मन् जम्बू! मैंने सुना है भगवन्ने ऐसा कहा है यह आगे कहेंगे सो तेतीस अशातना स्थविर भगवन्ने कही है शिष्य पूछता है-अहो भगवन्! किस प्रकार तेतीस अशातना भगवन्ने कही है? अहो शिष्य! यह आगे कहें। सो तेतीस अशातना भगवन्ने कही है उन के नाम-१ जो शिष्य रत्नाधिक [सूत्र ज्ञान दीक्षा में अधिक पर्याय के धारक हो उन के] आगे चले तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों (बायें दाहिने) तरफ लगकर चले तो शिष्य को अशातना लगती है ॥ २ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे लगकर चले तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ३ ॥ यों इस ही अभिलापक करके आगे भी जानना, जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के आगे खडा रहे

सादणा सेहस्स ॥ ४ ॥ सेहे राइणियस्स सपक्खंपिट्ठिचा भवति आसदणा सेहस्स ॥ ५ ॥ सेहे राइणियस्स आसण्ण चिट्ठिचा भवति आसादणा सहस्स ॥ ६ ॥ सेहे राइणियस्स पुरओ निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस्स ॥ ७ ॥ सेहे राइणियस्स पक्ख निसीइत्ता भवति असादणा सेहस्स ॥ ८ ॥ सेहे राइणियस्स आसन्न निसीइत्ता भवति आसादणा सेहस्स ॥ ९ ॥ सेहे राइणिएण सद्धिं वहिया वियारभूमिंवा निक्खते समाणे तत्थ पुव्वामेव सेहेतराए आयामति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्सा ॥ १० ॥ सेहे राइणिए सद्धिं वहिया वियारभूमिंवा विहार भूमिंवा निक्खित तत्थ पुव्वा

जो शिष्य को आशातना लगे ॥ ४ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ अड़कर खड़ा रहे तो शिष्य को आशातना लगे ॥ ५ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे अड़कर खड़ा रहे तो शिष्य को आशातना लगे ॥ ६ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के आगे बैठे तो शिष्य को आशातना लगे ॥ ७ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के दोनों तरफ लगकर बैठे तो शिष्य को आशातना लगे ॥ ८ ॥ जो शिष्य रत्नाधिक गुरु के पीछे अड़कर बैठे तो शिष्य को आशातना लगे ॥ ९ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु के साथ बाहिर उच्चार [दिशा] गया और एक ही पात्र लेगया है । वहां शिष्य रत्नाधिक गुरु के पहिले शुची करे और फिर गुरु करे तो शिष्य को आशातना लगे ॥ १० ॥ रत्नाधिक गुरु के साथ बाहिर थंडिल भूमि का

भए सेहतराए आलोएति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्स ॥ ११ ॥ केइ राइणियस्स पुव्वसंलवित्तए सिया त पुव्वामेव सेहतराए पच्छ आलवति पच्छा रायणिए आसादणा सेहस्स ॥ १२ ॥ सेहे रायणियस्स राओ वा वियाले वा विहारमाणस्स अज्जो ! के सुत्ते, के जागरे ? तत्थ सेहे जागरमाण राइणियस्स अपडिसुणेत्ता भवति, आसादणा सेहस्स॥ १३॥सेहे असणं वा पाणं वा खाइमं वा साइमं वा पडिग्गाहेत्ता तपुव्वामेव सेहतरागस्स आलोएति, पच्छा राइणियस्स आसादणा सेहस्स ॥ १४ ॥सेहे रायणियस्स असणं वा

भया स्वाध्याय भूमि को जाकर पीछे आये वहां गुरु के पहिले शिष्य आलोचना करे इर्या वही प्रतिक्रमे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ११ ॥ कोई गृहस्थादि दर्शनादि कार्यार्थ आया हो उसे गुरु के बोलावे पहिले शिष्य बोलावे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १२ ॥ रात्रि की वक्त या किसी कारण से संध्या की वक्त शिष्य सोते होवें तब गुरु बोलावे अहो आर्यों ! कौन सोता है कौन जागता है ? तब जागता हुवा भी जो रत्नादि गुरु को प्रत्युत्तर न दे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १३ ॥ शिष्य अशन, पान खादिम, स्वादिम चारों प्रकार का आहार गौचरी करके लावे वह किस प्रकार लाया इस की आलोचना प्रथम शिष्यान्तर अन्य साधुओं के आगे करे और फिर रत्नाधिक गुरु के आगे करे तो शिष्य को अशा

४ पडिग्गाहिचा पुव्वामेव सेहतरागस्स पडिदसेति पच्छा रायणियस्स असायणा-सेहस्सा ॥ १५ ॥ सेह रायणीयस्स असणवा ४ पडिग्गाहिता त पुव्वामेव सेहतराग उवणिमतेति आसायणा सेहस्स ॥ १६ ॥ सेहे राइणिएण सर्द्धि असणवा ४ पडिग्गाहिचा त राइणिय अणपुच्छिचा जस्स २ इच्छाति तस्स २ खद्ध दलयति आसायणा सेहस्स ॥१७॥ सेहे राइणिएसर्द्धि असणवा ४, आहारेमाणे, तत्थ सेहे खद्ध-खद्ध डाअडाअ रसिय रसिय उसट्ट २ मणुन्न २ मणाम २ निद्ध २ लुक्ख लुक्ख

तना लगे ॥ १४ ॥ शिष्य अशनादि चारों आहार बेहर कर लाया वह पहिले तो शिष्यान्तर को बतावे और फिर रत्नादि गुरु को बतावे तो शिष्य को अशातना लग ॥ १५ ॥ जो शिष्य अशनादि चारों प्रकार के आहार ग्रहण करके लाया वह प्रथम छोटे साधु को आमंत्रण करे फिर गुरु को आमंत्रण करे तो अशातना लगे ॥ १६ ॥ शिष्य रत्नादि गुरु के साथ अशनादि चारों प्रकार का आहार लाया उसे रत्नादि गुरुका पूछ बिना जो २ साधु उसमें से आहार ग्रहण करने की इच्छा करे उस २ साधु को जल्दी जल्दी देवे तो शिष्य को अशातना लग ॥ १७ ॥ जो साधु रत्नाधिक गुरु के साथ एक मंडल एक पात्र में आहार करता हुआ तहां शिष्य जल्दी २ अच्छा २ रसयुक्त २ वर्ण गन्धादि उपपेत मनाज्ञ २ मावे जैसा २

मेव सेहतराए आलोएति पच्छारायणिए आसादणा सेहस्स ॥ ११ ॥ केइराइणियस्स पुव्वंसलत्तए सिया तं पुव्वामेव सेहतराए चेव आलवति पच्छारायणिए आसादणा सेहस्स ॥ १२ ॥ सेहे रायणियस्स राओवा वियालेवा विहारमाणस्स अज्जो ! के सुत्ते, के जागरे ? तत्थ सेहे जागरमाण राइणियस्स अपडिसुणत्ता भवति,आसादणा सेहस्स॥१३॥सेहे असणवा पाणवा खाइमवा साइमवा पडिग्गहेता तपुव्वामेव सेहतरागस्स आलोएति, पच्छा राइणियस्स आसादणा सेहस्स ॥ १४ ॥ सेहे रायणियस्स असणवा

अथवा स्वाध्याय भूमि को जाकर पीछे आये वहां गुरु के पहिले शिष्य आलोचना करे ईर्यावही प्रतिक्रमे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ११ ॥ कोइ गृहस्थादि दर्शनादि कार्यार्थ आया हो उसे गुरु के बोलाये पहिले शिष्य बोलावे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १२ ॥ रात्रि की वक्त या किसी कारण से सन्ध्या की वक्त शिष्य सोते होवें तब गुरु बोलावे अहो आर्यों ! कौन सोता है कौन जागता है ? तब जागता हुवा भी जो रत्नादि गुरु को प्रत्युत्तर न दे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १३ ॥ शिष्य असन, पान खादिम, स्वादिम चारों प्रकार का आहार गौचरी करके लावे वह किस प्रकार लाया इस की आलोचना प्रथम शिष्यान्तर अन्य साधुओं के आगे करे और फिर रत्नाधिक गुरु के आगे करे तो शिष्य को अशा

राइणियस्स कहकहेमाणस्स इति एव वत्ता भवति, आसादणा सेहस्स ॥ २५ ॥
सेहे राइणियस्स कहकहेमाणस्स णो समरासितिवत्ता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २६ ॥
सेहे राइणियस्स कहकहेमाणस्स नो सुमणासु भवति आसादणा सेहस्स ॥ २७ ॥
सेहे राइणियस्स कहकहेमाणस्स परिसभेता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २८ ॥
सेहे राइणियस्स कहकहेमाणस्स कह अच्छिदित्ता भवति आसादणा सेहस्स ॥ २९ ॥
सेहे राइणियस्स कहकहेमाणस्स तीसे परिसाए अणुट्ठित्ताए अभिन्नाए अवोच्छिन्नाए

लाभ होगा इत्यादि कहे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २४ ॥ रत्नाधिक गुरु व्याख्यान देते कदाचित भूल जावे तो शिष्य कहे कि यह ऐसे नहीं है ऐसे कहो, तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २५ ॥ रत्नाधिक गुरु कथा करते हुवे भूल जावे तो शिष्य कहे कि क्या इतना भी तुझे याद नहीं रहता है ? तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २६ ॥ शिष्य गुरु का व्याख्यान की प्रशंसा नहीं करे तथा गुरु की प्रशंसा सुनकर नाराज होवे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २७ ॥ शिष्य गुरु की परिषदा में भेद (फूट) डाले, यह हमारी परिषद और यह गुरु की, तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २८ ॥ गुरु व्याख्यान देते हुवे शिष्य कथा का छेदन कर परिषदा का मन भंग करे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २९ ॥ शिष्य, रत्नाधिक गुरु व्याख्यान दिये बाद वह परिषदा उठी नहीं, बिखरी नहीं, बाहिर गई नहीं, उस ही परिषदा में

आहारेत्ता भवति आसादणा सेहस्स ॥ १८ ॥ सेहे राइणियस्स वाहरमाणस्स अपडिसुणित्ता भवत्ति आसायणासेहस्स ॥ १९ ॥ सेहे राइणियस्स वाहरमाणस्स तत्थगतेचेव पडिसुणित्ता भवति आसदणासेहस्स ॥ २० ॥ सेह राइणिय किंवित्ता भवति आसादणासेहस्स ॥ २१ ॥ सेहे राइणीय तुम निवता भवति, आसादणासेहस्स ॥ २२ ॥ सेहे राइणिय खद्ध खद्ध वत्ता भवति, आसादणासेहस्स ॥ २३ ॥ सेह राइणिय तज्जाएण तज्जाय पडिभणिता भवति आसादणासेहस्स ॥ २४ ॥ सेह-

चिकना २ तथा सुखा २ सब आदि आप भोगवे और बुरा गुरु को दे तो शिष्य को अशातना लगे॥१८॥ शिष्य को रत्नाधिक गुरु किसी कार्यार्थ बोलवे उन का वचन सुना अनसुना करे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ १९ ॥ शिष्य को रत्नाधिक गुरु बोलावे और वह उन का वचन अपने आसन पर बैठा हुवा ही सुने खडा होकर प्रत्युत्तर न देवे तो शिष्य का अशातना लगे ॥२ ॥ शिष्य को रत्नाधिक गुरु ने बोलाया हुवा कहे की, क्या कहते हो ? तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २१ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु का तूंकार से बोलावे तो शिष्य को अशातना लगे ॥ २२ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरुके सन्मुख क्रोध में प्रज्वलित हुवा अथवा २ बोले तो शिष्य को अशातना लगे, ॥ २३ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु को उन का कहा हुवा ही वचन पीछा कहे, अर्थात् गुरु कहे अहो आर्य ! गल्यानी तपस्वी आदि की वैयावृत्य करेगा तो तुझे लाभ होगा, तब शिष्य पीछा कहे कि तुम करोगे तो तुमे भी

॥ चतुर्थ-दशा ॥

सुयमे आउस तेण भगवया एव मक्खाय, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसपदा पण्णत्ता, कयरा खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसपदा पण्णत्ता ? इमा खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणि संपदा पण्णत्ता, तजहा—आयारसपया, सुयसपया, सरीर सपया, वयण सपया, वायणा सपया, मतिसपया, पयोग सपया, सगह परिणा णाम अट्ठमा ॥ १ ॥ से किं त आयार सपया ? आयार सपया, चउव्विहा

अहो आयुष्मन् जम्बू ! सुनो भगवंतने ऐसा कहा है यह निश्चय स्थविर भगवंतने गणि सम्प्रदाय के मालक आचार्य भगवंत की आठ प्रकार की सम्पदा [ऋद्धि] कही, शिष्य पूछता है स्थविर भगवंत आचार्य की आठ सम्पदा कौनसी कही है ? अहो शिष्य यह आगे कहेंगे वे आठ सम्पदा आचार्य की कही है उन के नाम—१ आचार सम्पदा २ श्रुत ज्ञान की सम्पदा, ३ शरीर रूपी सम्पदा, ४ वचन [बोलने] की सम्पदा, ४ वाचन [पढने] की सम्पदा, ६ मति बुद्धि की सम्पदा, ७ प्रयोग अपनी वस्तु का योग मिलाने की सम्पदा, और ८ संग्रह सम्पदा योग शिष्य सेवादि का संग्रह करे आगे इन का विस्तार करते हैं ॥ १ ॥ अहो भगवन् ! आचार सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! आचार सम्पदा के चार भेद कहे हैं उन के नाम—१ सतरा प्रकारके

अवोगाढगाए दुचरि तचरि सामत्र कहेकहेंए भवति आसायणा सेहस्स ॥ ३० ॥ सेहे राइणियस्स सिज्जासंथारगं पाएणसंघट्टित्ता हत्थेण अणुण्णवेत्ता गच्छति आसायणा सेहस्स ॥३१॥ सेहे राइणियस्स सिज्जासंथारए चिट्ठित्तावा निसीइत्तावा तुयट्टित्ता भवति आसायणा सेहस्स ॥ ३२ ॥ सेहेराइणियस्स उच्चासणंसिवा समासणंसिवा चिट्ठित्तावा निसिइत्तावा, तुयट्टित्तावा भवति आसायणा सेहस्स ॥ ३३ ॥ एताओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं तेत्तीसं आसायणाओ पण्णत्ताओ ॥ त्तिबेमि ॥ ततीया दसा सम्मत्ता ॥ ३ ॥ * * * * * *

गुरु का दिया हुवा व्याख्यान दूसरी वक्त तीसरी वक्त विस्तार से कहे [अपनी पंडिताई बतावे] तो शिष्य को अशातना लगे ॥ ३० ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु के बीछाने को पाट पाटले को पांव लग जावे तब हाथ कर खम बिछाने को बिना संभारे गुरु को बिना वंदना किये आगे जावे तो शिष्य को अशातना लगे ॥३१॥ शिष्य गुरु के बिछोने पर खडा रहे बैठे, शयन करे, लम्बा चौडा पसरे, तो अशातना लगे ॥ ३२ ॥ शिष्य रत्नाधिक गुरु से ऊंचे आसन या बराबर आसन से खडा रहे बैठे शयन करे तो शिष्यको अशातना लगे ॥ ३३ ॥ यों निश्चय स्थविर भगवतने उक्त तेतीस अशातना कही वैसी ही मैंने तेरे से कही ॥ इति दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र की तृतीय दशा संपूर्णम् ॥ ३ ॥ * *

से किंत सरीर सपया ? सरीर चउव्विहा पण्णत्ता तंजहा—आरोह परिणाह संपत्तेयावि भवति, अणोतप्प सरीरे, थिरसंघायणे, बहुपडिपुन्न इंदियावि भवति, सेत्त सरीर संपदा ॥ ३ ॥ ४ ॥ से किंत वयण संपदा ? वयण संपदा चउव्विह पण्णत्ता तंजहा—आदिज्जवयणेयावि भवति, महुरवयणेयावि भवति अणिसिय वयणेयावि

॥ १ ॥ ३ ॥ अहो भगवन् ! शरीर सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! शरीर सम्पदा के चार भेद कहे हैं, तद्यथा—१ आरोह शरीर का दीर्घ—(लम्बापना) और परिणाह चौड़ा पना, सुशोभित होवे, जैसे ही तजस्वी द्रव्य शरीर के धारक होवे, २ अलज्जित शरीर होवे अर्थात अंगोपांगकी हीनता अपलक्षणादि दोष जिस कर लज्जित होना पड़े, ऐसे शरीर रहित, पूर्ण अंगोपांगी उत्तम लक्षणोपेत शरीर होवे, ३ स्थिर संघयन, परिषह पुष्ट परिषह से चलित न होवे ऐसा स्थिर शरीरी होवे और ४ बहु प्रतिपूर्ण सामुद्रिक शास्त्रानुसार श्रोतादि पांचो इन्द्रिय के धारक होवे यह शरीर सम्पदा ॥ ३ ॥ ४ ॥ अहो भगवन् ! वचन सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! वचन सम्पदा के चार भेद कहे हैं, यथा—१ आदेय वचन वाले होवें अर्थात्-उनका कहा हुआ वचन सब लोग प्रमाण करें, २ मिष्ठ वचन अर्थात् कटुक वचन कहें तो भी अन्य को मिष्ट हो परिणमे ऐसी युक्ति से बोलने वाले तथा मंजुल गंभीर घोषी होवे ३ अनिश्रित वचना अर्थात् राग द्वेष पक्षपात कुशब्द रहित निरापेक्षा वचन बोलने वाले होवे और

गण्णत्ता तजहा—सजम धुवजोग जुत्तेयावि भवति, असगहियप्पा, अणियत्तवित्ती, वुड्डसीलेयावि भवति सेत आयार सपया ॥ १ ॥ २ ॥ से किं त सुय सपया ? सुयसपया चउव्विहा पण्णत्ता तजहा—बहुसुत्तेयावि भवति विचित्तसुत्तेयावि भवति, परिचित्त सुत्तयावि भवति, घोसविसुद्धि कारएयावि भवति, सेत्त सुयसपया ॥२॥३॥

संयम में धूव निश्चल योगवाले होवें अर्थात् प्रतिलेखनादि क्रिया सदैव उपयोग युक्त करे २ असग्रही अर्थात्-आत्मा में कषायादिका संग्रह नहीं करे तथा पदका श्रुतका अभिमान करे नहीं ३ अनीयतवृत्ति-आहार विहारादि कार्य में प्रतिबन्धता रहित रहे और ४ वृद्ध शील होवे अर्थात् उदारता क्षमा गंभीर्यतादि महा पुरुष के गुण युक्त तथा ग्लानादि की वैयावृत्य करनेवाले होवे, यह आचार सम्पदा ॥ १ ॥ २ ॥ अहो भगवन्! श्रुत सम्पदा किसे कहते हैं? अहो शिष्य! श्रुत सम्पदा के चार भेद कहे हैं उनके नाम १ जिस काल में जितने सूत्र होवें उन सिद्ध के पाठी होवें बहुश्रुती करे अर्थ समजावन,२ विचित्र प्रकार के सूत्र के जान होवें अर्थात् स्वसमय परसमय के जान होवे तथा एक अर्थ को विचित्र प्रकार कर समजाने वाले होवें ३ अपरोक्षित प्रथम बिना देखा बिना पढ़ा सूत्र भी आजावे तो धारकता से पठन कर उस को समजाने वाले होवे और ४ घोष-उदित अनुदात्तादि का उच्चार करते शुद्ध स्पष्ट उच्चोचार कर यह सूत्र सम्पदा

उग्गहमति सपदा छव्विहा पणण्ता तजहा—खिप्पउगिण्हति, बहुउगिण्हति, बहुविह उगिण्हति, धुव उगिण्हति, अनिस्सिय उगिण्हति, असदिद्धं उगिण्हति, सेत्त उग्गहमति ॥ ८ ॥ एव इहामतिवि ॥ एव अवाय मतिवि ॥ ९ ॥ से किं त धारणामति ? धारणामति छव्विहा पण्णत्ता तजहा—बहुधारेति, बहुविहं

॥ ७ ॥ अहो भगवन्! अवग्रह मति सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! अवग्रह मति सम्पदा के छ भेद कहे हैं तद्यथा—१ शब्दादि पांचों इन्द्रिय और मन के विषय को इन्द्रिय गत होते ही तत्काल ग्रहण कर लेवे परन्तु विलम्ब न लगावे, २ एक ही वक्त में बहुत शब्द रूप गंध रस स्पर्श और भाव को अलग २ ग्रहण कर लेवे ३ अनेक प्रकार के शब्द अनेक प्रकार के रूप इत्यादि छे ही का भिन्न २ प्रकार से ग्रहण कर लेवे, ४ ध्रुवता से ग्रहण करे अर्थात् ग्रहण किया शब्दादि विस्मरण न हो ऐसे निश्चय ग्रहण करे, ५ अनिश्रित ग्रहण करे अर्थात् किसी पुस्तकादि या धर्मादि की अपेक्षा से ग्रहण करने की आवश्यकता नहीं, परन्तु अपनी इन्द्रियों की शक्ति से ही उसे ग्रहण करे, और ६ असंदिग्ध अर्थात संदेह रहित ग्रहण करे ॥ ८ ॥ जिस प्रकार यह अवग्रह सामान्य प्रकार से ग्रहण करने के छ भेद कहे ऐसे ही ईहा विशेष प्रकार विचार करने की सम्पदा के भी छ भेद कहना और इस ही प्रकार अवाय निर्णय निश्चय करने की सम्पदा के भी छे भेद कहना ॥ ९ ॥ अहो भगवन्! धारण मति सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो

भवति, फुडवयणयावि भवति, सेत्त वयण संपया ॥ ४ ॥ ५ ॥ से किं त वयण संपया ? वायण संपया चउव्विहा पण्णत्ता तजहा—विजय उद्दिसति, विजयवाएति, परिनिव्वावियं वाएति, अत्थणिज्जवएयावि भवति ।सेत्त वायण संपदा॥५॥६॥से किं त माति संपदा ? मति संपदा चउव्विहा पन्नत्ता तंजहा—उग्गहमति संपदा, ईहामति संपदा, अवायमति संपदा, धारणामति संपदा ॥ ७ ॥ से किं त उग्गहमति संपदा ?

४ स्फूट खुले शब्द बोले जिस में बचा भी समझ जाय ऐसे संशय रहित वचनोच्चार करनेवाले होवे ॥ यह वचन सम्पदा ॥ ४ ॥ ५ ॥ अहो भगवन् ! वांचन सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! वाचन सम्पदा के चार भेद कहे हैं उन के नाम—१ ज्ञान ग्रहण करनेवाले पात्र (शिष्य) की योग्यता देख उस प्रमाने उस वाचना देवे, २ जो पढावे वहां पूर्ण विदित करे खुलासे के साथ वाचना देवे पूर्णता से निःसंदेह होवे तब आगे चलावे, ३ सर्व प्रकार के भेदानुभेद दर्शावे, और ४ अर्थ की पूर्वापर संगति सम्बन्ध का समालन-मिलाप कर वाचना देवे ॥ यह वाचना सम्पदा ॥ ५ ॥ ६ ॥ अहो भगवन् ! मति सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! मति सम्पदा के चार भेद कहे हैं तद्यथा—१ अवग्रह मति सम्पदा, २ ईहा मति सम्पदा, ३ अवाय मति सम्पदा, और ४ धारणा मति सम्पदा

वत्थुविहायवाद पउजित्ता भवति, ॥ सेत पउगमतिसपदा ॥ ७ ॥ ११ ॥ से किं त सगगह परिणा सपदा ? सगगह परिणा सपदा ? चउव्विहा पण्णत्ता तजहा—वहुजण पाउग्गताए वासावासासुखित्त पडिलेहित्ता भवति, वहुजण पाउयत्ताए पाडिहारिय सेज्जा सथारय उगिण्हित्ता भवति, कालेणकाल समाणइत्ता भवति, आहागुरू

वादी किस प्रकार का है मत्यक्ष है कि विक्षेपक है शांत स्वभावी है कि क्रोधी है इस से वाद धर्म करनेमें कुछ सार निकलेगा कि नहीं निकलेगा,योग्य क्षेत्र काल भाव स्वात्मा परात्मा का तथा उपकार अनुपकार का विचार कर वाद करे ॥ यह प्रयोग सम्पदा के भेद हुवे ॥७॥११॥अहो भगवन्! संग्रह परिणाम सम्पदा किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! संग्रह परिणाम सम्पदा के चार भेद कहे हैं, तद्यथा—बहुत साधुओं वर्षा ऋतु के चार महिने जिस स्थान में सुख से रहकर अपना काल व्यतीत कर सके तथा ग्लानी, रोगी तपस्वी नव दीक्षित आदि साधुओं को आहार पानी वस्त्र की साता उपजे ऐसे क्षेत्रों चौमासे के लिये जो होवे उन का प्रतिलेखी होवे,२बहुत साधुओं तथा गुरु ग्लानी रोगी तपस्वी के योग्य स्थानक पाट पाटले बिछोना पराालादि पाडिहारिय वस्तु को ग्रहण कर संग्रह कर रखे कि चतुर्मास में किसी को अडचन नहीं पडे ३ जिस २ काल में जो २ क्रिया अनुष्ठान करने का हो उस २ काल में वही करे जिस से अन्य साधुओं भी कृत्य पालन बने और ४ आचार्य पद, शास्त्र का अभिमान नहीं करते हुवे जो गुरु आदि

धारेति पुराणं धारेति दुद्धरं धारेति, अणिस्सियं धारेति असंदिद्धं धारेति॥ सेत्तं धारणा॥ सेत्तं मतिसंपदा॥६।१०॥ से किंतं पओग संपदा? पओगसंपदा चउव्विहा पण्णत्ता तंजहा आयविहायवाद पउंजित्ता भवति परिसविहायवाद पउंजित्ता भवति खेत्तविहायवाद पउंजित्ता भवति

शिष्य! धारणा मति सम्पदा के भी ६ भेद कहे हैं तद्यथा—१ एक ही वक्त में बहुत प्रकार के शब्दादि धारन कर रखे २ उन शब्दादि को भेद भाव सहित धारन कर रखे, ३ बहुत काल तक धारन कर रखे जब पूछे तब कहदे ४ दुर्धर कठिन शब्द अर्थ को धारन करना सामान्य जन को दुष्कर हो उस के सहज में धार रखे, ५ पुस्तकादि किसी की भी नेश्राय बिना स्वयं बुद्धि कर कंठस्थ धार रखे, और ६ असंदिग्ध संशय विभ्रम रहित सुखपना से धार रखे यह धारणा सम्पदा के ६ भेद और यह मति सम्पदा के चार मूल भेद तथा २४ उत्तर भेद हुये ॥ ५ ॥ १० ॥ अहो भगवन्! प्रयोग सम्पदा के कितने भेद कहे हैं? अहो शिष्य! प्रयोग सम्पदा के चार प्रकार कहे हैं—१ अपनी आत्मा की शक्ति देख कर परके साथ संवाद (चर्चा) करे, २ जो प्रति पक्षी है उस की शक्ति को बुद्धि को देखकर उस के साथ संवाद करे ३ क्षेत्र का देखे कि इस क्षेत्र में स्वपक्षी प्रबल है को प्रति पक्षी प्रबल है फिर संवाद करे और ४ वस्तु देखकर विचार प्रमुख प्रधान यहां के राजा मानवंत मुखियालोक किस धर्म के धारी हैं कदाग्रही हैं कि न्याय पक्षी हैं तथा प्रति

संजम सामायारियावि भवति, तव समायारीयावि भवति, गण समायारीयावि भवति, एगलविहार सामायारियावि भवति, सेत्त आयार विणए ॥ १४ ॥ से किं त सुय विणए ? सुयविणए चउव्विहे पण्णत्ते तजहा—सुतवाएति, अत्थवाएति, हियवाएति,

साधु की प्रतिमादि तप विधी युक्त आप करे अन्य के पास विधि युक्त करावे, ३ गण समाचारी-साधुओं के समुह में भिक्षा लाने योग्य के पास भिक्षा मगावे, वैयावच करने योग्य के पास वैयावच करावे, वांचना देने योग्य के पास वांचना दिलावे वगैरे यथा उचित जिस से जो काम हो सके वह उस के पास करावे और यथा उचित आदर भी करे, और ४ एकलविहार समाचारी-दृढ मधयण, प्रबल वैराग्य, सूत्र निधी, समभावी, परिषह से अचल इत्यादि गुन संपन्न होवे वह अकेला विचरना इच्छता होतो उस अकेला विहार करावे कदाचित् स्वइ एकल विहारी होना चाहावे तो योग्य साधु को अपने स्थान स्थापन कर आप भी एकलविहारी बने यह आचार विनय के चार भेद हुवे ॥ १४ ॥ अहो भगवन् ! श्रुतविनय किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! श्रुत विनय के चार भेद कहे तद्यथा—१ सूत्र आप पढे अन्य को पढावे, २ अर्थ आप पढे अन्य को पढावे, ३ इस लोक परलोक तथा उभय लोक के हित का कार्य आप कर अन्य के पास करावे और ४ शिष्य की योग्यता देखकर ज्ञान में परगामी

सपुहुवा भवति ॥ सेत्तं संगह परिण्णा संपया ॥ ८ ॥ १२ ॥ ॥ आयरियस्स अंतेवासी इमाए चउव्विहाए विणयपडिवत्तीए विणइत्ता भवति, निरणत्तं गच्छति तंजहा—आयार विणएणं सुय विणएणं, विक्खेवणा विणएणं, दोस निग्घायणा विणएणं ॥ १३ ॥ से किं तं आयार विणए, ? आयार विणए चउव्विहे पण्णत्ते तंजहा—

वृद्ध साधुओं हैं उनका यथा उचित विनय करे ॥ यह संग्रह सम्पदा हुई ॥८॥१२॥ इति ८ सम्पदा॥ आचार्य के समीप रहनेवाले जो शिष्य हैं उन आगे कहेंगे वह चार प्रकार की विनय की प्रवृत्ति का सावधान सिखाके, उन में से शिक्षित होवे उस शिष्य की योग्यता को पहचान कर आचार्यादि पद पर आचार्य स्थापन करे वह चार प्रकार के विनय कहते हैं—१ आचार का विनय अर्थात् साधुओं का आचार जो चार भेद है वह बतावे, २ श्रुतविनय-शास्त्राभ्यास करने का ज्ञान ग्रहण करने का विनय बतावे ३ अन्य के हृदय में त्याग वैराग्य धर्म प्रेम विनय का उद्भव होवे इस प्रकार उपदेशादि की पद्धती सिखावे, और ४ जिन २ कारणोंकर स्वात्मा या परात्मा के दोषों का निर्घात कर सके वह उपाय बतावे ॥ १३ ॥ अहो भगवन् ! आचार विनय किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! आचार विनय के चार प्रकार कहे हैं तद्यथा—१ संयम समाचारी बतावे अर्थात् यत्ना से गमनागमन करना प्रमार्जन प्रति लेखन एषणा गवेषणादि क्रिया करना इत्यादि विपरीत आचरण होवे शिष्यको बत ये, २ तप समाचारी

विणए चउव्विहे पण्णत्ते तंजहा कुद्धस्स कोह विणएत्ता भवति, दुट्ठस्स दोस णिगिण्हित्ता भवति कंखियस्स कंख छिदित्ता भवति, आयासुप्पणिहेयावि भवति॥ से त दोस निग्घायणा विणए ॥१७॥ तस्सेवं गुण जातीयस्स अंतेवासिस्स इमा चउव्विहा विणयपडिवत्ती भवति तंजहा उवगरण, उप्पायणया, साहिल्लया, वण्णसंजलता, भार पच्चोरुहणता ॥१८॥ से

विनय किसे कहते हैं? अहो शिष्य! दोष निर्घात विनय के चार भेद कहे हैं तद्यथा—१ जो कोई साधु किसी कारण से क्रोधित बना हो तो उसे मिष्ट वचन कर प्रतीतकारी वचन कर सतोषे २ जो कोई दुष्ट प्रकृत करनेवाला हो उसे व्रतभंग से दुर्गति आदि के दुःख बताकर समझाकर मायभिन्न दकर मद्द करे ३ स्वस्वमति अन्य दर्शनों के ढंग धतिंग देखकर उस मत का कांक्षा अभिलाषा बना हो तो उसे जैन सिद्धांत का गुण समझ कर उस की अन्य मत की कांक्षा का छेदन करे, और ४ स्वयं की आत्म कदाचित् मोह मद के उदय से विपरणति में परिणमे तो मोह मद वृद्धि का कर्तव्य का परित्याग कर अपनी आत्मा को सुमति में स्थापन कर यह दोष निर्घात विनय ॥ ४ ॥ १७॥ यह जो आठ सम्पदा के ३२ भेद, और चार प्रकार के विनय यों ३६ गुण सपन्न आचार्य के जो अंतेवासी (शिष्य) हैं उन को चार प्रकार की विनय की प्रतिपत्ति अंगीकार करना उन के नाम—१ उपकरणों की उत्पत्ति करे, २ यथोचित सहायता करे, ३ वर्ण संज्वल सद्गुण

निसस वाएति,सत्त सुयविणए ॥ १५ ॥ से किं त विक्खेवणा विणए ? विक्खेवणा विणए चउव्विहे पण्णत्ते तंजहा—अदिट्ठ धाएति, दिट्ठ पुव्वगत्ताए विणएत्ता भवति, दिट्ठपुव्वग साहम्मियत्ताए विणएत्ता भवति, दिट्ठपुव्वग सहेतु धम्माओ धम्मेट्ठावइत्ता भवति,तस्सेव धम्मस्स हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए अणुगामियताए अब्भुट्ठत्ता भवति, सेत्त विक्खेवणा विणए ॥ १६ ॥ से किं तं दोस निग्घायणा विणय? दोसनिग्घायणा

बनावे यह श्रुत विनय हुवा ॥२॥१५॥ अहो भगवन् ! विक्षेपना विनय किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! विक्षेपना विनय के चार भेद कहे हैं, यथा १ अदृष्टि अर्थात् मिथ्यात्वी जीवों जो हैं उन को अपने दृष्टिगत हुवा सम्यक् प्रकार प्राप्त किया धर्म का स्वरूप प्रतिबोध कर पूर्वदृष्टिवत-सम्यक् दृष्टि बनावे, पूर्वदृष्टिवत सम्यक् दृष्टि जीव हैं २ उन को अपना स्वीकार किया हुवा यह महाव्रत रूप धर्म बता कर स्वधर्मि बनावे संयम धर्म में स्थापन करे ३ जो धर्मच्युत हुये अथवा पड़वाइ बने अथवा पड़ने जैसे हैं उन को ज्ञानादि की यथा उचित सहायता कर पुनः स्वधर्म स्थापन करे दृढ बनावे और ४ जिन भाषित धर्म सब जीवों के हित का सुख का क्षेमा का निस्तारकल्याण का कर्ता अनुगामिक परभव में भी साथ आवे ऐसा है मैं आप सावधान होवे और अन्य अनेक जीवों का सावधान बन कर धर्म की वृद्धि करे ॥ यह विक्षेपना विनय हुवा ॥ ३ ॥ १६ ॥ अहो भगवन् ! दोष निर्घात

संजहा अणुलोमवइ सहितेयावि भवति, अणुलोम काय किरियत्ता, पडिरूव काय सफासणया, सव्वत्थेसु अपडिलोमया, सेतं साहिल्लया ॥ २० ॥ से किं तं वण्णसजलणता ? वण्णसजलणता चउव्विहा पण्णत्ता तजहा आहातच्चाण वण्णवाइ भवति, अवण्णवाइ पडिहणित्ता भवति, वण्णवाइ अणुबूहित्ता भवति, आयावुड्ढसेवया भवति

चार भेद कहे हैं तद्यथा—१ अनुलोम वचनी होवे, अर्थात् गुरु शिष्य को किसी प्रकार का वचनादेश करे तब शिष्य कहे कि तहत्त वचन आप कहते हो वैसा ही है यों गुरु के वचन के बहुत मान पूर्वक श्रद्धान करे,२ अनुलोम कर्या करे अर्थात् गुरु आदि जो कार्य बतावे वह कार्य उनको सतोष प्राप्त हो वैसा भक्ती काया कर निपजावे ३ प्रतिरूप कार्य स्पर्शक अर्थात् प्रतिरूप कार्य जिस को जितना खपे, उतना उन का कार्य करे योग्यता प्रमाने सब की सेवा भक्ति करे और ४ सर्व अथ में अप्रतिलोमी होवे अर्थात् सब को अच्छा लगे ऐसी प्रवृत्ति से प्रवर्ते, सर्व कार्य संयमी के उचित करे किसी संयम के वा संयमी के काम में प्रमाद नहीं करे ॥ यह सहायता विनय॥ २ ॥ २० ॥ अहो भगवन् ! वर्ण संज्वलन किसे कहते हैं ? अहो शिष्य वर्ण संज्वलन के चार भेद कहे हैं तद्यथा—१ यथा तथ्य वर्णन करे अर्थात् जो आचार्यादि हैं, उन की उत्तम जाति कुल ज्ञान तथा गंभीर्यतादि गुण हो उन का पूर्णपने प्रकाश करे छिपा नहीं रेस ही अत्योक्ति भी लगावे नहीं २ अवर्णवाद का हरण करनेवाला होवे अर्थात जो कोई

किं तं उवगरण उप्पायणया ? उवगरण उप्पायणया चउव्विहा पण्णत्ता तंजहा अणुप्पन्नाइं उवगरणाइं उप्पाइत्ता भवति, पोराणाइं उवगरणाइं सारक्खित्ता भवति, संगोवित्ता भवति, परित्त जाणित्ता पच्चुद्धरित्ता भवति, आहाविहिं संभाइत्ता भवति, से तं उवगरण उप्पायणया ॥ १९ ॥ से किं तं साहल्लेया ? साहल्लेया चउव्विहा पण्णत्ता

गुणानुवाद कीर्ति करे और ४ गच्छ का भार उस पर आरोपन करे अर्थात् गच्छ नायक आचार्य बनावे ॥ १८ ॥ अहो भगवन् ! उपगरण उत्पादन किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! उपगरण उत्पादन के चार भेद कहे तद्यथा—१ जो यथा उचित खपते हुवे वस्त्र पात्रादि प्रथम प्राप्ती नहीं हुई हो उन उपगरणों की एषणा गवेषणा कर शुद्ध प्राप्त करे क्यों कि आचार्य तो वाचना धर्मोपदेशादि कार्य में रहते हैं इस लिए अप्राप्त उपकरण को प्राप्त करना यह शिष्य का ही कर्तव्य है, २ जो प्रथम के याचना किये हुवे उपकरण है, यद्यपि वे जीर्ण पर्याय को प्राप्त हुवे हैं तथापि वे चले वहां तक प्रयत्न पूर्वक रक्षण कर रखते योग्य काल में उन को भोगवे, ३ जो अल्प उपकरण धारक कोई साधु देशान्तर से आया हो या अपने नजीक का हो वह अल्प उपाधी कर सिदाता हो आर्त करता हो तो उस यथाउचित उपाधि देकर सहाय करे. और ४ यथाविधि उपकरण कर तथा शिष्यादि परिवार का संभालनेवाला होवे, यह उपगरण उत्पादन विनय ॥३॥१९॥ अहो भगवन् ! सहायता किसे कहते हैं ? अहो शिष्य ! सहायता के

उसमणताए सयातामिव अब्भुट्ठित्ता भवति, कहच साहम्मिया अप्पसद्दा अप्पझंझा, अप्पकलहा अप्पकसाया, अप्पतुमंतुमा संजमबहुला, संवरबहुला, समाहियबहुला, अपमत्ता संजमेणं तवसा अप्पाणं भावेमाणाणं एवं वण्णाविहरेज्जा, से त्त भारपच्चोरुहणता ॥ २२ ॥ एयाओ खलु थेरेहिं भगवंतेहिं अट्ठविहा गणिसंपदा पण्णत्ता त्तिबेमि ॥

चउत्थी दसा सम्मत्ता ॥ ४ ॥ ● ●

जैसे उत्तम [illegible] पूर्व [illegible] जो आप उसे अनिश्रितपने अर्थात् किसी का भी पक्ष धारन नहीं करता शिष्य [illegible] रहित यथायथ भाव सम्यक् प्रकार कर्तव्य व्यवहार श्रुतादि का [illegible] उस भीतर क्लेश के उपशमावे, परस्पर समापना कर के इस प्रकार व्यवस्था करतुत स्थापन करे [illegible] आगे पीछे सदैव सावंत भाव प्रवर्ते ऐसे सम्य के कार्य में उद्यमवंत होवे [illegible] इस प्रकार करे ? सो कि शब्दरहित प्रमाद रहित होवे वचन के झगड़ा रहित होवे क्लेश रहित होवे तुकार रहित होवे इन गुणों कर सहित संप्रदाय धन और संयम की वृद्धि होवे संवर की वृद्धि होवे अप्रमत्त होवे [illegible] समाधि के साधु सतरह प्रकार संयम बारह प्रकार तप करके अपनी आत्मा को भावते हुवे विचरे इन गुणों की वृद्धि होवे ऐसा करे यह भार प्रत्यारोहन विनय हुआ ॥ २२ ॥ यह स्थविर भगवंतने आठ प्रकार की गणी सम्पदा की सम्पदा कही अहो जम्बू ! मैंने श्रमण महावीर स्वामी से सुना वैसी कहा ॥ इति दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र की चउथी दशा समाप्तम् ॥ ४ ॥ ✱

आयावुज्जु सेवया भवति, सेतं वण्णसंजलणता ॥२१॥ से किं तं भार पञ्चोरुहणता? भारपञ्चोरुहणता चउव्विहा पण्णत्ता तंजहा असंगहिय परजण संगहिता भवति, सेहं आयारगोयर गाहित्ता भवति साहम्मियस्स गिलायमाणस्स अहाथाम वेयावच्च अब्भुट्ठित्ता भवति, साहम्मियाण अधिकरणंसि उप्पण्णंसि तत्थ अणिस्सितोवस्सित उवसिता अप्पक्खग्गाही ॥ मज्झत्थभाव भूते समविग्गहरमाणे तस्स अधिकरणस्स खामणाति

मदुत कर्म और आचार्य महाराज के अवर्णवाद बोल अपकीर्ति कर तो उसे युक्ति कर समझावे अवर्ण वाद की निवृत्ति करे, ३ जो आचार्य महाराज का गुणानुवाद करे तो अच्छा माने, उसे सन्तोष उपजावे, उस की अनुमोदना करे और ४ आचार्य महाराज का इंगित आकार का ज्ञान हो आप से कार्य करे उसे सेवा भक्ति कर यह संज्वलन विनय हुवा ॥२१॥ अहो भगवन्! भारपच्चोरुहणता किसे कहते हैं? अहो शिष्य! भारपच्चोरुहणता के चार भेद कहे हैं तद्यथा—१ असंग्रहित जन का संग्रह करे अर्थात् जो किसी कारण से घबरा कर कोई साधु स्वगच्छ त्याग कर निकल जाता हो उसे वचन से उपाधी से या ज्ञानादि कर संतोष कर गण में स्थापन करे, २ शिष्यादि नव श्रमण मंडल को आचार—श्रुत ज्ञानादि का आचार तथा गोचार भिक्षादि का प्रवर्तन इन में कुशल करे हित शिक्षा देवे ३ अपना स्वधर्मी साधु रोग वृद्धत्वादि कारण कर ग्लानी पाता होवे उन को औपधोपचार आहार पानी लेपनादि वैयावच करने में तथा विनय आदर सत्कार करने में सावधान होवे और ४ अपने स्वधर्मिक साधुओं में परस्पर अधिकरण

सरण भाणियव्व जाव पुढविसिलापट्टए, सामीसमोसढे परिसा निग्गया, धम्मोकहिओ परिसा पडिगया ॥ २ ॥अज्जो ति समणे भगवं महावीरे समणाण समणीणं निग्गथा निग्गथीओय आमंतिचा एवं वयासी—इह खलु अज्जो ! निग्गंथाणवा, निग्गथीणवा इरिया समियाणं, भासासमियाण, एसणा समियाण, आयाण भंड निक्खेवणा समियाण, उच्चार पासवण खेलजल्ल सिंघाण परिट्ठावणिय समियाण, मणसमियाण,

यहां जितशत्रु नामक राजा राज्य करता था, उस की धारणी नाम की राणी थी यावत् समोसरण पर्यंत सब वर्णन उववाइ शास्त्रानुसार कहना बगीचे के मध्य में स्याम वर्ण का पृथ्वी सिला पटारा भद्रासिंहासन के संस्थान से संस्थित अनेक चित्रों से चित्रित चित्त को प्रसन्न करता देखने योग्य अभिरूप प्रतिरूप था ॥ यहां श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी चौदह हजार साधु छत्तीस हजार आर्जिका के परिवार से परिवरे हुए पधारे, द्वादश जाति की परिषदा भराइ, भगवंतने धर्म कथा सुनाइ, परिषदा पीछी गई ॥ २ ॥ अहो आर्यों ! इति सम्बोधन कर श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामीने साधुसाध्वी निर्ग्रंथ निर्ग्रंथनी का आमंत्रण दिया बोलाये और यों कहने लगे या निश्चय, अहो आर्यों ! निर्ग्रंथ (साधु) अथवा निर्ग्रंथनी (साध्वी) ईर्या समिति कर समिता, भाषा समिति कर समिता, एषणा समिति कर समिता, आदान [ग्रहण करना] भंड (भंडोपकरण) निक्षपना (रखना) समिति कर

॥ पंचम–दशा ॥

नमो सुयदेवयाए भगवतीए ॥ सुयमे आउसं तेणं भगवया एव मक्खायं, इहखलु थेरेहिं भगवंतेहिं दस चित्त समाहिठाणा पण्णत्ताओ ॥ कयरे खलुते थेरेहिं भगवंतेहिं दसचित्त समाहिट्ठाणा पण्णत्ताओ, तंजहा–तेणं कालेणं तेणं समएणं वाणियगामे नगरे होत्था एत्थणं णगर वण्णओ भाणियव्वो ॥ १ ॥ तस्सणं वाणियगाम नगरस्स बहिया उत्तरपुरत्थिमे दिसिभाए दूतिपलास नाम चेइए होत्था, चेइय वण्णओ भाणियव्वो ॥ २ ॥ जिय सत्तुराया, तस्स धारणी देवी जाव सव्व समो-

नमस्कार श्रुति देवी भगवती भगवत की वाणी को ॥ अहो आयुष्मन् जम्बू! भगवंतने ऐसा कहा सो मैंने सुना है, यह निश्चय स्थविर भगवंतने दश चित्त की समाधी के स्थानक कहे हैं ॥ शिष्य पूछता है कि निश्चय स्थविर भगवंतने दश चित्त की समाधी के स्थानक कौनसे कहे हैं? गुरु कहते हैं कि यह आगे कहेंगे वे स्थविर भगवंतने दश चित्त की समाधि के स्थानक कहे हैं उन के नाम–उस काल उस समय में वाणिज ग्राम नाम का नगर था जिसका वर्णन उववाई सूत्र में चंपा नगरी का किया है वैसा कहना ॥१॥ उस वाणिज ग्राम नगर के बाहिर उत्तर और पूर्व दिशा के बीच ईशान कोन में दुतिपलास नाम का बगीचा था जिस का भी वर्णन उववाई आज्ञानुसार पूर्णभद्र के बगीचे का किया है वैसा कहना ॥ २ ॥

सव्वधम्म जाणित्तए ॥ १ ॥ सन्निणाणे वासे असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा
अहं सरामि ॥ २ ॥ सुमिण दंसिणे वासे असमुप्पण्णपुव्वे समुप्पज्जेजा अहातच्च
सुमिण पासित्तए जाइसरणेणवा से असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा अप्पणो पोराणिय
जाइसमरित्तए ॥ ३ ॥ देव दंसणेवा से असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा
दिव्व देविड्ढि दिव्वं देवजुइ दिव्व देवाणुभाव पासित्तए ॥ ४ ॥
ओहिणाणे वासे असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा, ओहिणालोयं जाणित्तए

अरूपी है इत्यादि चिन्तवन में निमग्न हुवा जीव स्वसमय परसमय का ज्ञान होवे पर समय पूर्वा पर विरुद्ध माने और स्वसमय (जैन मत) अविरुद्ध मानने से धर्म में चित्त की स्थिरता होवे ॥ १ ॥ संज्ञी जीवों को जो उत्पन्न होवे वह संज्ञी ज्ञान अर्थात् जाति स्मरण ज्ञान जो प्रथम उत्पन्न नहीं हुवा हो वैसा उत्पन्न होवे जिस से अपना पूर्वभव का स्वरूप जान कि मैं अमुक स्थानकी था यहां सुख दुःखादि पाया हूं, इस से चित्त की समाधी होवे ॥ २ ॥ जिस प्रकार भगवती सूत्र में भगवंत श्री महावीर स्वामी के दश स्वप्न कहे वैसे तथा मुक्ति प्राप्त के योग्य स्वप्न कहे वैसे स्वप्न जो प्रथम प्राप्त नहीं हुवे हों ऐसे स्वप्न प्राप्त होवे उस का यथातथ्य फल जानकर चित्त में समाधी होवे ॥ ३ ॥ देवता के दर्शन पहिले न हुवे होवे हों वैसे दिव्य प्रधान देवता सम्बन्धी ऋद्धि दिव्य प्रधान देवता सम्बन्धी द्युति कांती दिव्य प्रधान देवता सम्बन्धी भाव देखकर चित्त में समाधी होवे ॥ ४ ॥ अवधी ज्ञान जो प्रथम नहीं उत्पन्न हुवा हो वह समुत्पन्न होवे जिस से जघन्य अंगुल का असंख्यातवा भाग उत्कृष्ट असंख्यातद्वीप समुद्र में रहे रूपी पदार्थों को

वयसमियाणं, कायसमियाणं, मणगुत्तियाणं, वयगुत्तियाणं, कायगुत्तियाणं, गुत्तिंदियाणं गुत्तबंभयारीणं, आयट्ठीणं आयहियाणं, आयजोईणं, आयपरिक्कमाणं पक्खिए पोसहिए सुसमाहिपत्ताणं झियायमाणाणं इमाइं दस चित्त समाहिट्ठाणाइं असमुप्पण्णपुव्वाइं समुप्पज्जित्था तंजहा—धम्मचिंतावासे असमुप्पण्ण पुव्वाइं समुप्पज्जेज्जा

अधिता उच्चार (बडीनीत) पासवणा (लघुनीत) खेल (खंखार) जल (पसीना) सिंघाण (श्लेष्म) इन को परिठावणिया समिति कर समिता, मन समिति समिता, वचन समिति समिता, काया समिति समिता, मन गुप्ति गुप्ता वचन गुप्ति गुप्ता और काया गुप्ति गुप्ता गुप्तेन्द्रिय गुप्त ब्रह्मचारी आत्मार्थी तथा हितरक्षक आत्मा का हित के करता आत्मयोगी आत्म पराक्रमी, पक्षप के पालक, तथा पौषधादि व्रत आचरण करता * समाधिवंत धर्म ध्यान शुक्ल ध्यान के ध्याता, यह आगे कहेंगे सो दश चित्त को समाधी उत्पन्न करनेवाले स्थानक पहिले अनुत्पन्न नहीं हुवे वे समुत्पन्न होवे उन के नाम—१ धर्म का चिन्तवन पूर्व अनुत्पन्न न हुवा था वह समुत्पन्न होवे अर्थात् धर्म कहीये जीव और अजीव द्रव्य का स्वभाव जिन का निर्णय होने जैसे दोनों का स्वभाव है सो नित्य है किंवा अनित्य है रूपी है किंवा

---

* यहां पक्खिय पोसह शब्द से श्रावक को भी ग्रहण करते हैं अर्थात् चारों ही संघ को चित्त की समाधी के इच्छा करता ही समाधी के स्थानक होते हैं

उयचित्त समादाए, प्पञ्झाण पुव्वे समुप्पज्जेजा॥ धम्मेट्ठिउ अविमणो, निव्वाण मभिगच्छाति ॥ १ ॥ इमचित्त समादाए, भुज्जोलोयमि जायाति ॥ अप्पणो उत्तमट्ठाण, सण्णीणाणेण जाणति ॥ २ ॥ अहातच्चतु सुविण, खिप्पपासति सवुडे ॥ सव्वंवा उह

सप करे जिस से चित्त में समाधी होवे ॥ १० ॥ यह दश बोल चित्त समाधी के कहे इनका भावार्थ किस प्रकार होती है सो कहते हैं ॥ धर्म का चिन्तवन से होवे सो कहते हैं—क्रोधादि कषाय कर मलिन हुआ हृदय जो था उसे शांत दांतादि निर्मल मल संपाकर पवित्र बनावे सम्यक्त्व का आचरन करे अर्थात् जिन वचन व गुरु वचन पर दृढ श्रद्धा प्रतीत धारन करे, आर्त रौद्र ध्यान का त्याग कर धर्मध्यान शुक्लध्यानका ध्याता बने, शत्रु मित्र पर समदृष्टी रखे अच्छी बुरी वस्तु को रागद्वेष न करे, पुद्गलों में घृणा व लीनता रहित होवे, एकान्त पर्यार्थि बने, जो कुच्छ करे सो सब परमार्थ ही करे रोगोदय में परिषहोदय में उपसर्ग में विमन होन नहीं बने इस प्रकार जो ध्यानी जीव होवे, वह इस भव में चित्त समाधी रूप परम सुख को भुक्तकर आगे निर्वाण मोक्ष प्राप्त करते हैं ॥ १ ॥ जाति स्मरण ज्ञान किस को होवे सो कहते हैं—जो पूर्व जन्म का उत्पन्न होने का उत्तम स्थान जिस का किसी के कहने से व किसी वस्तु के देखने से जानकर चित्त की समाधी पूर्वक उस का विचार करता हुआ जाति स्मरण ज्ञान कर पुनः उस को जाने पूर्व कृत शुभाशुभ कर्तव्य का अनुभव होने से समाधी होवे ॥ २ ॥ उत्तम स्वप्न किस को प्राप्त होवे सो कहते हैं

॥ ५ ॥ ओहि दंसणे वासे असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा ओहिणा लोय पासित्तए
॥ ६ ॥ मण पज्जवणाणवासे असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा अड्ढाइज्जेसु दीव समुद्देसु
सण्णीणंपंचिंदियाण पज्जत्तगाण मणोगएभावे जाणित्तए ॥ ७ ॥ केवलनाणेवासे
असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा केवल कप्प लोयालोय जाणित्तए ॥८॥ केवल दंसणेवासे
असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा केवल लोयालोय पासित्तए ॥ ९ ॥ केवल मरणेवासे
असमुप्पण्ण पुव्वे समुप्पज्जेजा सव्वदुक्खप्पहीणाए ॥ १० ॥ (गाहा)

जाने जिस से चित्त में समाधी होवे ॥ ५ ॥ अवधि दर्शन पहिले उत्पन्न नहीं हुवा वह उत्पन्न होवे उस से लोक के रूपी पदार्थ को देखे जिस से चित्त में समाधी होवे ॥ ६ ॥ मनः पर्यव ज्ञान जो प्रथम प्राप्त न हुवा हो वह प्राप्त होवे जिस से अढाइ द्वीप दो समुद्र के अंदर के सन्नी पंचेन्द्रिय पर्याप्त के मनोगत भाव जाने जिस से चित्त की समाधी होवे ॥ ७ ॥ केवल ज्ञान प्रथम कदापि उत्पन्न नहीं हुवा वह उत्पन्न होवे जिस से संपूर्ण लोकालोक के द्रव्य क्षेत्र काल भाव को जाने, जिस से चित्त में समाधी होवे ॥ ८ ॥ केवल दर्शन जो प्रथम समुत्पन्न न हुवा हो वह समुत्पन्न होवे जिस से सम्पूर्ण लोकालोक को देखे, जिस से चित्त में समाधी होवे ॥ ९ ॥ और केवल मृत्यु केवल ज्ञान युक्त मृत्यु होवे सो अथवा फिर नहीं मरना पडे ऐसा पंडित मरण सो केवल मरण प्रथम नहीं मरा ऐसे मरण से मरता हुवा सर्व जन्मादि दुःख का

सरत, दंसणं परिसुज्झति ॥ उड्ढं अहेय तिरियच, सव्वं समणुपस्सति ॥ ५ ॥
सुसमाहितलेसस्स, अवितक्कस्स भिक्खुणो ॥ सव्वओ विप्पमुक्कस्स, आया जाणाति

को पाखित नहीं करे प्राणान्त करे ऐसे रौद्र भय को भी समभाव से सहन करे, शुद्ध निर्मल दाप रहित संयम का पालक, वा दुष्कर कठिन तप का करने वाला हो, इत्यादि गुणसंपन्न को अवधि ज्ञान की प्राप्ति होती है ॥ ५ ॥ अवधि दर्शन किन को होवे सो कहते हैं और उक्त गुन संपन्न तपश्चर्या कर घात स्वभावी बना जिसने जिनके कृष्ण नील कापोत इन तीनों अशुभ लेश्या सो नहीं परिणवे परंतु वे जो पद्मशुक्ल इन तीनों लेश्या में परिणवने वाले संयमी को उक्त अवधी ज्ञान के साथ अवधी दर्शन की भी प्राप्ति होती है, जिन का वे उर्ध्वलोक ज्योतिषी वैमानिकादि, अधोलोक नरकादि और तिरिक लोक असंख्यात असंख्यात द्वीप समुद्रादि सब को सम्यक् प्रकार संदेह रहित प्रगट जानने देखन लग जाता है ॥ ६ ॥ मन पर्यव ज्ञान किसे होवे सो कहते हैं जो साधु समाधि भाव युक्त हो, वैसे ही शुक्ल लेश्या की परिणति युक्त हो, तर्क भाव कर रहित हो अर्थात् जिन वचनों में निशंकित होने से तर्कादि का अभाव हुवा हो, निर्दोष भिक्षा से उपजीविका व कर्मों को शोषित करने वाला, बाह्य चौदे प्रकार का (१ नो कषाय, ४ कषाय, १ मिथ्यात्व) अभ्यंतर परिग्रह और ९ प्रकार का (क्षेत्र, घर, चांदी सुवर्ण, धन, धान्य, द्विपद, चतुष्पद, कुविधान) बाह्य परिग्रह का सर्वथा प्रकारे त्यागी अथवा सर्व संग रहित

तराति, दुक्खर्द यवि मुच्चति ॥ ३ ॥ पताइ मयमाणस्स, विवित्त सयणासणं ॥
अप्पाहारस्स दंतस्स, देवा दमति ताइणो ॥ ४ ॥ सव्व काम विरतस्स, खमतो
भेयभेरवं ॥ तओ से नानाणि भवति, सजयाण तवसिणो ॥ ५ ॥ तवसा अवहट्टु-

जो साधु संवृतात्मा–संवरवंत होवे यथातथ्य स्वप्न जो भगवती सूत्र में मुक्ति गमन के सोलह स्वप्न कहे हैं उनमें कहे तथा महावीर स्वामी ने दश स्वप्न देखे ऐसा कोई स्वप्न शीघ्रतासे देखे वह संवृती अनगार सर्व प्रकार से भवभ्रमण रूप संसार समुद्र को तिरे जन्म मरणादि सब दुःख से मुक्त होवे ॥ ३ ॥ देव दर्शन किस को होते हैं सो कहते हैं–जो साधु प्राप्त हुवे आहार वस्त्रादि का तथा अन्त प्रान्त आहार वस्त्रादि को समभाव ग्रहन वाले अर्थात् ग्रहण करने वाले व समभाव से भोगवने वाले, जिसे स्त्री पशु व नपुंसक जिस स्थान में रहते हों वहां नहीं रहने वाले ब्रह्मचर्य की गुप्ती के लिये अल्प आहार करने वाले, अल्प उपाधी के रखने वाले व दमितेन्द्री अर्थात् इन्द्रियों को विषय पंचमें जाने रोकनेवाले और पृथव्यादि छ ही काय जीवों के रक्षक इत्यादि जो श्रेष्ठ गुन के धारक होते हैं उन को देव दर्शन होते हैं ॥ ४ ॥ अब अवधि ज्ञान किस को होता है वह कहते हैं जो साधु सर्व प्रकार की कामाशा कर विरक्त हो जिस के मन में किसी भी वस्तु प्राप्ती की इच्छा न हो, या काम शब्द से शब्द और रूप के विषय से विरक्त हो, देवता मनुष्य तिर्यंच संबंधी भयंकर परिषह प्राप्त हुवे परिणामों

हयाए, हम्मइ तले ॥ एव कम्माणि हम्मनि, मोहणिज्जे खय गए ॥ ११ ॥ से णायति भिणिहते, जहा सेणा पणस्सइ, एव कम्मपणास्सति, मोहणिज्जे खय गए ॥ १२ ॥ धूमहीणो जहा अग्गी, खीयति से निरधण ॥ एव कम्माणि खीयंते, मोहणिज्जे खयगए ॥ १३ ॥ सुक्कमूले जहा रुक्खे, सिच्चमाणेण रोहनि ॥ एव कम्माणरोहति, मोहणिज्जे खयगए ॥ १४ ॥ जहा दद्धाण बीयाणं, ण जायति पुण फुरा ॥ कम्मबीएसु, दड्ढेसु नजायति भवंकुरा ॥१५॥ विचा ओरालिय बोदी नाम

होता है इस ही मकार मोहनीय कर्म का नाश होने से सर्व कर्मों का नाश होता है ॥ ११ ॥ जैसे सेनापिपति का नाश होने से सेना इधर उधर भग जाती है इस ही मकार मोहनीय कर्म का नाश होने से बाकी के सब कर्म भग जाते हैं ॥ १२ ॥ धूम्र रहित अग्नि ईंधन के अभाव से क्षय होती है त्यों मोहनीय कर्म के अभाव से सब कर्म का क्षय होता है ॥ १३ ॥ जिस मकार जिस वृक्ष का मूल सूकगया हो वह पानी के सींचने से भी पुनः पल्लवित [सजीवन] नहीं होता है, ऐसे मोहनीय कर्म के क्षय होने से फिर कोई भी कर्म अंकुर नहीं मकट करते हैं ॥ १४ ॥ जिस मकार भूंजकर दग्ध किया हुआ बीज [धान्य] पृथ्वी पानी के संयोग से भी पुनरपि अंकुरोत्पत्ति नहीं कर सकता है इस ही मकार कर्म रूप बीज दग्ध होने से फिर भी भवांकुर की उत्पत्ति नहीं होती है ॥ १५ ॥ इस मकार के केवल ज्ञानी भगवंत आयुष्य

पवरं ॥ ७ ॥ जयासेनाणावरण, सव्व होति सव्वगय ॥ तआ_लोगमलोगय,
जिणाजाणाति केवली ॥ ८ ॥ जया से दंसणावरण, सव्व होति खयं गयं ॥ तओ
लाग मलोगय, जिणो पासति केवली ॥ ९ ॥ पडिमाए विसुद्धाए, मोहणिज्जे खयं
गए ॥ असेसं लोगमलोगं, पासति सुसमाहिए ॥ १० ॥ जहाय मथ्थय सुईय,

इत्यादि गुन कर युक्त होता है वह आत्मपर्यव [मनोगत भाव] जानने वाला मन पर्व ज्ञान का धारक होता है ॥ ७ ॥ केवल ज्ञान की प्राप्ति कैसे हो सो कहते हैं—जिन साधु का ज्ञानावरणिय कर्म सर्वथा क्षय होगया व केवल ज्ञान की प्राप्त करके जिनेश्वर हो कर संपूर्ण लोक और अलोक को केवल ज्ञान कर जानने लगते हैं ॥ ८ ॥ केवल दर्शन की प्राप्ति किस को होवे सो कहते हैं—और जिन को दर्शणावर्णिय कर्म सर्वथा क्षय होगया वे जिनेश्वर केवल दर्शनको प्राप्त करके लोक अलोक के सब भावको संपूर्ण देखने लगते हैं ॥ ९ ॥ केवल मृत्यु कम को होवे सो कहते हैं—जो साधु की बारा प्रकार की भिक्षु प्रतिमा हैं उन का यथ विधि विशुद्ध-निर्मल आराधन किया एस सुसमाधीवंत साधु जिस के मोहनिय कर्म का नाश हुवा ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय और अन्तराय इन घनघातिक कर्म का नाश कर केवल ज्ञानी बनकर निर्विक्षेप-संपूर्ण लोकालोक को देखते हैं ॥ १० ॥ जिस प्रकार ताल वृक्ष का मस्तक छेदन करने से वृक्ष का नाश

॥ पष्ठम-दशा ॥

सुयमे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं, इह खलु थेरेहिं भगवतेहिं इक्कारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ, कयरा खलु ताओ थेरेहिं भगवतेहिं इक्कारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ? इमा खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं इक्कारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ तंजहा—अकिरियावादी यावि भवति, नो हियवादी, नो हिय पण्णाणे, नो हिय दिट्ठी, नो सम्मावादी, नोणितियावादी, नो सति परलोगवादी, णत्थिइहलोए, णत्थिपरलोए,

अहो आयुष्मन् जम्बू ! सुना है मैंने भगवंतने ऐसा कहा स्थविर भगवंतने इग्यारह श्रावक की प्रतिमा कही है अहो भगवन् ! स्थविर भगवंतने किस प्रकार इग्यारह श्रावक की प्रतिमा कही है ! अहो शिष्य ! यह आगे कहेंगे यह स्थविर भगवंतने इग्यारह श्रावक की प्रतिमा कही है यथा—इस संसार में कितनेक अक्रियावादी (नास्तिक मति) भी होते हैं, व किस प्रकार के होते हैं ! तो कि—महात्मता कर के हेय उपादेयवादी नहीं होते हैं * वह हेय उपादेय प्रज्ञा भी नहीं है यह हेय उपादेय

+ दर्शन सम्यक्त्व मिथ्यात्व का प्रतिपक्षी है, तथा मिथ्यात्व से सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है इसलिये प्रथम मिथ्यात्व का स्वरूप यहां दरशाया है

* हेय छोड़ने योग्य और उपादेय आदरने योग्य पदार्थ की समझ को कहते हैं.

ग,एष केवली ॥ आउय वेयणिज्जं, छित्ता भवतिर्णाए ॥ १६ ॥ एव अभि समागम्म, चित्तमादाय आउसो ॥ सेणिसोहि मुवागम्म ॥ आया सोहि मुवागइ त्तिबेमि ॥ १७ ॥ पंचमा दसा सम्मत्ता ॥ ५ ॥

*

*

के अंत में औदारिक तेजस कार्मान शरीर वैसे ही नाम कर्म, गोत्र कर्म आयुष्य कर्म, तथा वेदनीय कर्म इनका छेदनकर सर्वथा कर्म रज रहित सिद्ध होते हैं॥१६॥ अहो आयुष्मन् शिष्यों उक्त प्रकार चित्त समाधी के जो धारण करे उन के सन्मुख हो उन्हें अंगीकार कर मुक्ति सोपान-मोक्ष के पक्तीये भाव श्रेणि क्रम उपगत हो आत्मशुद्धि-सिद्ध स्वरूप को मुपगत [प्राप्त] होवो॥१७॥ इति दशाश्रुतस्कन्ध की पंचमी दशा संपूर्ण॥५॥

अहम्मिए अहम्माणुए अहम्मसेवि अहमिट्ठे, अहम्मक्खाई, अहम्मपलोइ, अहम्मजीवी, अहम्मपलज्जमाणे अहम्मसील समदायारे, अधम्मेणजेव वित्तिकप्पेमाणे विहरइ ॥१॥ हण छिंद भिंदने अतक्का लोहितपाणी चडारुद्दा खुद्दा साहस्सिया उक्कवण, वंचण, मायाणियडि, कूडमति, सपडगनहुला, दुसीला, दुचारिया, दुरणुणेया दुव्वया दुपडिंयाणदा निस्सीले, णिवए निगुणे, निम्मेरे, निपच्चक्खाणे पोसहोवासेअसाहु सव्वओ पाणाइवायाओ अपडिविरया जावज्जीवाए, एव जाव सव्वओ कोहाओ, सव्वाओ

अधम के सेवन करनेवाले, अधर्म ही जिन के इष्ट है, अधर्ममय ही स्वभाव है जिन का, अधर्म काम के ही अंगीकार करनेवाले हैं, अधर्म कर ही जीवित [वृत्ति] है, जो लोक में अधर्म का ही प्रसार करते हुवे अन्य में ही अधम प्रवर्ताते हुवे, अधर्म ही जिनों का सीलाचार है उस का आचरन करते हुवे, अधर्म कर्म कर ही अपनी उपजीविका करते हुवे विचरते हैं ॥ १ ॥ वे जीवों को शरीर का खड्गादि से छेदन करते हुवे, भाल्लादि से भेदन करते हुवे, प्राणों का अन्त करते हुवे, जिन के हाथ रक्त कर भरे हुवे रहते हैं, सदैव महारौद्र स्वभाववाले, क्षुद्र स्वभाववाले, दोनों लोक के दुःख से निडर, बिना विचारे काम के करनेवाले, अन्य जीवों को ठगनेवाले, निबड मायावि, कूडमति-अन्य को फसाने की बुद्धिवाले, इस प्रकार अनेक कुप्रयोग के प्रवर्तक दुशील-दुष्ट स्वभावी-दुराचारी, दुर्मार्गानुगामी, दुर्नय के स्थापक, दुव्रत पालक,

णत्थिमाया णो पिया, णत्थि अरहंता, णत्थि चक्कवट्टी, णत्थि बलदेवा, णत्थि वासुदेवा णत्थि णिरया णत्थि सुकडाणं दुकडाण फलवित्ति विसेसा, णो सुचिण्णा कम्मा सुचिण्णफला भवंति, नो दुच्चिण्णकम्मा दुच्चिण्णफला भवंति, अफले कल्लाणे पावए नोपच्चायंतिजीवा, णत्थि निरया नत्थिसिद्धा,से एवंवाही एव पण्णे, एवं दिट्ठी एव छंदरागा भणिविट्ठेआवि भवति ॥ सेय भवंत महिच्छे, महारंभे, महापरिग्गहे,

ो ऐसी युक्त भी नहीं है य सम्यक् (सत्य) वादी भी नहीं है वे नियत (मोक्ष) वादी भी नहीं है, े परलोक है ऐसी स्थापना करनेवाले भी नहीं हैं वे कहते हैं कि यह लोक भी नहीं है, परलोक भी नहीं र माता नहीं पिता नहीं अरिहंत नहीं चक्रवर्ती नहीं बलदेव नहीं, वासुदेव नहीं, नरक नहीं नेरीये नहीं सुकृत्य दुष्कृत्य के फल भी नहीं है अच्छे कर्म (पुण्य) के अच्छे फल (सुख) की प्राप्ति होती है, और दुष्कर्म [पाप] के दुष्ट फल [दुःख] की प्राप्ति दोनों ही नहीं है अर्थात् पुण्य और पाप दोनों निष्फल है पुनर्जन्म भी नहीं है नरक से लगाकर सिद्ध स्थान पर्यंत कोई स्थान भी नहीं है इस प्रकार के वे अक्किरियावादी प्ररूपना करते हैं, यही उन की दृष्टि है यही उन का छंदा है, यही उन का राग भाव है, यही उन का अभिनिविष्ट चित्त है वे किस प्रकार के होते हैं सो कहते हैं—१ महा छ कायका जीव का आरंभ के करनेवाले, महा परिग्रह में लुब्ध, अधर्म करनेवाले, अधर्म के ही अनुचर,

दासी दास कम्मकर पोरुसाओ अप्पडिविरया जावज्जीवाए, सव्व कय विक्कय मासध मासरूवगं सयवाहराओ, अप्पडिविरिया जावज्जीवाए, सव्वओ हिरण सुवण्ण धण धण्ण मणि मोत्तिय सख सिलप्पवालाओ अप्पडिविरया जावज्जीवाए, सव्वाओ कूडतुल्ल कुडमाणाओ अप्पडिविरया,सव्वओ आरंभ समारम अप्पडिविरया, सव्वाओ पयणपयावणाओ अप्पडिविरया, सव्वाओ करण करावणाओ अप्पडिविरया, सव्वाओ कुट्टणपिट्टणताओ तज्जण ताल्ण वध बध परिकिलेसाओ अप्पडिविरया जावज्जीवाए,

जीव पर्यंत सर्वथा प्रकारे असामिपाकारी सर्व घोडे हाथी गौ महिष मेंडे तैसे ही दास दासी (मोललिये) कर्म कर (नोकर) इन से भी निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत, सर्वथा क्रयविक्रय [खरीदना बेंचना] मासा आधा मास हिसाब का करना इत्यादि वणिक के कर्तव्य से भी निवृत्ते नहीं जावजीव पर्यंत सर्वथा हिरण्य चांदी सुवर्ण धन (नगद) धान्य [अनाज] मणि चन्द्रादि मुक्ताफल [मोति] शंख-दक्षिणावर्त, सिल्प प्रवाल-विद्रूम जिस से भी निवृत्ते नहीं जावज्जीव पर्यंत, सर्वथा खोटे तोले, खोटे माप से निवृत्ते नहीं जावज्जीव पर्यंत, सवथा आरंभ छे काय की घात समारंभ-घात की सामग्री मिलाने से निवृत्ते नहीं जावज्जीव पर्यंत, सर्वथा प्रकारे पाचन पचनादि किरिया से निवृत्ते नहीं, सर्वथा पाप कार्य करने कराने से निवृत्ते नहीं, सर्वथा कूटना पीटना, ताडना तर्जना, वध-मारना बंधन में डालना पर को क्लेश-परिताप उप-

माणाओ सव्वाआ मायाओ सव्वाओ लोभाओ, सव्वाओ पेज्जाओ-दोसाओ कल्हाओ अब्भक्खाणाओ पेसुण्णा परिपरिवादीओ अरतिरति-मायामोसाओ मिच्छा दंसणसल्लाओ अपडिविरया जावज्जीवाए,सव्वाओ कसाय दंतकट्ठ ण्हाण मद्दण विलेवण सद्द फरिस रस रूव गंध मल्लालंकाराओ अपडिविरया जावज्जीवाए,सगड रह जाण जुग गिल्लि थिल्लि सीया संदमाणिय सयणासण जाण वाहण भोयण पवित्थर विघातो अप्पडिविरया जावज्जीवाए, असमक्खियकारी, सव्वओ आस हत्थि गो महिस गवेलय

मन्य का दुःख देख कर आनंदित होनेवाले, सीलाचार रहित, आत्मगुप्ति रहित, दुःखीयों की दया रहित पाप के प्रत्याख्यान रहित, पौषधोपवासादि करणी रहित, असाधु-मलीन वृत्ति-पापाचारी, प्राणातिपात, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन, परिग्रह, क्रोध, मान, माया, लोभ, राग, द्वेष, क्लेश, अभ्याख्यान, पैशुन्य पर परिवाद, रति, अरति, माया मृषा, मिथ्यादर्शन शल्य इन अठारा ही पापों से निवर्ते नहीं है यावत् जीव पर्यंत अठारा ही पापों का सेवन करनेवाला, सब प्रकार की कषाय का उदय से वैसी प्रवृत्ति वाला, दांत धोवन स्नान करना विलेपना-तिलकादि लगाना, शब्द स्पर्श रस गंध माला अलंकार इन से निवर्ता नहीं यावज्जीव पर्यंत, सर्व प्रकार के गाडे रथ यान-विमान युग गिल्ली-ऊंट की, थिल्ली-हाथी की अंबारी, शिवि का स्यन्दनी शैय्या आसन यान वाहन भोजन और घर बिस्तरा इन से निवृत्ते नहीं याव-

पियण अण्णयरगसि आहालघुयासि अवराहसि सयमेव गरुय दडवत्तेति तजहा—इमं दंडेहिं, इमंमुंडेहिं, इमंतज्जेहिं, इमंतालेहिं, इमअदुयंधणे करेह, इम नियल बंधणं करेह, हडिनधण करेह, इमं चारगबंधणं करेह, इमं नियलसंकोडिय मोडित करेह, इमं हत्थछिन्नय करेह, इमं पादच्छिन्य करेह, इम कन्नछिन्नय करेह इम नक्कछिन्नय करेह, इमं उट्ठछिन्नयं करेह, इमं सीसाछिन्नय करेह, इम मुखछिन्नयं करेह, इम वेइछाइय करेह, इमं हिउप्पडियं करेह, एवं नयण—दसण—वयण—

मागीदार, काम करता-नोकर भोग पुरुष कृपी आदि इत्यादि जो हैं उन को किंचित् मात्र कोई सूक्ष्म [छोग] भी अपराध होने से उन को गुरु-बहुत भारी दंड का आरोपन करता है यथा इस को दंडो, इत्यादि हल करो, इस को मूंडो मस्तकादि मूंडन करो इस की तर्जना कर ताडना करो इस को चाबुकादि से मारो, इस मजबूत-कठिन बंधन कर बंधो इस को खोडे में बेडी में डालो, इस को कारागृह में भाकसी में पूरो, इस को निबड सकडे बंधन में बांधकर इस के शरीर के अंदर की हड्डीयों तोडो, इस के हाथ-पांव-कान-नाक-ओष्ट-मस्तक-मुख इत्यादि अंगोपांग का छेदन, करो, इस का प्रमदा निकालो, इस का हृदय तोड डालो, इस के आंख दांत मुख जिन्हा उखाडो, इस को कूप नदी द्रह तलावादि में डुबावो, इस को शिला पर घसो, इसको अम्ब आम्र फलकी तरह घोलो, इसको शूलीचढावो,

जेयावण्णे तहप्पगारा सावज्जा अबोहिया कम्मया कज्जति परपाणपरियावणकडा कज्जति ततोवि अप्पडिविरया जावज्जीवाए से जहा नामए केइपुरिसे कलमसूर तिल मुंग मास निप्फाव कुलत्थ आलिसंद एवमादीएहिं अयते कूरे मिच्छादंड पउंजइ एवमेव तहप्पगारे पुरिसजाए तित्तिरवट्टलावय कपोत कंपिजल मिय सहिसवगह गाह गोह कुम्मसिरीसवादिएहिं मिच्छा दंडपउज्जइ ॥ २ ॥ जावियसेवाहरिया परिसा भवति तंजहा-दासेतिवा,पेसेतिवा भत्तएतिवा भाइल्लेतिवा,कम्मकारएतिवा,भोगपुरिसेतिवा,तिसिं

जाने से निवृत्ते नहीं यावज्जीव पर्यंत जैसा वर्ण (अक्रियावादी) वैसे ही प्रकार के सावद्य कर्तव्य के करनेवाले, बोध बीज सम्यक्त्व रहित, अन्य जीवों को परिताप उत्पन्न करने के कर्म के करनेवाले इस से भी निवृत्ते नहीं जावज्जीव पर्यंत यथा दृष्टान्त कोई पुरुष चटले मसूर तिल मूंग उड़द वाल कुलथ असली इत्यादि को अपने स्वार्थ क्रूर परिणाम करके मिथ्या-निरपराध दंड प्रयुंजते हैं-घात करते हैं इस प्रकार ही पर उक्त अनार्य पुरुष-तीतर बटेर लवे कपोत कपिंजल मृग महिष सूअर ग्राह गोधरे काछवे सर्प आदि अन्य भी जीवों को मिथ्या दंड प्रयुंजता है-बिना अपराधि जीवों का वध करता है ॥२॥ अब इन के बाहिर की परिषदा होती है उन के नाम—१ दास-मोलखिया, प्रेषक-दूत, भट्ट-सुभट,

गरुयदडाति वचेति तंजहा—सीतोदग वियडांसि काय ग्रालेत्ता भवति, उसिणोदग वियडेणकाय ओसींचित्ता भवति, अगणिकाएणकाएओ डहित्ता भवति, जोतेणवा वेतेणवा, कसेणवा, जीगडीण्वा, लताएवा पासाइ उद्दालेता भवति, दडेणवा, अट्ठीणवा, मुट्ठीणवा, लेलूणवा, कवालेणवा, कायं आउट्टित्ता भवति, तहप्पगारे पुरुसजाए संवसमाणे दुम्मणा भवति, तहप्पगारे पुरुसजाते दडमासी दडगरुएवंड

रस्सी कर, बेंत कर नाडी कर, कसने-चाबुक कर, छडी कर लता कर उस के शरीर के पासवाडों में प्रहार कर चमडी को उद्देडे, दंडे कर हड्डी कर, मुष्टि कर कंकर कर कवेलू कर इत्यादि कर मारे, काया को परिताप करे इस प्रकार निर्दयता कर स्वजन परिजन को परिताप का उत्पन्न करनेवाला कुपुरुष से उस के स्वजन परजन सदैव दुर्मन नाराज रहते हैं उस से अपना निवास स्थान दूर किया चाहते हैं उस पुरुष का हरेक प्रकार अपमान करते हैं जब वह पुरुष उन के अपमानादि से द्वेषी बन कर दूर चलाजाता है तो जिस प्रकार बिल्ली के दूर जाने से चूवे खुश होते हैं वैसे ही वे भी खुश होते हैं इस प्रकार का वह अक्रियावादी मिथ्यात्वी पुरुष किंचित् अपराधी को भी महादंड का प्रयुंजनेवाला अप का अत्यन्त दंड मे दंडित करके महा पापोर्जन कर इस लोक में उस का अहित होता है सदैव

जिब्भुप्पडियं करेह, इमं उल्लंबियं करेह, इमं घंसियं, इमं घोलितयं इमं सूलापोयतयं इमं सूलाभिन्नं, इमं खारवत्तियं करेह इमं दब्भवत्तियं करेह, इमं सिंहपुच्छयं करेह, इमं वसभ पुच्छयं करेह, इमं कडग्गिदड्ढयं करेह, इमं काकणिमंससखवितियं करेह, इमं भत्तपाण निरुद्धयं करेह, इमं जावज्जीव बंधणं करेह, इमं अन्नतरेण असुभेण कुमारेणं मारेह ॥ २ ॥ जाविय से अब्भिंतरिया परिसा भवंति तंजहा—मातातिवा, पितातिवा, भगिणितिवा, भज्जातिवा, धूयातिवा, सुण्हातिवा, तेसिंपियणं अण्णयरंसि अहालहुयंसि अवराहंसि सयमेव

इस का शरीर त्रिशूलादि कर भेदो, इस का शरीर करवती कर फाडो, तथा क्षारादिकर गलावो, इस को घांस के साथ जलावो, इसे सिंहके पूंछको बंधो, इस को वृषभ (बेल) के पूंछको बंधो, इसे अग्नि में जलावो, इस को इस के शरीर के तिल २ जितने टुकडे छेदन कर २ इस कोही खिलावो, इस को खाने पीने आहार पानी मतदेवो, इस को जाव जीव पर्यंत बंधन में डाल रक्खो, इस को अन्य किसी भी प्रकार की खोटी मृत्युकर मारो इस प्रकार जुल्म करे ॥ २ ॥ और भी उन के अभ्यन्तर की परिषदा होती है उन के नाम-माता, पिता, भगिनी, भ्राता, भार्या, पुत्री, पुत्रवधु, इत्यादि इन से भी जो कभी किंचिन्मात्र छोटासा भी अपराध हो जावे तो आप स्वयमेव गुरु-जबर दंडदेवे यथा-बहुत ठंडे(बरफ जैसे) शितल पानीमें उनके शरीर को डूबावे, उष्ण-गरम पानी उनके शरीरपर सींचनकरे, अग्निकायकर उनके शरीर को

वेरायतणाइ सयणिचा यहुय पावाइ कम्माइ उसण समार कडेणं कमुणा, से जहा नामए अयगोलेतिवा सेल्गोलेतिया उदयसि पक्खित्ते समाणे अहे धरणितले पतिट्ठाण भवति, ग्वामव तहप्पगारे पुरिसजाए वज्जबहुले धूणबहुले पकबहुले वेरबहुले दंभबहुले नियडि अमायण बहुले अयसबहुले अप्पतिय बहुले उसण तसपाणघाती कालमासे कालकिच्चा

तत्कान्ल ही पाप फल्ल का भुक्तने वाला होता है यथा दृष्टान्त-लोहे का गोला, पत्यर का गोला पानी के कुंडादि में डाल्ने से वह तत्काल पानी के नीचे पृथ्वी तल पर स्थिर होता है इस ही मकार वह तथा मकार का अक्रियावादी पापिष्ट पुरुष, बहुत वज्र समान भारी पाप का संचयकर कर्म रूप धूल की अधिकता कर पापरूप कर्दम की मचूरताकर, बहुत जीवों के साथ वैरविरोध की बहुल्ताकर, माया-दगल बाजी नीवड माया, मपपल्य कर माया का पल्टाकर बहुतों के साथ द्रोह उत्पन्नकर, इस मकार दुष्ट कर्मों के संग्रह से महा असाता उत्पन्न कर अमतीत की अधिकता कर मायः बहुत से त्रस जीवों की घात का करने वाला काल के अवसर में काल मास होकर धरती (पृथ्वी) के तल में जावे नीचे महा दु:खमय नरक स्थान में मविष्ट होता है॥२॥ अथ वह नरक स्थान किस मकारका है सो कहते हैं-अन्दर से तो वर्तुला कार गोल सरूप और बाहिर से चतुष्कोन नीचे जमीन पर छूरी उस्तरे की धार के संस्थान से संस्थित

पुरकड अहिए आसिलोयासि अहिए परमिलागामिने दुक्खेति सोयति एवं झूरति तिप्पंति पीडति परतप्पंति, ते दुक्खण सोयण झूरण तिप्पण पिट्टण परितप्पण वधबंध परिकिलेसाओ अप्पडिविरया भवंति ॥ १४ ॥ एवामेव त इत्थिकामहिं मुच्छिया गिद्धा गढ्ढिया अज्झोववन्ना जाव वासाइं चउ पच मासाइं छ दसमासाणिवा, अप्पतरोवा भुज्जतरोवा काल भुजित्ता काममोगाइ पसवित्ता

मन में मलता बलता जिंदगी पूरी करता है और आगे के भव में भी दुःखी होता है शोक संताप पाता है, ऐसे ही झुरता रहता है, रोता रहता है, पिटता रहता है, दूसरों से परिताप पाता रहता है, यों दुःख से शोक से, झूरना से रुदन से, परिताप से वध से, बंधन से, क्लेश से निवर्तता नहीं है ॥ ८ ॥ इस ही प्रकार वह अक्रियावादी पुरुष स्त्री सम्बन्धी काम [शब्द रूप] भोग [गंध रस स्पर्श] में मूर्च्छित गृद्धित लुब्ध प्राप्त हो अत्यन्त आसक्त बन यावत् चार, पांच, छ, दश वर्ष यों थोडे वर्ष अथवा बहुत वर्ष बहुत काम भोगोपभोग भोगव कर बहुत जीवों के साथ वैर विरोध उपार्जन करके बहुत अवर पाप कर्मों का संचय करके भाया * उन क्रूर कर्म से तत्काल ही प्रेरित हुवा

---

* आप शब्द का यह प्रयोजन है कि जो अल्पकाल काम अधिक होतो अधिककाम में पापोदय होवे है

रत्तिया दिंत्तिया मभिवा उपल्मंति, तेण तत्थ उज्वल विउलं पगाढं कक्कस कडुयं चडं दुक्खदुग्ग तिव्वं दुरहियास नरएसु नेरइया निरयवेयण पच्चणुब्भवमाणा विहरति ॥६॥ स जहा नामए रुक्खेसिया पव्वएगेजाए मूलछिन्ने अगोगरुए जातोनिन्न जातोदुग्ग जातानिमभ तत्तापवडति एवामेव तहप्पगारे पुरिसजाए गब्भाउगब्भ, जम्मा

जिन की भात्मा धैर्य धारन नहीं करती है न उन को कभी दुःख से बचने की बुद्धि होती है, इतने काल को वो प्राप्त नहीं कर सकते हैं परंतु उज्वल विशेष प्रकर्ष प्रगट अत्यन्त कर्कश-करवति समान, कडुवा निम्ब समान चंड-रौद्र भयंकर महा दुःख विषम-कष्ट तीक्ष्ण सदैव निरतर प्रचूर दुःख जो सहना अति दुष्कर उस को वे नरक के नेरीये नरक संबधी वेदना का प्रत्यक्षानुभव करते हुवे विचरते हैं ॥ ६ ॥ और भी वह अक्रियावादी जन यथा दृष्टान्त जिस प्रकार पर्वत के शिखर पर उत्पन्न हुवा महा वृक्ष उस का मूल छेदित होने से वह उस का अग्रभाग-ऊपर के विभाग की गुरुता भारीपना से खेंचाया हुवा जो वहां से नीच स्थान खाई दुर्गमादि हो वहां आकर पडता है इस ही प्रकार अक्रियावादी पापिष्ट पुरुष पूर्वोक्त पापों का समाचरन कर मनुष्य स्थानादि पर्वत के शिखर स्थान से च्युत हुवे पुण्य रूप या आयुष्य रूप मूल छेदित होने से नीचे पडता है अनेक जाति योनी में परिभ्रमण करते हुवे एक गर्भ से दूसरे गर्भ में दूसरे से तीसरे गर्भ में यों गर्भ से गर्भ में सक्रमण करता

धराणि तले मवियतिचा अहे धराणितले पतिट्ठाणे भवति ॥५॥ तेण णरगा अतोवट्टा
थाहिं चउरसा अहेखुरप्प संठाण सठाया निश्चधकार तमसा,ववगय गहचंदसूर नक्खत्त
जोइसप्पहा, मेदवसा मास रुहिर पूय पडलं चिक्खल्ललिचाण लेवणतला असूईवींसा
परम दुब्भिगंधा काउय अगणि सवण्णाभा कक्खडफासा दुरुहियासा, असुभानरगा,
असुभे नरएसु वेदणा, नो चेवणं नरएसु नेरइया—निद्दाएतिवा पयलातिवा सुतिंवा

अति तीक्ष्ण सदैव महा अंधकार-घोर अधकार कर व्याप्त क्योंकि वह स्थान चन्द्रमा सूर्यग्रह नक्षत्र ताराओं की प्रभाकर अभ्यपगत-रहित है और वह स्थान-मेद चरबी मांस रक्त पीप पडल इन कर मासरे गोमनुष्य के सडे हुवे मडेसे भी अत्यन्त अनिष्ट दुर्गंध जिस की दशों दिशायें प्रसरी हुई अशूचीकर जमीनका तला लेपित है अदर्शनीय है और भी वह स्थान जिस प्रकार कुंभार का निवाडा इस्क्वाई की भट्टी आग्नि कर व्याप्त होता है इस प्रकार नरक स्थान अग्नि समान देदीप्यमान अति ऊष्ण कर्कश कठोर दुर्गम सहन न हो सके ऐसा स्पर्शमय है महा अशुभ स्थान नरक का है और अत्यन्त अशुभ ही नरक की वेदना है इस प्रकारकी वेदना वेदते हुवे वे नेरीये निश्चय करके किंचिन्मात्र भी सुख से शयन करके निद्रा नहीं ले सकते हैं किंबहुना, बैठे हुवे खडे हुवे भी कभी निन्द [ऊंघ] नहीं आती है किसी वक्त भी चित्त को दुःख की निवृत्ति नहीं कर सकते हैं, किसी काम में भी उन को कभी भी रति (हर्ष) प्राप्त नहीं होती है कभी भी

अत्थिनराही अत्थिनरदेवा अत्थिवासुदेवा अत्थिसुक्कड दुक्कडाण फलवित्ति विसेसे, सुचिण्णाकम्मा सुचिण्णा फला भवति, दुचिण्णा कम्मा दुचिण्णाफला भवति, सफले कल्लाणपावए पच्चायातिजीवा अत्थिनेरीया अत्थिदवा अत्थिसिद्धी से एववादी एव पन्ने एवं दिट्ठी, छद सरागमति निविट्ठिआवि भवति, से भवतित्ते महिच्छे जाव उत्तर

करन से दुःख रूप फल की प्राप्ति होती है कल्याणकारी पुण्य और अकल्याणिक पाप दो सफल हैं परतु निष्फल नहीं है पुण्य पाप के उदय करके ही जीवों ससार में पचरते हैं पाप की अधिकताकर जीव नरक गति में जाकर दुःख को भुक्तता है और पुण्य की अधिकताकर जीव देवलोक में जाकर सुख को भुक्तता है पुण्य पाप दोनों ही के क्षय होने से अर्थात् सर्व कर्मों के नाश से आत्मा सिद्ध गति को प्राप्त हो अनन्त अपरिमित आत्मानन्द में लीन होता है ये क्रियावादी इस प्रकार के वाद के स्थापक होने । इस प्रकार की प्रज्ञायुक्त होते हैं इस प्रकार के सम्यक दृष्टी होते हैं इस प्रकार छंद स्वेच्छा अभिप्राय रूप संदेह रहित निशकितपने आत्मा को स्थिर स्थापन करनेवाले होते हैं यह जीवों कदापि महा इच्छा का कृष्ण वासुदेव श्रेणिक महाराजवत् नरकगामी भी होवे तो भी विशेष दुःख रहित उत्तर दिशा की नरक में शुक्लपाक्षिक [अल्प ससारी] नेरीयेपने उत्पन्न होते हैं आगामिक काल में सुल्भ बोधिक

आरम्भ मारा गमार दुक्खाआदुक्ख दाहिणगामिए नरइए नेरइए कण्हपक्खिए आगम
साण दुल्लभबोधि तेयावि भवति सत अकिरियावादी ॥ ७ ॥ से किंत किरियावाइयावि
भवति ? आहियावादी आहियपन्ने, आहियदिट्ठी सम्मावादी, नियावादी, संतीपरलो-
गवादी अत्थि इहलोए अत्थिपरलोए अत्थिमाता, अत्थिपिता अत्थिअरिहंता,

हुवा वारम्वार जन्म धारण करते हुवे वारम्वार मृत्यु को प्राप्त होता हुवा स्थानोस्थान दुःख ही दुःख का अनुभव करता हुवा अति दुःख के स्थान रूप दक्षिण दिशा की नरक में कृष्ण पक्षिक दीर्घ संसारी जीव आगामिक काल में दुर्लभबोधीपना प्राप्त करता है यह अक्रियावादी का कथन कहा ॥ ७ ॥ अहो भगवान् ! क्रिया वादी किस प्रकार के होते हैं ! हे शिष्य ! क्रियावादी आत्मा की आस्तीमानने वाले आत्मा के हितवादी होते हैं आत्मा को हित होते इस प्रकार की जिन की प्रज्ञा बुद्धि है आत्मा हित साधन रूप सम्यक्दृष्टीपना जिन की आत्मा में है सर्व पदार्थों को यथावस्थित रूप से मानते हैं व प्ररूपते हैं जीवादि मोक्ष पर्यन्त पदार्थों को द्रव्यनयापेक्षा नित्य रूप में मानने वाले, परलोक भी है इस प्रकारका सत्यवाद स्थापन करने वाले, वे कहते हैं—यह लोकभी है परलोक भी है, अरिहन्त भी है, चक्रवर्ती भी हैं, बलदेव भी हैं वासुदेव भी हैं सुकृत्य भी हैं, दुष्कृत्य भी हैं सुकृत्य दुष्कृत्य के फल भी हैं अर्थात् सुकृत्य-अच्छे कर्म करने से अच्छे-सुख रूप फल की प्राप्त होती है और बुरे दुःख रूप कर्म

गुणवयवेरमाण पच्चक्खाण पोसहोवासाय समपट्ठविताइ भवति, सेणसामाइय देसावगासिय नोसम्मं अणुपालेता भवति, दोच्चा उवासगपाडिमा॥ २ ॥ १ ०॥अहावरा तच्चाउवासग्ग पडिमा सव्वधम्मरुइयाविभवति, तस्सण सीलव्वय गुणवय वेरमण पोसहोवासाई सम्म पट्ठविचाइ भवति, सेणं सामायं दिसावगासियं सम्मं अणुं पालेता भवति, सेणं चउद्दसि अट्ठमि उदिट्ठ पुणमासिणीसु पडिपुण्ण पोसह नो सम्मं अणुपालेता भवति तच्चा उवासग पडिमा ॥ ३ ॥ ११ ॥अहावरा चउत्था उवासग्ग पडिमा सव्वधम्मरुईयावि भवति,

प्रत्याख्यान पौषधोपवास सम्यक प्रकार से दोष अतिचार रहित पालते हैं परन्तु प्रत्याख्यानावरणीय कर्मोदय करके सामायिकव्रत [देशावकासिकव्रत सम्यक् प्रकार पालन करने समर्थ नहीं होते हैं ॥२॥१०॥ अथ अपर तीसरी श्रावक की प्रतिमा–वे श्रावक सर्व धर्म आराधने की रुची वाले हुवे उन के बहुत सील व्रत गुनव्रत पापकी प्रतीरूप दश प्रकार के प्रत्याख्यान और पौषधोपवासमें सम्यक्प्रकार प्रवेश वाले होते हैं वे नवमा सामायिक व्रत तथा दशवा दिशावगाशिक व्रत चतुर्दशी अष्टमी अमावस्या पूर्णिमा आदि को सम्यक् प्रकार दोष रहित अनुक्रमसे पालनेवाले होते हैं परन्तु एक अहोरात्रि की कायोत्सर्ग नहीं कर सकते हैं जो श्रावककी पौषध प्रतिमा है उसको सम्यक्प्रकार निर्दोष पालने समर्थ नहीं होते हैं यह तीसरी प्रतिमा ॥३॥११॥

गामीए नेरइए सुक्कपक्खिए आगमेसाण सुलुभबोहिएयावि भवति, सेत्त किरयीवादी ॥ ८ ॥ सव्व धम्मरुईयावि भवति तस्सणं बहुय सीलव्वय गुणवेरणमण पच्चक्खाण पोसहोववासाइ नो सम्मपट्ठवितर पुव्वाइ भवति, पढमा उवासग पडिमा ॥ १ ॥ ९ ॥ आहावरा दोच्चा उवासग्ग पडिमा सव्वधम्म रूइयावि भवति, तस्सण बहुइ सीलव्वय

पना प्राप्त करते हैं अर्थात् सहम सद्भाव से धर्म की प्राप्ति करते हैं धर्मात्मा होते हैं यह क्रियावादी का कथन कहा ॥ ८ ॥ इस प्रकार अक्रियावादी मिथ्यामति का और क्रियावादी-सम्यक्त्वी के स्वरूप के जान हुवे श्रावक धर्म में रुचीवंत बने हुवे इग्यारह प्रतिमा प्रतिज्ञा का समाचरन करते हैं यथा—१ सम्यक्त्वी मुश्रद्धावंत, बहुत प्रकार के सील व्रत, अर्थात् पांच अणुव्रतों और गुणव्रत अर्थात् सात गुण व्रतों व शिक्षा व्रतों धारन कर उस में प्रवृतते हैं नवकारसी आदि विविध प्रकार के प्रत्याख्यान पोषधोपवास इत्यादि धर्म करनी जानते हुवे भी कितने अप्रत्याख्यानावरणिय मोहनीय कर्म के उदय कर उने कर नहीं सक्ते हैं केवल दर्शन श्रावक सम्यक्त्व का ही निर्मल पालन करते हैं वे प्रथम प्रतिमा के धारक होते हैं यह चतुर्थ गुणस्थानवर्ती अव्रती सम्यक् दृष्टि जानना ॥ १ ॥ ९ ॥ अथ अपर दूसरी प्रतिमा-वे सर्व धर्म समाचरने की रुचिवंत हुवे सम्यक्त्वी बन्त बहुत प्रकार से सील व्रत-पांच अणुव्रत और गुनव्रत-सात शिक्षाव्रत, इन बारा व्रतमें प्रवृत्ते हैं पाप से निवृत्ते हैं नवकारसी आदि दश

मउलिपडे दियाम्भचारी रति परिमाणकडे सेण एयारूवे विहारेण विहरमाणे जहन्नेणं एगाहत्रा दुहत्रा तियाहत्रा उक्कोसेणं पचमासेनिहरिज्जा पचमा उवासग्ग पडिमा ॥ ५ ॥ १३ ॥ आहावरा छट्ठीउवासगपडिमा सव्वधम्मरुइयावि भवति सेण एगाराइयं उवासगपडिमं अणुपालेता भवति, सेणं असिणाणा वियडभोई मउलियडे दियावा राओवा बंभयारी सचित्तहारण्से अपरिभोए भवंति सेण अणं एयारूवेण विहारेणं विहरमाणे, एगाहत्रा दुयाहत्रा तियाहत्रा जाव उक्कोसेणं छमासे विहारिज्जा,

नहीं करना २ रात्रि भोजन नहीं करना तथा अप्रकाशित मकान मे भोजन नहीं करे धोती की काछ (लांग) नहीं लगावे, दिन को ब्रह्मचर्य पाले रात्रि का कुशील का प्रमाण करे, यह ५ नियम अधिक धारण करे, परन्तु वे सचित्त वस्तु को आहार यदि त्याग की प्रतिमा का सम्यक प्रकार से पालन नहीं कर सकते हैं, वे इस प्रकार धर्म विहार में विचरते हुवे जघन्य एक दो तीन महिना उत्कृष्ट पांच महिने उक्त आचार से विचरे, यह पांचवी प्रतिमा ॥ १३ ॥ छठी श्रावक की प्रतिमा-सर्व धर्म समाचरने की रुचिवाला होवे यावत उक्त पांचो प्रतिमा में कही हुइ क्रिया युक्त एक अहोरात्रि की पोषध प्रतिमा युक्त सम्यक प्रकार से पालने वाले होवे वह स्नान नहीं करे, धोती की काछ खुल्ली रखे रात्रिदिन अखंड ब्रह्मचर्य पाले सचित्त वस्तु कच्चापानी आदि भोगवने से भी निवृते परंतु स्वयं आरंभ करने से निवृते नहीं, वे इस प्रकार के आचार में विहार करते हुवे जघन्य एक दो तीन महिने उत्कृष्ट छ महिने विचरे यह

तस्सणं बहुय सीलव्वय जाव सम्मपट्ठवियाइ भवति, सेणं समाइय, देसावगासीयं सम्मं अणुपालेत्ता भवति सेण चउद्दसि अट्ठमि उदिट्ठ पुणमासणीसु पडिपुण्ण पोसहं सम्मं अणुपालेत्ता भवति सेणं एगराई उवसग्ग पडिमाणो सतमं अणुपालेत्ता भवति सेणं एगारूवेणं विहारेणं विहरमाणेण एगाहेवा दुवाहवा तिहाहंवा जाव उक्कोसेणं चउमासाणं विहरज्जा चउत्थी उवासगपडिमा ॥४॥१२॥ आहावरा पचमा उवसग्ग पडिमा सव्वधम्मरुइयावि भवति, तस्सणं सीलव्वय जाव सम्म पडिलेहिताइ भवंति सेण समाइयं जाव समं अणुपालेत्ता भवति, सेणं चउद्दसि तहेवसम्म अणुपालेत्ता भवति, सेण एगराइयं उवासग्ग पडिमं सम्म अणुपालेत्ता भवति, सेण असिणाणाए वियडभोयई

चौथी श्रावक की प्रतिमा-सब धर्म की रुचिवाला जो श्रावक होवे वह बहुत सीलव्रत गुणव्रत यावत् सम्यक् प्रकार से पालन करने वाला होवे तैसे ही सामायिक दिशावगाशि सम्यक् प्रकार निर्दोष पालने वाला होवे और एक अहो रात्रि की परंतु एक रात्रि की कायोत्सर्ग प्रतिमा नहीं करना कही है कायोत्सर्ग करने की श्रावक की जो पौषध प्रतिमा है उस का सम्यक् प्रकार से आचरन नहीं कर सकते हैं वे इस प्रकार जघन्य एक दो तीन उत्कृष्ट चार महिने उक्त आचार से विचरे यह चौथी प्रतिमा ॥४॥१२॥ पांचवी प्रतिमा-सब धर्मकी रुचीवाला सीलव्रत गुणव्रतका भी पालनेवाला सामायिक देशावि कासिक करने वाला एक अहो रात्रि का कायुत्सर्ग करन की और इस सिवाय पौषध प्रतिमा उस का भी सम्यक् प्रकार से अष्टमी चतुर्दशी अमावस्या पूर्णिमादि उदिष्ट-तीर्थंकरों के कल्याण के तीथी को पालन वाला होवे ? स्नान

दुआहंवा जाव उक्कोसेणं अट्ठमासाविहरिज्जा,, सेतं अट्ठमाउवसग्गपडिमा ॥८॥१६॥ आहावरा नवमा उवसग्गपडिमा सव्वधम्मरुईयावि भवति जाव राओवराइ बंभयारी आरंभे से परिणाए भवंति, पेस्सारंभसेपरिणाए भवति, उद्दिट्ठभत्ते से अपरिण्णाए भवंति, सेणं एयारूवेणं विहारेण विहरमाणे एगाहवा दुआहंवा उक्कोसेण नवमासा विहरेज्जासि, तं नवमा उवासगपडिमा ॥ ९ ॥ १७॥ अहावरा दसमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरुईयावि भवति जाव उद्दिट्ठ भत्ते स परिणाए भवंति, सेणखुरमुंडएवा

नहीं. वे इस प्रकार के आचार में विहार करते जघन्य एक दो तीन महिने उत्कृष्ट आठ महीने पर्यंत विचरे यह आठवी प्रतिमा ॥८॥ १६॥ नववी श्रावक की प्रतिमा-श्रावक सर्व धर्म को आराधने की रुचिवाला यावत् अहोरात्रि अखंड ब्रह्मचर्य का पालक, सचित्त वस्तु के भोग का त्यागी, स्वय आरंभ करे नहीं, और अन्य को कहकर भी आरंभ करावे नहीं। परन्तु उन के निमित्त वस्तु तैयार कर देवे उस के भोग से निवृते नहीं. वे इस प्रकार के आचार में विहार करते जघन्य एक दो तीन महीना उत्कृष्ट नव महीने पर्यंत विचरे यह नववी प्रतिमा ॥ ९ ॥ १७॥ दशवी श्रावक की प्रतिमा-सर्व धर्म की रुचिवाला श्रावक प्रथम प्रतिमा से नववी प्रतिमा तक कही हुई पीछे की सब वृत्ति का पालन करता हुआ यावत् इस प्रतिमा में उन के निमित्त आरंभकर कोइ आहार आदिक देवेतो उस को ग्रहण नहीं करे

छट्ठाउवासग पडिमा ॥ १४ ॥ आहावरा सत्तमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरुइयावि भवति जाव दियावा रातिं बंभयारी, सचित्तहारे सेपरिणाए भवति, आरंभेसे अपरिणा भवति, सेणं एयारूवेण विहारेणं विहरमाणे एगाहवा दुआहवा जाव उक्कोसेण सत्तमास विहरिजा, सेतं सत्तमा उवासग पडिमा ॥७॥१५॥ आहावरा अट्ठमा उवासग पडिमा सव्वधम्मरूइयावि भवति जाव राओवा बंभयारी, सचित्ताहारे सेपरिण्णाए भवति आरंभेसे परिणाए भवति, पेसारंभसे अपरिणाए भवति सेणं एयारूवेण विहारेणं विहरमाणाणं

छठी प्रतिमा ॥ ६ ॥ १४ ॥ सातवी श्रावक की प्रतिमा-सब धर्म की रुचि वाला होवे यावत् अहोरात्रि को अखंडित ब्रह्मचर्य का पालने वाला होवे और सचित्त आहार सजीव वस्तु कचापानी आदि भोगवने मे भी निवर्ते परन्तु अपने हाथ मे छही काय जीवों का कुव्यारंभ करने से निवर्ते नहीं वह इस प्रकार आचार में विचरता हुआ जघन्य एक दो तीन महिने उत्कृष्ट सात महिने पर्यन्त विचरे यह सात मी प्रतिमा ॥ ७ ॥ १५ ॥ आठवी धर्म की रुचिवाला यावत् उक्त क्रिया युक्त अखंड ब्रह्मचर्य का पालक सचित्त आहार के त्यागी होवे और स्वयं छ काया का आरंभ करना भी छोडे दे अपनी आत्मा का आरंभ से निवर्तावे, परन्तु पेसारंभ-अन्य को कहकर छ काया का आरंभ कराने से निवृत

दुआहेवा जाव उक्कोसेण अट्ठमासाविहरिज्ञा,, सेतं अट्ठमाउवसग्गपडिमा ॥ ८ ॥ १६ ॥ आहावरा नवमा उवसग्गपडिमा सव्वधम्मरुइयाविभवति जाव राओवराइं बंभयारी आरंभे से परिणाए भवंति, पेस्सारंभसेपरिणाए भवंति, उदिट्ठभत्ते से अपरिण्णाए भवंति, सेण एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे एगाहेवा दुआहेवा उक्कोसेण नवमासा विहरेज्जासि, तं नवमा उवासगपडिमा ॥ ९ ॥ १७ ॥ अहावरा दसमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरुइयावि भवति जाव उदिट्ठ भत्त स परिमाए भवति, सेणंखुरमुडएवा

नहीं. वे इस मकार के आचार में विहार करते जघन्य एक दो तीन महिने उत्कृष्ट आठ महीने पर्यंत विचरे यह आठवी मतिमा ॥ ८ ॥ १६ ॥ नववी श्रावक की मतिमा-श्रावक सर्व धर्म को माराधने की रुचिवाला यावत् अहोरात्रि अखंड ब्रह्मचर्य का पालक, सचित्त वस्तु के भोग का त्यागी, स्वय आरंभ करे नहीं, और अन्य को कहकर भी आरंभ करावे नहीं, परन्तु उन के निमित्त वस्तु तैयार कर देवे उस के भोग से निवृत्त नहीं वे इस मकार के आचार में विहार करते जघन्य एक दो तीन महीना उत्कृष्ट नव महीने पर्यंत विचरे यह नववी मतिमा ॥ ९ ॥ १७ ॥ दशवी श्रावक की मतिमा-सर्व धर्म की रुचिवाला श्रावक मथम मतिमा से नववी मतिमा तक कही हुई पीछे की सब वृत्ति का पालन करता हुवा परन्तु इस मतिमा में उन के निमित्त आरंभकर कोइ आहार आदिक देवेतो उस को ग्रहण नहीं करे

छट्ठाउवासग्ग पडिमा ॥ १४ ॥ आहावरा सत्तमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरुइयावि भवति जाव दियावा रातिं बंभयारी, सचित्ताहारे सेपरिणाए भवति, आरंभेसे अपरिणा भवति, सेणं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे एगाहंवा, दुआहंवा जाव उक्कोसेण सत्तमासं विहरिज्जा, सेतं सत्तमा उवासग्ग पडिमा ॥७॥१५॥ आहावरा अट्ठमा उवासग्ग पडिमा सव्वधम्मरुईयावि भवंति जाव राओवा बंभयारी, सचित्ताहारे सेपरिण्णाए भवति आरंभेसे परिणाए भवति, पेसारंभसे अपरिणाए भवति सेणं एयारूवेण विहारेणविहरमाणाण

छठी प्रतिमा ॥ ६ ॥ १४ ॥ सातवी श्रावक की प्रतिमा सर्व धर्म की रुचि वाला होवे यावत् अहोरात्रि का अखंडित ब्रह्मचर्य का पालने वाला होवे और सचित्त आहार सजीव वस्तु कचापानी आदि भोगवने से भी निवर्ते परन्तु अपने हाथ से छ्ही काय जीवों का कुआरंभ करने से निवर्ते नहीं यह इस प्रकार आचार में विचरता हुआ जघन्य एक दो तीन महिने उत्कृष्ट सात महिने पर्यन्त विचरे यह सात वी प्रतिमा॥७॥ १५ ॥ आठवी धर्म की रुचिवाला यावत् उक्त क्रिया युक्त सर्वदा ब्रह्मचर्य का पालक सचित्त आहार के त्यागी होवे और स्वयं छ काया का आरंभ करना भी छोडे दे अपनी आत्मा का आरंभ से निवर्तावे, परन्तु पेसारंभ-अन्य को कहकर छ काया का आरंभ कराने से निवृत

परित्ताए भवति, सेण सुरमुंडएवा लुंतेसिरए गहितायारभंडगनेवत्था जे इमे समणा निग्गंथाण धम्मेत धम्मकाएणं फासेमाणे पालेमाणे पुरउजुगमायाए पेहमाणे दहुण-तसेपाणे उद्धटुपाएरिएज्जा, साहट्टुपाएरिएज्जा विचरिंछवा पायकट्टुरिएज्जा सतिपरिक्कमे संजयामेव परिक्कमेज्जा नोउज्जुयंगच्छेज्जा केवलंसेनायए पेज्जबंधणे अवोच्छिन्ने भवति।एवं से कप्पति नायविधिपचए तत्थसे पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते चाउलोदणे पच्छाउत्ते भिलगसूए कप्पतिसे चाउलोदणे पडिग्गाहित्ताए,नो कप्पति भिलगसूए पडिग्गाहित्ताए, तत्थसे पुव्वाग-

करता,कदाचित शुरमुंड(हिजामत) करावे तथा इच्छा होवेतो लोच भी करे साधु जैसे आचारका पालन करते गरा पात्र मुखपति रजोहरण रखे जो श्रमण निर्ग्रंथ (साधु) के क्षांती आदि १० धर्म शास्त्र में कहे है उनका ही सम्यक प्रकारे अपनी काया कर स्पर्शे-यथाविधी पालन करें. साधु की तरह ही रास्ते में चलता हुआ आगे को युगमात्र धोंसरे प्रमाने (३॥ हाथ) भूमी को देखता हुआ गमन करे, त्रस प्राणी बेइन्द्रियादि देखकर अपने पांव को उठा लेवे वहां से संहारन करले. तिर्च्छा उन जीवों से अलग एकान्त में पांव को रखकर एसे जीवरहित अन्यमार्ग में गमन करने का पराक्रम फोडे जो दूसरा अच्छामार्ग जाने को हो तो जीवमाले मार्ग में गमन नहीं करे, इत्यादि साधु की क्रिया का पालन करे फक्त पुत्रकलत्रादिके प्रेमबन्धन का विच्छेद नहीं हुवा पुत्र कलत्रादि में मोहभाव सहित विचरता है इस प्रकार इग्यारमी प्रतिमा के धारक

निधालिधारए नम्मण आभट्ठसमाभट्ठस्स कप्पति दुयभासउ भासितए जहा जाणयाजाण अजाणयासाजाण सेणं एयारूवेणं विहारेण विहरमाणे जहण्णेणं एगाहंवा दुआहंवा उक्कोसेणं दसमासा विहरिज्जा, दसमापडिमा ॥ १० ॥ १८ ॥ आहावरा एकदसमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरूइयावि भवति जाव उद्दिट्ठभत्ते से

मस्तक का क्षुर मुंड (हिजामत) करावे फक्त एक शिखा (चोटी) रखे उन को एक वक्त पूछने से व वारम्वार पूछने से बोले परंतु बिना बोलाया नहीं बोले बोले तो भी दो प्रकार की भाषा बोलना-कल्पता है जानता है वे यह कहे, जानता हूं और नहीं जानता होवे उसे कहे नहीं जानता हूं कदापि जानता हुवा भी कहे जानता हूं परंतु बता सकता नहीं हूं जैसे प्रतिमा-ग्रहण किये पहिले द्रव्य निधान स्थापन किया प्रतिमा-ग्रहण करती वक्त बताना भूलगया नंतर पुत्रादि पूछे तो ऐसा भी नहीं कहे की मैं नहीं जानता हूं क्यों कि उन को अप्रतीत उत्पन्न होवे और ऐसा भी नहीं कहे कि अमुक स्थान निधान है क्यों कि वे निकालकर आरंभ वृद्धि करे इस लिये ऐसा कहे मैं जानता हूं परंतु बता सकता नहीं हूं इस प्रकार के आचार से विचरते हुवा जघन्य एक दो तीन मास उत्कृष्ट दश मास विचरे इति दशवी प्रतिमा ॥ १० ॥ १८ ॥ और इग्यारहवी श्रावक की प्रतिमा—सर्व धर्म (साधु धर्म) की रुचीवाला श्रावक होवे वह उक्त दश ही प्रतिमा में कही हुई विधी का अनुक्रम से पालन करतों यावत् उन के लिये बनाया आहार आदिक को भी ग्रहण नहीं

परिसाए भवति, सेणं खुरमुंडएवा लुत्तेसिरए गहितायारभंडगनेवत्था जे इमे समणा निग्गथाण धम्मेतं धम्मकाएणं फासेमाणे पालेमाणे पुरउजुगमायाए पेहमाणे वट्ठुण-तसेपाणे उद्धट्टुपाएरिएज्जा, साहट्टुपाएरिएज्जा विचरिच्छ्वा पायंकट्टुरिएज्जा सतिपरिक्कमे संजयामेव परिक्कमेज्जा, नोउज्जुयंगच्छेज्जा केवलंसेनायए पेज्जबधणे अवोछिन्ने भवतिएवं से कप्पति नायविधिपचए तत्थसे पुव्वागमणेणं पुव्वाउत्ते चाउलोदणे पच्छाउत्ते भिलंगसूए कप्पतिसे चाउलोदणे पडिग्गाहित्ताए,नो कप्पति मिलंगसूए पडिगाहित्ताए, तत्थसे पुव्वाग-

करवा,कदा पिण खुरमुंड(हिजामत) करावे तथा इच्छा होतोलोच भी करे साधु जैसे आचारका पालन करते वस्त्र पात्र मुहपति रजोहरण रखे जो श्रमण निर्ग्रंथ (साधु) के सांती आदि १०धर्म शास्त्र में कहे है उनको ही सम्यक् प्रकारे अपनी काया कर स्पर्शे-यथाविधी पालन करें साधु की तरह ही रास्ते में चलता हुआ आगे को युगमात्र धोंसरे प्रमाने (३।। हाथ) भूमी को देखता हुवा गमन करे, त्रस प्राणी बेइन्द्रियादि देखकर अपने पांव ऊंचा उठा लेवे, वहां से संकोचन करले तिर्छा उन जीवों से अलग एकान्त में पांव को रखकर चले जीव रहित अन्यमार्ग में गमन करने का पराक्रम फोडे जो दूसरा अच्छामार्ग जाने को हो तो जीवाले मार्ग में गमन नहीं करे, इत्यादि साधु की क्रिया का पालन करे फक्त पुत्रकलत्रादिके प्रेमबन्धन को विच्छेद नहीं हुआ पुत्र कलत्रादि में मोहभाव सहित विचरता है इस प्रकार इग्यारवी प्रतिम के धारक

पिधाणिधाएय तस्सण आभट्ठसमाभट्ठस्स कप्पति दुवभासउ भासित्तए जहा
जाणवाजाणं अजाणवासोजाण सेण एयारूवेणं विहारेण विहरमाणे जहण्णेणं
एगाहंवा दुआहंवा उक्कोसेणं दसमासा विहरिज्जा दसमापडिमा ॥ १० ॥ १८ ॥
आहावरा एक्कदसमा उवासगपडिमा सव्वधम्मरूइयावि भवति जाव उद्दिट्ठभत्ते से

मस्तक का खुर मुंड (हिजामत) करावे फक्त एक शिखा (चोटी) रखे उन को एक वक्त पूछने से व
वारम्वार पूछने से बोले परंतु बिना बोलाया नहीं बोले, बोले तो भी दो प्रकार की भाषा बोलना-कल्पता है
जानता है वे वह कहे, जानता हूं और नहीं जानता होवे उसे कहे नहीं जानता हूं कदापि जानता हुवा भी कहे जानता हूं
परंतु कह सकता नहीं हूं जैसे प्रतिमा-ग्रहण किये पहिले द्रव्य निधान स्थापन किया प्रतिमा-ग्रहण करती वक्त
बताना भूलगया नंतर पुत्रादि पूछे तो ऐसा भी नहीं कहे कि मैं नहीं जानता हूं क्यों कि उन को अप्रतीत
उत्पन्न होवे और ऐसा भी नहीं कहे कि अमुक स्थान निधान है क्यों कि वे निकालकर आरंभ वृद्धि करे
इस लिये ऐसा कहे मैं जानता हूं परंतु बता सकता नहीं हूं इस प्रकार के आचार से विचरते हुवा जघन्य
एक दो तीन महिने उत्कृष्ट दश महिने, विचरे इति दसवी प्रतिमा ॥ १० ॥ १८ ॥ और इग्यारवी
श्रावक की प्रतिमा—सर्व धर्म (साधु धर्म) की रुचीवाला श्रावक होवे वह उक्त दश ही प्रतिमा में कही
हुई विधी का अनुक्रम से पालन करता यावत् उन के लिये बनाया आहार आदिक को भी ग्रहण नहीं

परिसाए भवति, सेण खुरमुंडएवा लुतेसिरए गहितायारभंडगनेवत्था जे इमे समणा निग्गथाण धम्मेतं धम्मकाएणं फासेमाणे पालेमाणे पुरउजुगमायाए पेहमाणे वट्टुण-तमेपाणे उद्धट्टुपाएरिएज्जा, साहट्टुपाएरिएज्जा वित्तरिछंवा पायकट्टुरिएज्जा सतिपरिकमे राजयामेव परिकमेज्जा, नोउजुयगच्छेज्जा केवलसेनायए पेज्जवधणे अवोछिन्ने भवति।एवं से कप्पति नायविधिपचए तत्थसे पुव्वागमणेण पुव्वाउत्ते चाउलोदणे पछाउत्ते भिलंगसूए कप्पतिसे चाउलोदणे पडिग्गाहित्तए,नो कप्पति भिलंगसूए पडिगाहित्तए, तत्थसे पुव्वाग-

करता,कदाचित खुरमुंड(हिजामत) करावे यथा इच्छा हो,तोलोच भी करे,साधु जैसे आचारका पालन करते वस्त्र पात्र मुहपति रजोहरण रखे जो श्रमण निर्ग्रंथ (साधु) केलांती आदि १०धम शास्त्र में कहे है उनक ही सम्यक प्रकारे अपनी काया कर स्पर्शे-यथाविधी पालन करें साधु की तरह ही रास्ते में चलता हुआ आगे को युगमात्र घोंसरे प्रमाने (३॥ हाथ) भूमी को देखता हुवा गमन करे, त्रस प्राणी बेईन्द्रयादि देखकर अपने पांव को- उठा लेवे, वहां से संहारन करले तिर्च्छा उन जीवों से अलग एकान्त में पांव कों रखकर चले जीव,रहित मन्यमाग में गमन करने का पराक्रम फोडे जो दूसरा अच्छामार्ग जाने को हो तो जीवनाले मार्ग में गमन नहीं करे, इत्यादि साधु की क्रिया का पालन करे फक्त पुत्रकलत्रादिके प्रेम बन्धन को विच्छेद नहीं हुवा पुत्र कलत्रादि में मोहभाव सहित विचरता है इस प्रकार इग्यारवी प्रतिम के धारक

मणेणं पुव्वा ।। ——, पच्छाउत्ता आरं — । ति ।॥ समणभूए पडिग्गाहित्तए नो कप्पति से चाउलोदणे पडिग्गाहित्तए, तत्थणं से पुव्वागमणेणं दोविपुव्वाउत्ताइं कप्पति से दोवि पडिग्गाहित्तए तत्थसे पुव्वागमणेण दोवि पच्छाउत्ते णो कप्पति से दोवि पडिग्गाहित्तए तत्थसे पुव्वागमणेण पुव्वाउत्ते सेस कप्पति पडिग्गाहित्तए जेसे तत्थ पुव्वागमणेणं पच्छाउत्ते सेसे णो कप्पति पडिग्गाहित्तए तस्सणं गाहावति कुल पिंडवाय पडियाए अणुपविट्ठस्स कप्पति एवं वदित्तए समणोवासगस्स पडिमा पडिवन्नस्स भिक्खं दलयह, तंचेव॥ एयारूवेणं

श्रावक को अपने ज्ञातीयों स्वजनों के घर में गोचरी के लिये गमन करना कल्पता है पर जिस घर में गोचरी जावे उस घर में उस के गये पहिले जो प्रथम चांवल पाककर चूले नीचे उतार लिये हैं और दाल तैयार नहीं हुई हो उन के गये बाद दाल नीचे उतारी हो तो उन को वे चांवल ग्रहण करना तो कल्पता है परंतु पीछे से उतरी दाल ग्रहण करना नहीं और कदापि घर में गये पहिले दाल उतरी हो और चांवल पीछे उतरे हों सो उन को दाल ग्रहण करना कल्पता है परंतु चांवल ग्रहण करना नहीं कल्पता है इस ही प्रकार उन के गये पहिले जो दाल चांवल दोनों ही तैयार हो गये हों चूल्ह के नीचे उतार लिये हों तो दोनों ही ग्रहण करना कल्पता है और जो घर में गये के बाद दाल चांवल दोनों चूल्हे नीचे नहीं उतरे हों तो दोनोंही ग्रहण करना नहीं कल्पता है मतलब की जो गये के

विहरमाणं कइ पासित्ता वदिज्जा के आऊसो तुमं ! वत्तव्वेसिया समणोवासए एवं पडिवज्जित्ताए अहमसा तिवतव्वासिया ॥ सेण एयारूवेण विहारेण विहरमाणे जहन्नेण एगाहवा दुआहवा तियाहवा उक्कोसेण एक्कारसमासे विहरेज्जा ॥ एगारसमा उवासग पडिमा ॥ १९ ॥ एताओ खलु थेरेहिं भगवंतेहिं एगारस उवासग पडिमाओ पण्णत्ताओ तिबेमि ॥ २० ॥ इति छट्ठी दसा सम्मत्ता ॥ ६ ॥ * *

पहिले तैयार हुवा हो वही ग्रहण करना कल्पता है, और घर में गये के बाद तैयार हुवा हो वह ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥ उस गृहस्थ के घर में आहार आदि के लिये प्रवेश करते वे श्रावक को ऐसा कहना कि मैं श्रावक की इग्यारवी श्रमणभूत प्रतिमा का धारक श्रावक हूं, मुझे भिक्षा दो उन को इस प्रकार के आचार में विहार करते हुवे श्रावक को देखकर कोइ पूछे कि अहो आयुष्मन ! तुम कौन हो ? तब वह कहे कि मैं श्रावक की इग्यारवी प्रतिमा का अंगीकार श्रावक हूं इस प्रकार आचार में विहार करते हुवे जघन्य एक दो तीन महिना उत्कृष्ट इग्यारे महिना तक प्रवर्तें ॥ यह इग्यारवी पडिमा ॥ १९ ॥ यों निश्चय इग्यारे श्रावक की प्रतिमा स्थविर भगवंतने कही है अहो जम्बू ! वैसी ही मैंने तेरे से कही है ॥ २० ॥ इति श्रावक पडिमा नामक छट्ठी दशा समाप्तम् ॥ ६ ॥ * *

॥ सप्तम-दशा ॥

सुयं मे आउसं तेणं भगवया एवमक्खायं, इह खलु थेरेहिं भगवंतेहिं, बारसभिक्खू पडिमाओ पण्णत्ताओ कयरा खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं बारसभिक्खुपडिमाओ पण्णत्ताओ? इमाओ खलु ताओ थेरेहिं भगवंतेहिं बारसभिक्खू पडिमाओ पण्णत्ताओ तंजहा १ मासियाभिक्खुपडिमा, २ दोमासियाभिक्खुपडिमा, ३ तिमासिया भिक्खुपडिमा ४ चाउम्मासिया भिक्खुपडिमा, ५ पंचमासिया भिक्खुपडिमा, ६ छम्मासिया भिक्खुपडिमा ७ सत्तमासिया भिक्खुपडिमा, ८ पढमासत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा ९ दोच्चासत्तराइंदिया भिक्खुपडिमा, १० ॥ तच्चा सत्तराइंदिया

अहो आयुष्मन् जम्बू! मैंने सुना है भगवंतने ऐसा कहा है स्थविर भगवंतने बारह भिक्षु-साधु की कही है अहो भगवन्! स्थविर भगवंतने कौनसी भिक्षु साधु की बारह प्रतिमा कही है? अहो शिष्य! यह आगे कहेंगे वे स्थविर भगवंतने साधु की बारह प्रतिमा कही है उन के नाम— १ प्रथम प्रतिमा एक महिने की, २ दूसरी प्रतिमा दो महिने की, ३ तीसरी प्रतिमा तीन महिने की, ४ चौथी प्रतिमा चार महिने की, ५ पांचवी प्रतिमा पांच महिने की ६ छठी प्रतिमा छ महिने की ७ सात प्रतिमा सात महिने की, ८ [आठवी] प्रथम प्रतिमा सात अहो रात्रि की, ९ (नववी

भिक्खुपडिमा, ११ अहाराइदिया भिक्खुपडिमा १२ एगराइदिया भिक्खुपडिमा॥ १ ॥ मासिएण भिक्खुपडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठकाए चियत्तदेहे, जे केइ उवासग्गा उप्पज्जति तंजहा दिव्वावा, माणुसावा तिरिक्खजोणियावा, तेउप्पन्ने सम्मकाएणं सहइ ख्यमइ तितिक्खइ अहियासेइ ॥ २ ॥ मासिएण भिक्खुपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स कप्पइ एगादत्ती भोयणस्स पडिगाहित्तए, एगापाणगस्स अणाओच्छसुद्धोवहड निज्जू-

दूसरी प्रतिमा सात अहो रात्रि की, १० (दसवी) तीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की, ११ इग्यारवी प्रतिमा एक अहोरात्रि की और १२ बारवी प्रतिमा एक अहो रात्रि की ॥ १ ॥ अब इन इग्यारे ही प्रतिमा का आराधन करने की विधी कहते हैं—एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा में प्रतिपन्न हुवा साधु शरीर की शुश्रुषा का त्याग करते सदेव शरीरकी ममत्वको पेसीराकर विचरनेवाले होते हैं परिषह उपसर्ग के सन्मुख होने से छोडी है शरीर की ममत्व जिनोंने उने जो किसी प्रकार के उपसर्ग उत्पन्न होते हैं उन के नाम—१ व्यन्तरादि देव देवी सम्बन्धी, २ अनार्यादि मनुष्य मनुष्यनी सम्बन्धी, और ३ सिंह सर्पादि पशु-तिर्यंच तिर्यंचनी सम्बन्धी इन को सम-सरस स्थिर शरीर को स्थापन कर सहन करे मन में क्षमा भाव कर सहे दुर्वचन के अनुचार कर खमे और क्रियाकी तितिक्षा अहियासे ॥ २ ॥ एक महिने की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु को एकदात आहारकी ग्रहण करना और एक दात पानीकी ग्रहण करना कल्पता है।

हिया, बहवे दुप्पय चउप्पय समण माहण अतिही किवण वणिमग, कप्पइ से एगस्स भुंजमाणस्स पडिगाहित्तए, णोदुण्हं णोतिण्हं णोचउण्हं, णो पंचण्ह, णो गुव्विणीए, णोबालवच्छाए, नोदारग पेज्जमाणीए, णो अंतोएलुयस्स, दोवियाए साहट्टु दलमाणीए, णोबाहिं, एगलुयस्स दोवियाए साहट्टु दलमाणीए

[पात्रमें आहार डाले एक ही वक्त में जितना डाले या पडे उसे एक दात आहारकी कहते हैं और पानी का धार खंडित नहीं होवे वहां तक एक दात पानी की कहते हैं] यह भी जिन २ कुलों में से आहार पानी आदि ग्रहण करने की आज्ञा भगवान ने दी है उन २ आज्ञात कुलों में से शुद्ध बेतालीस दोष रहित, गृह के सब कुटुम्ब जीमलिये बाद बचा होवे, जिस को देना हो उसे देदिया हो श्रमण-शाक्यादि ब्राह्मण अतोथिकृपण भीख्यारीइनको देनेका हो वह दे दिया हो, और भीवा गृहस्थ अकेला ही भोजन करने बैठा हो, उन के पास से ग्रहण करना कल्पे, परन्तु दो तीन चार पांच या अधिक जन एकत्र भोजन करने बैठे हो उन के पास से लेना नहीं कल्पे, और भी गर्भवती स्त्री के भोगने के लिये जो आहार किया हो वह उस के भोगवे पहिले ग्रहण करना नहीं कल्पे, बालक के वास्ते किया हो वह उस के भोगवे विना लेना नहीं कल्पे, बच्चे को स्तन पान करती हुई माता उसे छोडाकर दे तो वह भी नहीं कल्पे, दातार दोनों पांव घर के अंदर रखकर देवे या दोनों पांव घर के बाहिर रखकर देवे तो वह भी ग्रहण करना

एगं पायं अंतोकिचा, एगं पायं बाहिंकिचा, एलुयवि खंभइत्ता एवं दलयाति एवं से कप्पइ पडिगाहित्तए, एवं से णो दलयति, एव से णो कप्पइ पडिगाहित्तए॥ ३ ॥ मासिएणं भिक्खुपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स तओ गोयरकाला पण्णत्ता तंजहा आदिमे, मज्झिमे, चरिमे, आदिचरेज्जा, णो मज्झिमचरेज्जा, णो चरिमचरेज्जा, मज्झेचरेज्जा, णो आदिचरेज्जा णो चरिमचरेज्जा, चरिमेचरेज्जा णो आदिचरेज्जा णो मज्झिमचरेज्जा ॥ ४ ॥ मासियेणं भिक्खुपडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स छव्विहा गोयरचरिया

नहीं कल्पे, परंतु एक पांव घर की देहली के अंदर और एक पांव घर की देहली के बाहिर रखकर यों इस प्रकार देहली आरूढ होकर देवे तो प्रतिमा धारक साधु को वह आहार ग्रहण करना कल्पता है, और जो वह इस प्रकार होकर न देवे तो प्रतिमाधारी को ग्रहण करना नहीं कल्पता है ॥३॥ एक माहने की भिक्षु की प्रतिमा-प्रतिपन्न साधू को भिक्षा ग्रहण करने के तीन काल कहे हैं तद्यथा-१ आदि काल, २ मध्यम काल, और ३ अंतिम काल* इस में से प्रथम काल में भिक्षार्थ जाने वाला प्रतिमा धारी साधु दूसरे और तीसरे काल मे नहीं जावे, मध्यम काल में जाने वाले प्रथम और अन्तिम काल में नहीं जावे और अन्तिम काल में जाने वाला प्रथम और दूसरे काल में नहीं जावे ॥ ४ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा धारक साधु छ प्रकार से भिक्षा

---

* तीसरे प्रहर दिन के तीन बजे तक बजे, दो बजे और तीन बजे के तीन काल जानना

पण्णत्ता तंजहा पेला अद्धपेला, गामुत्तिया, पयंगविहिया, संबुकावट्टा, गंतुपच्चागया ॥ ५ ॥ मासियंणं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स जत्थणं केइ जाणइ कप्पइ से तत्थएगराई वसित्तए, जत्थेणं केइ न जाणइ कप्पइ से तत्थ एगराईंवा दुरायंवा वसित्तए, णो से कप्पइ एगरायाओवा दुरायाओवा परंवसइ, जं तत्थ एगराओवा पुराओवा परिवसति सेसंतरा छेदेवा परिहारेवा ॥६॥ मासिएणं भिक्खूपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स

ग्रहण करे यथा १ पूरी संदूक के आकार चारों कौने के चारों घर से भिक्षा ग्रहण करे २ आधी पेटी के आकार दो कौने के दो घर से भिक्षा आहार ग्रहण करे, ३ गौमुत्र के आकार एक घर इधर का एक सामे का फिर एक इधर का यों गोचरी करे, ४ पतंगिए के आकार कुदकर २ घरों से भिक्षा ५ शंखवर्तन के आकार एक घर ऊपर का एक घर नीचे का फिर ऊपर का फिर नीचे का इस प्रकार भिक्षा ग्रहण करे और ६ वलयाकार पंक्ति बंध घरों से अनुक्रम से भिक्षा ग्रहण करे ॥ ५ ॥ एक महिने की भिक्षु की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को कल्पता है कि जिसक्षेत्र में उनको कोई पहचाननेवाला हो उस ग्रामादि में एक ही रात्रि रहकर विहार कर जावे और जहां कोई पहचानवाला नहीं होवे वहां एक एक रात्रि तथा दो रात्रि रहकर आगे विहार कर जावे जो कदापि एक दो रात्रि से ज्यादा रहे तो वह दीक्षा के छेद का अथवा महारिक तप के प्रायश्चित का अधिकारी होता है ॥६॥

कप्पइ चउमासाओ भासित्तए तजहा जायणी, पुच्छणी, अण्णणमणी, पुट्ठस्स वागरणी ॥७॥ मासिएणं भिक्खु पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स कप्पइ तओ उवसया पडिलेहित्तए तंजहा—अहे आरामगिहंसिवा, अहे वियडगिहंसिवा, अहे रुक्खमूलगिहंसिवा ॥८॥ मासिएणं भिक्खूपडिम पडिवण्णस्स अणगारस्स कप्पइ ताओ उवसया अण्णुणवित्तए तंजहा--अहेआरामगिहंवा, अहेवियडगिहंवा, अहेरुक्खमूलगिहंवा ॥ ९ ॥

एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा धारन करनेवाले साधु को चार प्रकार की भाषा बोलना कल्पता है तद्यथा—१ आहार आदि की याचना करने के लिये बोले, २ शास्त्र व रास्ता पूछने के लिये बोले, ३ गुरु आदि की आज्ञा व स्थानकादि की आज्ञा ग्रहण करने बोले और ४ कोई प्रश्नादि पूछनेवाले को उत्तर देने को बोले ॥ ७ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को जिस स्थानक में रहे, वहां तीन जगह की प्रतिलेखना करना कल्पता है तद्यथा—१ आराम बगीचे में बंगला आदि के नीचे, २ मंडप छत्री आदि विकट स्थान के नीचे की और ३ वृक्ष के मूल की वृक्ष के नीचे की ॥८॥ एक महिने का भिक्षुक की प्रतिमा धारक साधु को तीन उपाश्रय की आज्ञा ग्रहण कर रखना कल्पता है तद्यथा-बगीचे का बंगलादि, २ स्मशान की छत्री आदि और ३ वन के वृक्षादि के नीचे यह जिस मालिक की

मासिएणं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स कप्पइ तओ उवस्सया उवायणावित्तए तंचिव ॥ १० ॥ मासिएणं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स कप्पइ तओ संथारगं पडिलेहित्तए तंजहा पुढविसिलंवा कट्ठसिलंवा अहासंथडमेव ॥ ११ ॥ मासिएणं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स इत्थीवा पुरिसेवा उवसयं उवागच्छेज्जा, स इत्थीवा पुरिसेवा णोसकप्पइ तंपडुच्च निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा ॥ १२ ॥ मासिएणं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स केइ उवसयं अगणिकाएण झामेज्जा, णो से कप्पइ तं पडुच्च निक्खमित्तए

पासही में हो उन की आज्ञा ग्रहण कर वहां निवास करे ॥ ९ ॥ एक महीने की भिक्षुकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को ऊपर कहे उन तीनों प्रकार के उपाश्रय में रहना निवास करना कल्पता है ॥ १० ॥ एक मासकी भिक्षुक की प्रतिमा ग्रहण किये साधु को तीन प्रकार के संथार (बिछोना) प्रतिलेखना करना कल्पता है उनके नाम-१ पृथ्वी शिला का पट, २ काष्ट का पटिया और ३ अथवा जिसप्रकार तैयार कर रखे हो वहां ॥ ११ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमाधारी साधु जिस स्थान में रहता हो वहां कोई स्त्री या पुरुष आवे तो उस के सन्मान के लिये उपाश्रय के बाहिर निकलना या उपाश्रय में प्रवेश करना नहीं कल्पता है ॥ १२ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु जिस उपाश्रय में रहते हों वहां कोई अग्निकाय [लाय] लगजावे, तो प्रतिमाधारी मुनि को अपना शरीर बचाने के लिये उस में से निकलना अन्य स्थान में प्रवेश

ग्रा पानिमित्तएत्रा तत्थण केइ त्रहाय गाहाय आगच्छे जात्र णो से कप्पइ तअत्लात्रएत्रा पत्लनित्तएत्वा, कप्पइ से आहारिय ।रयत्तए ॥ १३ ॥ मासियाण भिक्खुपडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स अहे पायंसि खाणुत्रा कटएत्रा हीरएत्रा कक्क रएत्रा अणुपवेसेज्जा णो से कप्पइ नीहारत्तए विसोहित्तएत्रा ॥ कप्पइ से अहारियरीयरएत्रा अणुपवेसेज्जा णो से कप्पइ नीहारित्तएत्रा विसोहित्तएत्रा, कप्पइ से अहारियरीयत्तए ॥ १४ ॥ मासियण भिक्खु पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स अत्थिसित्रा पाणाणित्रा चीयाणित्रा रएत्रा परियावज्जेज्जा, नो से कप्पइ नीहरित्तएत्रा, विसोहित्तएत्रा, कप्पइ से

करना नहीं कल्पता है परंतु वहां कोई मनुष्य मुनि को निकालने आवे मुनि की बांहा पकड कर खेंचे तो वे प्रतिमाधारी साधु उस गृहस्थ को पकड रखना उस को रोक रखना कल्पता नहीं है परंतु उस ही वक्त ईर्या समिति युक्त निकल कर बाहिर आना कल्पता है ॥ १३ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु के पांव नीचे (पगथली में) खीला कांटा तण-फांस कंकर इत्यादि प्रवेश करे [लग जावे] तो उस को पांव में से निकालना कल्पे नहीं, पांवको विशुद्ध निष्कंटक करना कल्पे नहीं, परंतु ईर्या समिती युक्त विहार करना कल्पता है ॥ १४ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को आंख में मच्छर प्राणी पडगया है मच्छरादिक पंचेन्द्रिय भा है बीज पडगया हो, रज धूल पड गई हो, इत्यादि आकर

आहारिय गेयचरं ॥१५॥ मासियण्णं भिक्खु पडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स जत्थेव सूरिए अत्थमेज्जा तत्थेव जलंसिवा थलंसिवा दुग्गंसिवा, निण्णंसिवा, पव्वयंसिवा, विसमंसिवा, गड्डाएवा दरीएवा कप्पइ से तं रयणी तत्थेव उवायणावित्तए, नोसे कप्पइ पदमवि गमित्तए कप्पइसेकल्लं पाउप्पभाए जाव जलंते पाइणाभिमुहस्सवा, दाहिणाभिमुहस्सवा पडीणाभिमुहस्सवा उत्तराभिमुहस्सवा आहारीयंरीयत्तए ॥१६॥

बदे दो तो इन्हें निकालना, आंखों को विशुद्ध करना कल्पता नहीं है, परन्तु ईर्यासमिती युक्त विचरना ॥१५॥ एक मासिकी भिक्षुकी प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को रास्ते चलते जिस स्थान सूर्य अस्त होजावे उस ही स्थान जल स्थान में (पानी के अंदर मकान बंधा हो वहां, तथा प्रथम जलाशय हो वह सूख कर उस के अगाध जलस्थान नाम हो वहां) स्थल-जमीन पर दुर्ग-भग्गी में, नीच स्थान-दरी आदि में, पर्वत के ऊपर, विषम स्थान में, खड्डे में, पर्वत की गुफा में, इत्यादि स्थान में अभिग्रहधारी को रात्रि रहना कल्पता है, परंतु सूर्य अस्त हुवे बाद एक पांव भी आगे गमन करना नहीं कल्पता है जब प्रात काल होवे सूर्य के प्रभा प्रसार करे जाज्वल्यमान सूर्योदय होवे तब पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर इन चारों दिशा में से इच्छा हो उस दिशा में ईर्या समिति युक्त विचरे ॥१६॥ एक महिने की भिक्षुकी प्रतिमा प्रतिपन्न

मासियण भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स णो से कप्पइ अणतरहियाए पुढवीए निद्दाइत्तएवा, पयलाइत्तएवा केवलीवूया आयाणमेय से तत्थ निद्दायमाणेवा पयलायमाणेवा हत्थेहि भूमिपरामूसेज्जा आहाविहिमेवठाण ठाइत्तए निक्खमित्तएवा उच्चार पासवणेण उव्वाहिज्जा, नो से कप्पइ उगिण्हित्तएवा, कप्पइ से पुव्व पडिलेहए थंडिले उच्चारपासवण परिट्ठवित्तए तमेव उवस्सय आगम आहाविधि ठाणठाइत्तए ॥१६॥ मासियण भिक्खु पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स नो से कप्पइ ससरक्खेणं

साधु को अन्तर रहित तत्काल की खोदी हुई मट्टी पर निद्रा लेना ऊंघना नहीं कल्पता है, क्यों कि केवल ज्ञानी का कहना है कि यह कर्मबन्ध का कारन है वह साधु वहां सूता हुवा ऊंघता हुवा हस्तादि अंगोपांग कर सचित्त पृथ्वी का स्पर्श करे-मर्दन करे, इस लिये दूसरा निर्जीव स्थानक देख कर रहे उस में प्रयोग करे निकले और वडीनीत लघुनीत की बाधा होवे तो उस को रोक रखना कल्पता नहीं है क्यों कि रोगादि की उत्पत्ति का कारण है इसलिये प्रथम प्रतिलेखन कर रखी हुई जो जगत होवे वहां जाकर लघुनीत वडीनीत की बाधा निवारे फिर पीछा जिस उपाश्रय में रहा उस उपाश्रय में आवे, आवागामन व परिठावन की क्रिया की निवृत्ति के वास्ते कायोत्सर्गादि करे ॥१६॥ एक महिने की भिक्षु की प्रतिमा प्रतिपन्न

आहारिय रीयत्तए ॥ १५ ॥ मासियण्णं भिक्खु पडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स जत्थेव सूरिए अत्थमेज्जा तत्थेव जलंसिवा थलंसिवा दुग्गंसिवा, निण्णंसिवा, पव्वयंसिवा, विसमंसिवा, गड्डाएवा दरीएवा कप्पइ से तं रयणी तत्थेव उवायणावित्तए, नो से कप्पइ पदमवि गमित्तए कप्पइ सेकल्लं पाउप्पभाए जाव जलंते पाइणाभिमुहस्सवा, दाहिणाभिमुहस्सवा पडीणाभिमुहस्सवा उत्तराभिमुहस्सवा आहारीयरीयत्तए ॥ १६ ॥

पेहे तो भी निकालना, आंखो को विशुद्ध करना कल्पता नहीं है, परन्तु इर्यासमिती युक्त विचरना ॥ १५ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को रास्ते चलते जिस स्थान सूर्य अस्त होजावे उस ही स्थान जल स्थान में (पानी के अंदर मकान बंधा हो वहां, तथा प्रथम जलाशय हो वह सूख कर उस के तलावादि जलस्थान नाम हो वहां) स्थल-जमीन पर दुर्ग भूमी में, नीच स्थान-दरी आदि में, पर्वत के ऊपर, विषम स्थान में, खड्डे में, पर्वत की गुफा में, इत्यादि स्थान में अभिग्रहधारी को रात्रि रहना कल्पता है, परंतु सूर्य अस्त हुवे बाद एक पांव भी आगे गमन करना नहीं कल्पता है जब प्रात:काल होवे सूर्य के प्रभा प्रसार करे जाज्वल्यमान सूर्योदय होवे तब पूर्व पश्चिम दक्षिण उत्तर इन चारों दिशा में से इच्छा हो उस दिशा में इर्या सामित युक्त विचरे ॥ १६ ॥ एक महिने की भिक्षुकी प्रतिमा प्रतिपन्न

भिक्खु पडिम पडिवण्णस्स अणगारस्स नो कप्पइ आसस्सवा हत्थिस्सवा गोणस्सवा महिसस्सवा कोलस्सवा सुणगस्सवा दुट्ठस्सवा वगस्सवा पुट्ठस्सवा आवियमागस्स पयमवि पच्चोसक्कित्तए, अदुट्ठस्सवा आवयमाणस्स कप्पइ जुगमित पच्चोसकित्तए॥ १९॥मासियण भिक्खु पडिमं पडिवन्न अणगारस्स णो से कप्पइ छायाओ सीयाति, णो उण्हातिइत्तए उण्हाए उण्हंति नो वायत्तए जं तत्थ जया सिया त तत्थ तहा अहियासेइ ॥२०॥

...मा मभर कुत्ता, व्याघ्र, सिंह आदि दुष्ट-क्रूर जीवों अथवा दुष्ट स्वभावी मनुष्यो जो सन्मुख आते हो ...न हो देखकर कि यह मुझे मारेंगे ऐसा भय लाकर पीछा फिरना या एक,पांव मात्र भी इधर उधर ...ना कल्पता नहीं है परंतु जिस प्रकार जिस मार्ग में जाता हो उस ही मार्ग में ईर्या समिती युक्त गमन ...र यदि पुनी जीव अदुष्ट हो वह कभी उन साधु को देखकर भयभीत होता हो भड़कर भगता हो ...ता उन साधु को जुग मात्र चार हाथ जमीन पीछे इधर उधर सरक जाना कल्पता है क्यों ...ि वह भड़ककर आगे अनेक उपद्रव करे उसे निवारने, दया के लिये तो सरके परंतु स्वतः के शरीर की ...रक्षा के लिये पीछा हटे नहीं ॥ १९ ॥ एक महिने की भिक्षु प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को छांया से धूप में जाना और धूप से छांया में जाना नहीं कल्पता है परतु जिस स्थान में शीत ताप रूप जो परिषह उत्पन्न होवे उसे समभाव से सहन करे ॥ २० ॥ अहो शिष्य ! उक्त विधी एक महिने की भिक्षुक की

पणहिं गाहावइ कुल भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्तए वा पविसित्तए वा अह पुण एवं जाणज्जा ससरक्खे स अत्तए वा जल्लताए वा मल्लताए वा पंकताए वा विद्धत्थे से कप्पइ गाहावइकुल भत्ताए वा पाणाए वा निक्खमित्त वा पविसित्तए वा ॥ १७ ॥ मासियणं भिक्खु पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स नो से कप्पइ सीउदगवियडेणवा उसिणोदग वियडणवा हत्थाणिवा पायाणिवा दताणिवा अच्छीणिवा मुहाणिवा उच्छोलीत्तएवा पधोइत्तएवा णण्णत्थ लेवालेवेणवा भत्तमासेणवा॥ १८ ॥ मासियणं

साधु का बाहिर जाकर या विहार करके आये हो वैसे ही सचित्त रज [धूल] से भरे हुवे पावों कर गृहस्थ के घर में आहार पानी ग्रहण करने के लिये प्रवेश करना निकलना कल्पता नहीं है, परंतु बाहिर से आये बाद ऐसा जानने में आवे कि वे सचित्त रज कर भरे हुवे पाँवों पसीने कर मैल करकर्दमादि कर रस के जीव विध्वंस होगये हैं तो फिर गृहस्थ के घर में आहार पानी के लिये प्रवेश करना निकला कल्पता है ॥ १७ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को ठंडे अचित्त पानी कर गरम अचित्त पानी कर हाथ, पांव, दांत, आंख मुख पखालना धोना नहीं कल्पता है परंतु इतना विशेष जो अन्य वस्तु अर्थात् अशुची आदि कर जो अंगोपांग भरा हो तो उसे दूर करे, तथा भोजन किये बाद हाथ मुखादि शुद्ध करना कल्पता है॥१८॥ एकमहिनेकी भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधुको घोडा, हाथी, बैल,

भिक्खु पडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स नो कप्पइ आसस्सवा हत्थिस्सवा गोणस्सवा महिसस्सवा कालस्सवासुणगस्सवा पुट्ठस्सवा वग्घस्सवा पुट्ठस्सवा आवियमाणस्स पयमवि पच्चोसक्कित्तए, अदुट्ठस्सवा आवयमाणस्स कप्पइ जुगमित्त पच्चोसक्कित्तए॥ १९॥मासियण भिक्खु पडिमं पडिवन्न अणगारस्स णो से कप्पइ छायाओ सीयंति, णो उण्हातिइत्तए उण्हाए उण्हंति नो छायंचए जं तत्थ जया सिया त तत्थ तहा अहियासेइ ॥२०॥

घोडा भैस, कुत्ता, व्याघ्र, सिंह आदि दुष्ट-क्रूर जीवों अथवा दुष्ट स्वभावी मनुष्यो जो सन्मुख आते हो उन को देखकर कि यह मुझे मारेंगे ऐसा भय लाकर पीछा फिरना या एक पांव मात्र भी इधर उधर जाना कल्पता नहीं है परंतु जिस प्रकार जिस मार्ग में जाता हो उस ही मार्ग में ईर्या समिती युक्त गमन करे यदि दुष्ट जीव भद्रक हो यह कभी उन साधु को देखकर भयभीत होता हो भडकर भगता हो तो उन साधु को जुग मात्र चार हाथ जमीन पीछे इधर उधर सरक जाना कल्पता है क्यों कि वह भयङ्कर भागे अनेरा उपद्रव करे उसे निवारने, दया के लिये तो सरके परंतु स्वत के शरीर की रक्षा निमित्ते पीछा हटे नहीं ॥ १९ ॥ एक महिने की भिक्षु प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को छाया से धूप में जाना और धूप से छाया में जाना नहीं कल्पता है परंतु जिस स्थान में शीत ताप रूप जो परिषह उत्पन्न होवे उसे समभाव से सहन करे ॥ २० ॥ अहो शिष्य ! उक्त विधी एक महिने की भिक्षु की

पणाई गाहावइकुलं भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा अह पुण
एवं जाणज्जा ससरक्खस्स अचएत्ता जल्लत्ताएवा मल्लत्ताएवा पंकत्ताएवा विद्धत्थे से
कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा ॥ १७ ॥
मासियण भिक्खु पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स नो से कप्पइ सीउदगवियडेणवा
उसिणोदग वियडेणवा हत्थाणिवा पायाणिवा दंताणिवा अच्छीणिवा मुहाणिवा
उच्छोलित्तएवा पधोइत्तएवा णण्णत्थ लेवालेवेणवा भत्तमासेणवा॥ १८ ॥ मासियणं

साधु को बाहिर जाकर या विहार करके आये हो वैसे ही सचित्त रज [धूल] से भरे हुवे पावों कर गृहस्थ के घर में आहार पानी ग्रहण करने के लिये प्रवेश करना निकलना कल्पना नहीं है, परंतु बाहिर से आये बाद ऐसा मालूम में आवे कि वे सचित्त रज कर भरे हुवे पांवों पसीने कर मैल कर कर्दमादि कर रस के जीव विध्वंस होगये हैं तो फिर गृहस्थ के घर में आहार पानी के लिये प्रवेश करना निकलना कल्पता है ॥ १७ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को ठंडे अचित्त पानी कर गरम अचित्त पानी कर हाथ, पांव, दांत, आंख मुख पखालना धोना नहीं कल्पता है परंतु इतना विशेष जो अलेप वस्तु अर्थात् अशुची आदि कर जो अंगोपांग भरा हो तो उसे दूर करे, तथा भोजन किये बाद हाथ मुखादि शुद्ध करना कल्पता है॥१८॥ एकमहिनेकी भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधुको घोडा, हाथी, बैल,

जिणदु पविसे पविसंतस्स अणगारस्स ॥ कप्पइ आरारसाण हलिरसाण गोणरसाण
महिरसाण ॥ फा॰ रसाणजुणमरसाण पुत्ररसाण गमरसाण पुत्ररसाण अणिगमा मरस पगाणि
पसाराफिसण अपुत्ररसाण आगमाणरस कप्पइ जुगमिरो पसोराफिसाण १ १ आगारिगणो
जिणदु पविसे पविसंत अणगारस्स जो से कप्पइ रसाणाओ रीगति, जो उणतरीइ समण
उणाणु उणतित जो मागमणु उ तरण अणा रिगा रो तरण राण अतिगारोइ ॥ २० ॥

भला शकर कुशा, क्वाथ, तिल पानी तुष कुर चाँवों पाणा तुष स्वभाली भाजुणो जो सामुख पाते वो ॥ ॥ समस्त कि यह पुष्ट भाँगे ऐसा भय आकर पीना किसना या पक्वान्न आम भी इधर उधर ॥ ॥ कल्पता नहीं है परंतु जिस प्रकार घर मार्ग में आता हो उस ही मार्ग में ईर्या समिति पूर्वक गमन ॥ पानि पुष्टि और भक्ष्य को वह कभी उस साधु का दयाकर भगवान होता वो नहकर भगता वो ॥ जब साधु का पुण भाषमार राग आगीर पीछे इधर उधर सर्व आता कल्पता है. क्यों ॥ यह भक्तकर भाग भ रत उपाय करे यदि जिमारो, तथा क लिये सो सकते परंतु स्थता के शरीर को ॥ जिसे पीना हो नहीं ॥ १९ ॥ एक गांव में को जिन प्रतिमा प्रतिमा साधु को सोगा ते धूप में ॥ ॥ और धूप से छाया में आना नहीं कल्पता है. परन्तु जिस स्थान में शीत ताप कम जो परिषह उत्पन्न होय उ समभाव से सहन करे ॥ २० ॥ यथा जिन । यह किसी एक गांव को निशक को

त्यंति गाहावइ कुलं भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्तएवा पविसित्तएवा अह पुण एवं जाणज्जा ससरक्खस्स अत्तएणं जल्लत्ताएवा मलत्ताएवा पंकत्ताएवा विद्धत्थे से कप्पइ गाहावइकुलं भत्ताएवा पाणाएवा निक्खमित्त वा पविसित्तएवा ॥ १७ ॥ मासियणं भिक्खु पडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स नो से कप्पइ सीओदगवियडेणवा उसिणोदग वियडेणवा हत्थाणिवा पायाणिवा दंताणिवा अच्छीणिवा मुहाणिवा उच्छोलित्तएवा पधोइत्तएवा णण्णत्थ लेवालेवणवा भत्तमासणवा॥ १८ ॥ मासियणं

साधु का बाहिर आकर या विहार करके आये हो वैसे ही सचित्त रज [धूल] से भरे हुवे पाँवों कर गृहस्थ के घर में आहार पानी ग्रहण करने के लिये प्रवेश करना निकलना कल्पना नहीं है, परंतु बाहिर से आये बाद ऐसा मालूम में आवे कि वे सचित्त रज कर भरे हुवे पाँवों पसीने कर मैल कर कर्दमादि कर रज के जीव विध्वंस होगये हैं तो फिर गृहस्थ के घर में आहार पानी के लिये प्रवेश करना निकलना कल्पता है ॥ १७ ॥ एक महिने की भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधु को ठंढ अचित्त पानी कर गरम अचित्त पानी कर हाथ, पाँव, दांत, आँख मुख प्रक्षाल्ना धोना नहीं कल्पता है परन्तु इतना विशेष जो अन्य वस्तु अर्थात् अशुची आदि कर जो अंगोपांग भरा हो तो उसे दूर करे, तथा भोजन किये बाद हाथ मुखादि शुद्ध करना कल्पता है॥१८॥ एकमासिकी भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न साधुको घोड़ा, हाथी, भैंस,

पंचमासिया जाव पंचदत्तीओ छम्मासिया जाव छदत्तीओ॥सत्तमासिया जाव सत्तदत्तीओ ॥ जेजत्थिया मासिया तेतत्थिया दत्तीधाओ ॥२२॥ पढमासत्त राइंदियाणि भिक्खु पडिम पडिवण्णस्स अणगारस्स निच्च वोसट्टकाए जाव अहियासेइ, कप्पइसे चउत्थेण भत्तेणं अप्पाणएण बहिया गामस्सवा नगरस्सवा जाव रायहाणीएवा उज्जाणगस्सवा पासेल्लगस्सवा नसज्जियस्सवा, ठाणठाइत्तए,तत्थ दिव्वमाणुस्स तिरिक्खजोणिया उवसग्गा समुप्पज्जेज्जा

पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही छ मास की छठी प्रतिमा में छ दात आहार की और छ दात पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही सात महिने की सातवी प्रतिमा में सात दात आहार की और सात दात पानी की ग्रहण करे यह तीसरी से सातवी प्रतिमा तक तो प्रत्येक प्रतिमा एकेक महिने की होती है और एकेक दात की वृद्धि की गई है ॥ २२ ॥ अब पहिली प्रतिमा सात अहोरात्रि की जो उस को प्रतिपन्न हुवे साधु सदैव शरीर को वोसीराकर निर्ममत्व रहते हैं, यों एकमासकी भिक्षुक प्रतिमामें कही वह सब विधि यहां करना यावत परिषह उपसर्ग जो उत्पन्न होते हैं वे सब समभाव से सहन करते हैं और चौवीहार अर्थात् पानी का भी त्याग कर एकान्तर उपवास करते हैं ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर रहते हैं (दिन को सूर्य की आतापना लेते हैं और रात्रि को तीन प्रकार के आसन करते है तद्यथा—१ चित्ते सोते रहें २ एक ही तरफ लेटे सोते रहें या सब रात्रि कायोत्सर्ग कर बैठे रहते हैं उस वक्त जो उनको

एवं खलु एगमासिया भिक्खु पडिमा अहासुत्त अहाकप्प अहामग्ग अहातच्चं सम्मंकाएण फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता किट्टित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालेत्ता भवति ॥ २१ ॥ दो मासियाणं भिक्खु पडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चंवोसट्ठकाए जाव दो दत्ती ॥ तिमासियं तिन्निदत्तीओ ॥ चउमासिया जाव चत्तारिदत्तीओ ॥ पंच

प्रतिमा आराधने काम साधु की कही उसे सूत्र में कही विधी प्रमाने साधु के आचार-कल्प प्रमाने जो जिन मार्ग की व साधुधर्म की रीति है उस प्रमाने जिस प्रकार भगवंतने कही है उस प्रमाने यथातथ्य सम्यक प्रकार से अपनी काया करके स्पर्शे उपयोग युक्त पालनकरे, अतिचार नहीं लगने देवे शुद्ध करे जिस भाव से ग्रहण की उस ही भाव से पार पहोंचावे, कीर्ति युक्त आराधे पाले इस प्रकार आराधन कर जिनाज्ञा का अनुपालक होवे॥ इति प्रथम पडिमा प्रतिज्ञा विधी॥२१॥ अब दो महिने की साधु की प्रतिमा पडिवज्ज हुवे साधु सदैव अपने शरीर को वोसीराकर अर्थात शरीर की ममत्वका त्यागकर यावत् दो दाति आहारकी और दो दाति पानीकी ग्रहणकरे और विधी सब पूर्वोक्त एक महिनेकी प्रतिमा जैसी ही जानना तीन महिने की प्रतिमा की विधि भी ऐसी ही जानना जिस में इतना विशेष तीन दाति आहार की तीन दाति पानी की ग्रहण करे ऐसे ही चौथी चार महिने की प्रतिमा में चार दाति आहार की और चार दाति पानीकी ग्रहणकरे ऐसे ही पांचवी पांच मासकी प्रतिमा में पांच दात आहारकी और पांच दात

पेन्नमासिया जाव पचदत्तीओ छम्मासिया जाव छदत्तीओ॥सत्तमासिया जाव सत्तदत्तीओ ॥ जेजश्चिया मासिया तेतश्चिया दत्तीयाओ ॥२२॥ पढमासत्त राइंदियाणि भिक्खु पडिम पडिवण्णस्स अणगारस्स निच्च वोसट्ठकाए जाव अहियासेइ, कप्पइसे चउत्थेण भत्तेणं अप्पाणएण बहिया गामस्सवा नगरस्सवा जाव रायहाणीएवा उत्ताणगस्सवा पासेल्लगस्सवा नसज्जियस्सवा, ठाणठाइचए तत्थ दिव्वमाणुस्स तिरिक्खजोणिया उवसग्गा समुप्पज्जेज्जा

पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही छ मास की छठी प्रतिमा में छ दात आहार की और छ दात पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही सात महिने की सातवी प्रतिमा में सात दात आहार की और सात दात पानी की ग्रहण करे यह तीसरी से सातवी प्रतिमा तक तो प्रत्येक प्रतिमा एकेक महिने की होती है और एकेक दात की वृद्धि की गई है ॥ २२ ॥ अथ पहिली प्रतिमा सात अहोरात्रि की जो उस को प्रतिपन्न हुवे साधु सदैव शरीर को वोसीराकर निर्ममत्व रहते हैं, यों एकमासकी भिक्षुक प्रतिमामें कही वह सब विधि यहां करना यावत परिषह उपसर्ग जो उत्पन्न होते हैं वे सब समभाव से सहन करते हैं और चौवीहार अर्थात् पानी का भी त्याग कर एकान्तर उपवास करते हैं ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर रहते हैं (दिन को सूर्य की आतापना लेते हैं और रात्रि को तीन प्रकार के आसन करते है तथया—१ चित्ते सोते रहें २ एक ही तरफ लेटे सोते रहें या सब रात्रि कायोत्सर्ग कर बैठे रहते हैं उस वक्त जो उनको

एवं खलु एगमासिया भिक्खु पडिमा अहासुत्त अहाकप्प अहामग्ग अहातच्च सम्मकाएण फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता कीटित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालेत्ता भवति ॥ २१ ॥ दो मासियाण भिक्खु पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चंवोसट्ठकाए जाव दो दत्ती ॥ तिमासिय तिन्निदत्तीओ ॥ चउमासिया जाव चत्तारिदत्तीओ ॥ पंच

प्रतिमा आराधने वाले साधु की कही उसे सूत्र में कही विधी प्रमाने साधु के आचार-कल्प प्रमाने जो जिन मार्ग की य साधुधर्म की रीति है उस प्रमाने जिस प्रकार भगवंतने कही है उस प्रमाने यथातथ्य सम्यक् प्रकार से अपनी काया करके स्पर्शे उपयोग युक्त पालनकरे, अतिचार नहीं लगने देवे शुद्ध करे, जिस भाव से ग्रहण की उस ही भाव से पार पहोंचावे, कीर्ति युक्त आराधे पाले इस प्रकार आराधन कर जिनाज्ञा का अनुपालक होवे॥ इति प्रथम पडिमा-प्रतिज्ञा विधी॥२१॥ अथ दो महिने की साधु की प्रतिमा पतिपन्न हुवे साधु सदैव अपने शरीर को वोसीराकर अर्थात् शरीर की ममत्वका त्यागकर यावत् दो दाति आहारकी और दो दाति पानीकी ग्रहणकरे और विधी सब पूर्वोक्त एक महिनेकी प्रतिमा जैसी ही जानना तीन महिने की प्रतिमा की विधि भी ऐसी ही जानना जिस में इतना विशेष तीन दाति आहार की तीन दाति पानी की ग्रहण करे ऐसे ही चौथी चार महिने की प्रतिमा में चार दाति आहार की और चार दाति पानीकी ग्रहणकरे ऐसे ही पांचवी पांच मासकी प्रतिमा में पांच दात आहारकी और पांच दात

पंचमासिया जाव पचदत्तीओ छम्मासिया जाव छदत्तीओ॥सत्तमासिया जाव सत्तदत्तीओ ॥ जेत्तिया मासिया तेत्तिया दत्तीयाओ ॥२२॥ पढमासत्त राइंदियाणि भिक्खु पडिमं पडिवण्णस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठकाए जाव अहियासेइ, कप्पइसे चउत्थेण भत्तेणं अप्पाणएण बहिया गामस्सवा नगरस्सवा जाव रायहाणीएवा उत्ताणगस्सवा पासेल्लगस्सवा नेसज्जियस्सवा, ठाणठाइयए,तत्थ दिव्वमाणुस्सतिरिक्खजोणिया उवसग्गा समुप्पज्जेज्जा

पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही छ मास की छट्ठी प्रतिमा में छ दात आहार की और छ दात पानी की ग्रहण करे, ऐसे ही सात महिने की सातवी प्रतिमा में सात दात आहार की और सात दात पानी की ग्रहण करे यह तीसरी से सातवी प्रतिमा तक वो प्रत्येक प्रतिमा एकेक महिने की होती है और एकेक दात की वृद्धि की गई है ॥ २२ ॥ अब पहिली प्रतिमा सात अहोरात्रि की जो उस को प्रतिपन्न हुवे साधु सदैव शरीर को वोसीराकर निर्ममत्व रहते हैं, यों एकमासकी भिक्षुक प्रतिमामें कही वह सब विधि यहां कहना यावत् परिषह उपसर्ग जो उत्पन्न होते हैं वे सब समभाव से सहन करते हैं और चोवीहार अथात पानी का भी त्याग कर एकान्तर उपवास करते हैं ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर रहते हैं (दिन को सूर्य की आतापना लेते हैं और रात्रि को तीन प्रकार के आसन करते हैं तद्यथा—१ चित्ते सोते रहें २ एक ही तरफ ऐसे सोते रहें या सब रात्रि कायोत्सर्ग कर बैठे रहते हैं उस वक्त जो उनको

एवं खलु एमा मासिया भिक्खु पडिमा अहासुत्त अहाकप्पं अहामग्ग अहातच्चं सम्मकाएण फासित्ता पालित्ता सोहित्ता तीरित्ता कीटित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालेत्ता भवति ॥ २१ ॥ दो मासियाण भिक्खू पडिम पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चंवोसट्ठकाए जाव दो दत्ती ॥ तिमासिय तिन्निदत्तीओ ॥ चउमासिया जाव चत्तारिदत्तीओ ॥ पंच

प्रतिमा आराधने वाले साधु को कही उस सूत्र में कही विधी प्रमाने साधु के आचार-कल्प प्रमाने जो जिन मार्ग की व साधुधर्म की रीति है उस प्रमाने जिस प्रकार भगवंतने कही है उस प्रमाने यथातथ्य सम्यक प्रकार से अपनी काया करके स्पर्शे उपयोग युक्त पालनकरे, अतिचार नहीं लगने देवे शुद्ध करे, जिस भाव से ग्रहण की उस ही भाव से पार पहोंचावे, कीर्ति युक्त आराधे पाले इस प्रकार आराधन कर जिनाज्ञा का अनुपालक होवे। इति प्रथम पडिमा प्रतिज्ञा विधी॥२१॥ अब दो महिने की साधु की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु सदैव अपने शरीर को वोसीराकर अर्थात् शरीर की ममत्वका त्यागकर यावत् दो दाति आहारकी और दो दाति पानीकी ग्रहणकरे और विधी सब पूर्वोक्त एक महिनेकी प्रतिमा जैसी ही मानना तीन महिने की प्रतिमा की विधि भी ऐसी ही मानना जिस में इतना विशेष तीन दाति आहार की तीन दाति पानी की ग्रहण करे ऐसे ही चौथी चार महिने की प्रतिमा में चार दाति आहार की और चार दाति पानीकी ग्रहणकरे ऐसे ही पांचवी पांच मासकी प्रतिमा में पांच दात आहारकी और पांच दात

यसवा लगडाइयस्सवा उक्कडुयस्सवा ठाण ठाइत्तए सेसं तंचेव जाव आणाए अणुपालेत्ता भवइ॥ २४ ॥ एवं तथा सत्तराइदियावि भवति तंचेव णवरं गोदोहियाएवा, वीरासणियस्सवा अंबखुज्जियस्सवा ठाणठाइत्तए, सेस तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवति ॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियावि णवरं छट्ठेण भत्तेण अपाणएण बहिया गामस्सवा

का तीन प्रकार के आसन करे उन के नाम—१ दंडासन दंड की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व बाहा कर खडा रहे २ लगडासन बांके लकड की तरह पांवों की एडी और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को लगा सब शरीर अधर रख रहे ३ उकडु आसन-दोनों घुन्ने के बीच मस्तक को स्थापे दोनों घुन्न मस्तक से ऊपर निकले हुवे, इस प्रकार ध्यानस्त रहे शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आज्ञा का अनुपालक होवे रहे यह नववी प्रतिमा ॥ २४ ॥ ऐसे ही दूसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की जिस में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे तद्यथा—१ गादूहे आसन-गाय का दूध दोने के लिए जिस प्रकार पांवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पांव जमीन पर रख पाट पर बैठ पट पाट निकाल ले उस ही आसनसे रहे, और ३ अंबखुजासन अम्बफल की तरह किसी खूंटी आदि का अवलम्बन कर सब शरीर को अधर रखकर रहे शेष तैसे ही यावत् आज्ञा का अनुपालक होवे यह दशवी प्रतिमा २५॥ ऐसे ही इग्यारवी अहोरात्रि की प्रतिमा जानना जिस में इतना विशेष-छट्टभक्त(बेले)का तप करे बेले के दिन

नण उवसग्गा पयनिज्जवा पवेडज्जा नो से कप्पइ पयञ्छिसएवा पवडिचएवा ॥ मत्थ उच्चार पासवण उवाहिज्जा, नो स कप्पइ उच्चार पासवण उगिण्हेत्तएवा ॥ कप्पइ स पुव्व पडिलेहियंसि थंडिलसि उच्चारपासवण परिठाविचए, अहाविहिमेव ठाणठ्ठाइत्तएवा, एव खलु एसा पढमा सत्तराइदिया भिक्खु पडिमा, आहासुत्त जाव आणाए अणुपालेत्ता भवंति ॥ ॥ २३ ॥ एवं दोच्चा सत्तराइदियावि, णवर दंडाइ

ा सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी या तिर्यंच सम्बन्धी उपसर्ग उत्पन्न होवे उन उपसर्ग से डरकर स्वस्थान से चलायमान नहीं होवें जिस प्रकार कायोत्सर्ग कर रहे हैं उस कायोत्सर्ग को पारे नहीं इस प्रकार आसनसे चलना और कायोत्सर्ग का पारना उन प्रतिमा धारिको कल्पता नहीं है जो उनको बडीनीत लघुनीत की बाधा होवे तो उस को रोकनी भी नहीं कल्पता किन्तु प्रथम जो भूमिका प्रतिलेख कर रखीहो उस स्थान बडी नीत लघुनीत की बाधा से निवर्तन होवे,उसे परिठावे,उस से निवर्तने बाद प्रथम जिस आसन से कायोत्सर्ग र संस्थित थे उस ही आसन से संस्थित होवे इस प्रकार सात अहोरात्रि पर्यंत करे यह प्रथम सात अहो रात्रिकी आठवी प्रतिमा मानना, इसे सूत्रोक्त विधी प्रमाने आराधे यावत् जिनाज्ञा का अनुपालक आराधक होवे, यह आठवी प्रतिमा ॥ २३ ॥ इस प्रकार ही, दूसरी सात अहोरात्रि की प्रतिमा उस मे इतना विशेष रात्रि

यस्सवा लगडाइयस्सवा उघाडुयस्सवा ठाण ठाइचए सेसं तंचेव जाव आणाए अणुपालचा भवइ॥ २४ ॥ एवं तच्चा सत्तराइदियावि भवति, तचेव णवरं गोदोहियाएवा, वीरासणियस्सवा, अंबखुज्जियस्सवा ठाणठाइचए, सेस तंचेव जाव अणुपालेचा भवति ॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियावि णवरं छट्ठेण भत्तेण अपाणएण बाहिया गामस्सवा

का तीन प्रकार के आसन करे उन के नाम—१ दंडासन दंड की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व बाहा कर खडा रहे २ लगडासन बांके लकड की तरह पांवों की एडी और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को लगा सब शरीर अधर रख रहे ३ उकड आसन-दोनों घुटने के बीच मस्तक को स्थापे दोनों घुटने मस्तक से ऊपर निकले हुवे, इस प्रकार ध्यानस्त रहे शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आज्ञा का अनुपालक होवे रहे यह नववी प्रतिमा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की जिस मे इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे तद्यथा—१ गादुहि आसन-गाय का दूध दोने के लिए जिस प्रकार पांवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पांव जमीन पर रख पाट पर बैठे बाद पाट निकाल ले उस ही आसनसे रहे, और ३ अंबखुजासन आम्रफल की तरह किसी खूंटी आदि का अवलम्बन कर सब शरीर को अधर रखकर रहे शेष तैसे ही यावत् आज्ञा का अनुपालक होवे यह दशवी प्रतिमा २५॥ ऐसे ही इग्यारवी अहोरात्रि की प्रतिमा जानना जिस में इतना विशेष-छट्टभक्त(बेले)का तप करे बेले के दिन

तण उवसग्गा पयनिज्जवा पवडेज्जश ना से कप्पइ पयच्छिचएश पवडिचएचा ॥ तत्थ उचार पासवण उवाहिज्जा नो से कप्पइ उचार पासवण उगिण्हेत्तएचा ॥ कप्पइ से पुव्व पडिलेहियसि थडिलंसि उचारपासवण परिठाविचए, अहाविहिमेव ठाणट्ठाइचएचा, एव खलु एसा पढमा सत्तराइदिया भिक्खु पडिमा, आहासुत्त जाव आणाए अणुपालेचा भवंति ॥ ॥ २३ ॥ एव दोचा सत्तराइदियावि, णवर दंडाइ

रग सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी या तिर्यच सम्बन्धी उपसर्ग उत्पन्न होवे उन उपसर्ग से डरकर स्वस्थान से चलायमान नहीं होवें जिस प्रकार कायोत्सर्ग कर रहे हैं उस कायोत्सर्ग को पारे नहीं इस प्रकार आसन से चलना और कायोत्सर्ग का पारना उन प्रतिमा धारिको कल्पता नहीं है जो उनको बडीनीत लघुनीत की बाधा होवे तो उस को रोकनी भी नहीं कल्पता किन्तु प्रथम जो भूमिका प्रतिलेख कर रखीहो उस स्थान बडी नीत लघुनीत की बाधा से निवर्तन होवे, उसे परिठावे, उस से निवर्तने बाद प्रथम जिस आसन से कायोत्सर्ग कर संस्थित थे उस ही आसन से संस्थित होवे इस प्रकार सात अहोरात्रि पर्यंत करे यह प्रथम सात अहो रात्रिकी आठवी प्रतिमा मानना, इसे सूत्रोक्त विधी प्रमाने आराधे यावत् जिनाज्ञा का अनुपालक आराधक होवे, यह आठवी प्रतिमा ॥ २३ ॥ इस प्रकार ही, दूसरी सात अहोरात्रि की प्रतिमा उस मे इतना विशेष रात्रि

यम्मरा त्गडाइयस्सरा उघाडुयस्सरा ठाणं ठाइत्तए सेस तंचेव जाव आणाए अणुपालेत्ता भवइ॥ २४ ॥ एवं तथा सत्तराइदियावि भवति, तचेव णवरं गोदोहियाएवा, वीरासणियस्सरा अंबखुज्जियस्सरा ठाणठाइत्तए, सेस तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवति ॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियावि णवरं छट्ठेण भत्तेण अपाणएण बाहिया गामस्सवा

का तीन प्रकार के भासन करे उन के नाम—१ दंडासन दंड की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व बाहा कर खडा रहे २ लगंडासन वांके लकड की तरह पांवों की एडी और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को लगा सब शरीर अधर रख रहे ३ उकडु आसन-दोनों घुटने के वीच मस्तक को स्थापे दोनों घुटने मस्तक से ऊपर निकले हुवे, इस प्रकार ध्यानस्त रहे शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आज्ञा का अनुपालक होते रहे यह नववी प्रतिमा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की जिस में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के भासन करे तद्यथा—१ गोदुहासन-गाय का दूध दोने के लिए जिस प्रकार पांवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पांव जमीन पर रख पाट पर बैठे रह पाट निकाल ले उस ही आसनसे रहे, और ३ अंबखुजासन अम्बफल की तरह किसी खुंटी आदि का अवलम्बन कर सब शरीर को अधर रखकर रहे शेष तैसे ही यावत् आज्ञा का अनुपालक होवे यह दशवी प्रतिमा २५॥ ऐसे ही इग्यारवी अहोरात्रि की प्रतिमा जानना जिस में इतना विशेष-छट्टभक्त(बेले)का तप करे बेले के दिन

नण उवसग्गा पयाविज्जवा पवडेज्जश नो से कप्पइ पयच्छिचएवा पवडिचएवा ॥ तथ उच्चार पासवण उवाहिज्जा, नो से कप्पइ उच्चार पासवण उगिण्हेचएश ॥ कप्पइ स पुव्व पडिलेहियंसि थंडिलंसि उच्चारपासवण परिठाविचए, अहाविहिमेव ठाणट्ठाइत्तए्वा, एव खलु एसा पढमा सत्तराइदिया भिक्खु पडिमा, आहासुत्त जाव आणाए अणुपालेत्ता भवति ॥ ॥ २३ ॥ एवं दोच्चा सत्तराइदियावि, णवरं दडाइ

देता सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी या तिर्यंच सम्बन्धी उपसर्ग उत्पन्न होवे उन उपसर्ग से डरकर स्वस्थान से चलायमान नहीं होवें जिस प्रकार कायोत्सर्ग कर रहे हैं उस कायोत्सर्ग को पारे नहीं इस प्रकार आसन से चलना और कायोत्सर्ग का पारना उन प्रतिमा धारिको कल्पता नहीं है जो उनको बडीनीत लघुनीत की बाधा होवे तो उस को रोकनी भी नहीं कल्पता किन्तु प्रथम जो भूमिका प्रतिलेख कर रखी हो उस स्थान बडी नीत लघुनीत की बाधा से निवर्तन होवे उसे परिठावे, उस से निवर्तने बाद प्रथम जिस आसन से कायोत्सर्ग कर संस्थित थे उस ही आसन से संस्थित होवे इस प्रकार सात अहोरात्रि पर्यंत करे यह प्रथम सात अहो रात्रिकी आठवी प्रतिमा जानना, इसे सूत्रोक्त विधी प्रमाने आराधे यावत् जिनाज्ञा का अनुपालक आराधक होवे, यह आठवी प्रतिमा ॥ २३ ॥ इस प्रकार ही, दूसरी सात अहोरात्रि की प्रतिमा उस मे इतना विशेष रात्रि

यस्सवा लगडाइयस्सवा उधाडुयस्सवा ठाण ठाइत्तए सेस तंचेव जाव आणाए अणुपालित्ता भवइ॥ २४ ॥ एवं तच्चा सत्तराइदियानि भवति तचेव णवरं गोदोहियाएवा, वीरासणियस्सवा अंबखुज्जियस्सवा ठाणंठाइत्तए, सेस तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवति ॥ २५ ॥ एवं अहोराइदियानि णवरं छट्ठेणं भत्तेण अपाणएण बहिया गामस्सवा

का तीन प्रकार के आसन करे उन के नाम—१ दंडासन दंड की तरह प्रलम्ब ऊर्ध्व बाहा कर खडा रहे २ लगडासन बांके लकड की तरह पांवों की एडी और मस्तक का शिखा [चोटी] स्थान जमीन को लगा सब शरीर अधर रख रहे ३ उकडू आसन-दोनों गुड्ने के बीच मस्तक को स्थापे दोनों गुड्न मस्तक से ऊपर निकले हुवे, इस प्रकार ध्यानस्थ रहे शेष विधि पूर्वोक्त प्रकार जानना यावत् आज्ञा का अनुपालक होते रहे यह नववी प्रतिमा ॥ २४ ॥ ऐसे ही तीसरी प्रतिमा भी सात अहो रात्रि की जिस में इतना विशेष रात्रि को तीन प्रकार के आसन करे यथा—१ गोदूह आसन-गाय का दूध दोहने के लिए जिस प्रकार पांवों पर बैठते हैं वैसे बैठे रहे २ वीरासन-पांव जमीन पर रख पाट पर बैठे रह पाट निकाल ले उस ही आसनसे रहे, और३ अंबखुजासन अम्बफल की तरह किसी खूंटी आदि का अवलम्बनकर सब शरीर को अधर रखकर रहे शेष तैसे ही यावत् आज्ञा का अनुपालक होने यह दशवी प्रतिमा २५॥ ऐसे ही इग्यारवी अहोरात्रि की प्रतिमा जानना जिस में इतना विशेष-छट्टभक्त(बेले)का तप करे बेले के दिन

जाव रायहाणिस्सवा, ईसिं दोवि पाए साहट्टु वग्घारिय पाणिस्स ठाणं ठाइत्तए, सेसं तंचेव जाव अणुपालेत्ता भवइ ॥ २१ ॥ एग राइयण्णं भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्चं वोसट्ठकाएणं जाव अहियासेइ, कप्पइसे अट्ठमेणं भत्तेणं अपाणएणं बहिया गामस्सवा जाव रायहाणिस्सवा ईसिंपब्भारगएणं काएणंवा एगपोग्गलगयाए दिट्ठीए अणिमिसिनयणे अहापणिहिएहिं गाएहिं सव्विंदिएहिं गुत्ते दोविपाए साहट्टु,

ग्रामादि के बाहिर कुछ अन्तर से ध्यानस्थ रहे (आगे ८अंगुल पीछे ४अंगुल अन्तर रख) पांव एकत्रकर दोनों हाथ लम्बे रख शरीरके आश्रयबिना अधर रख कायुत्सर्ग करे शेष विधि वैसे ही जानना यावत् आज्ञाका अनुपालक होवे यह ग्यारवी प्रतिमा॥२८॥ बारवी भि० एक रात्रि और दिनकी भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु शरीर का ममत्व का त्यागकर यावत् सर्व परिषह सम्यक् प्रकार से सहन करते हुवे अष्टम भक्त [तेले] का तप पानी बिना चौविहार करना कल्पता है वे ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर [स्मशान में] थोडीसी कायाको झुकाकर कायोत्सर्ग करे एक ही पुद्गल [वस्तु] पर अनिमेष [आंखो नहीं टमकाते] दृष्टी स्थापन करे यथा प्रणित गात्र-शरीर को सब इन्द्रिय पांचोंइन्द्रिय और मन को गुप्त करके दोनों पांवों को उक्त प्रकार स्थापनकर दोनों हाथोंको निराधार प्रलम्ब स्थापन कायोत्सर्ग युक्त खडे रहे। वहां देवता सम्बन्धी,मनुष्य सम्बन्धी व तिर्यंच सम्बन्धी तीन प्रकारके परिषह उपसर्ग उत्पन्न होवे उन

यग्घारिय पाणिस्स ठार्ण ठाइत्तए, तत्थण देवमणुस्स तिरिक्खजोणिया जाव अहा विहिमेव, ठार्ण ठाइत्तए ॥ २६ ॥ एगराइयण भिक्खुपडिम अणाणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमेतउठाणा, अहियाए असुभाए अखमाए अणिस्ससाए, अणाणुगामिय त्ताए भवइ, तजहा-उमायवा लभेज्जा, दीहकालियवा रोगायक पाउणेज्जा, केवली पण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा-॥एगराइयं भिक्खु पडिमं सम्मं अणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमे तओठाणा हियाए जाव अणुगामियत्ताए भवइ तजहा—ओहिणाणेवा समुप्पज्जेज्जा,

को यावत् पूर्वोक्त प्रकार सम्यक् प्रकार सहन करे, इस प्रकार कायोत्सर्ग युक्त एक रात्रि के भिक्षुक की प्रतिमा॥२६॥जो इस बारवी प्रतिमाका आराधनकरे यावत् आज्ञाका अनुपालक होवे यह बारवी भिक्षुक की प्रतिमा आराधन नहीं करतेहैं उपसर्ग उत्पन्न हुवे चलित होते हैं उनको आगे कहेंगे साधुकी प्रतिमाका सम्यक प्रकार आराधन नहीं करतेहैं उपसर्ग उत्पन्न हुवे चलित होते हैं उनको आगे कहेंगे वैसे अहित केकरता अशुभ के करता अयोग्यता के करता अनिस्तार के करता आगामिक काल में अनुगामि होवे, उन के नाम—१ उन्माद प्राप्त होवे अर्थात् बावले बने, २ बहुत काल तक रहे ऐसा महा रोग की प्राप्ति होवे, और ३ केवली प्रणित संयम धर्म से भ्रष्ट होवे और जो बारहवी एक रात्रि की साधु की प्रतिमा को सम्यक प्रकार से आराधन करेगा जिनाज्ञा प्रमाने पालेगा उन को आगामिक काल में तीन स्थानक हित के करता शुभ के करता क्षमा के करता यावत् आगामिक काल में अनुगामिक होवेंगे उन के नाम-

जाव रायहाणिस्सवा, ईसिं दोवि पाए साहट्टु वग्घारिय पाणस्स ठाणं ठाइत्तए, सेस तचेव जाव अणुपालेत्ता भवइ ॥ २१ ॥ एग राइयण भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्च वोसट्ठकाएण जाव अहियासेइ, कप्पइसे अट्ठमेण भत्तेण अपाणएण बहिया गामस्सवा जाव रायहाणिस्सवा ईसिंपब्भारगएण काएणवा एगपोग्गलगयाए दिट्ठीए अणिमिसिनयणे अहापणिहिएहिं गाएहिं सव्विंदिएहिं गुत्ते दोविपाए साहट्टु,

ग्रामादि के बाहिर कुछ अन्तर से ध्यानस्थ रहे (आगे८अंगुल पीछे४अंगुल अन्तर रख) पांव एकप्रकार दोनों हाथ लम्बे रख शरीरके आश्रयबिना अधर रख कायुत्सर्ग करे शेष विधि तैसे ही जानना यावत् आज्ञाका अनुपालक होवे यह इग्यारवी प्रतिमा॥२८॥ बारवी प्र॰ एक रात्रि और दिनकी भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु शरीर का ममत्व का त्यागकर यावत् सर्व परिषह सम्यक् प्रकार से सहन करते हुवे अष्टम भक्त [तेले] का तप पानी बिना चौविहार करना कल्पता है वे ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर [स्मशान में] थोडीसी कायाको झुकाकर कायोत्सर्ग करे एक ही पुद्गल [वस्तु] पर अनिमेष [आंखो नहीं टमकारते] दृष्टी स्थापन करे यथा प्रणित गात्र-शरीर को सब इन्द्रिय पांचोंइन्द्रिय और मन को गुप्त करके दोनों पांवों को एक प्रकार स्थापनकर दोनों हाथोंको निराधार प्रलम्ब स्थापन कायोत्सर्ग युक्त खडे रहे।वहां देवता सम्बन्धी मनुष्य सम्बन्धी व तिर्यंच सम्बन्धी तीन प्रकारके परिषह उपसर्ग उत्पन्न होवे उन

यग्यारिय पाणिस्स ठाणं ठाइत्तए;तत्थण देवमणुस्स तिरिक्खजोणिया जाव अहा विहिमेव. ठाणं ठाइत्तए ॥ २६ ॥ एगराइयण भिक्खुपडिमं अणाणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमेतउठाणा, अहियाए असुभाए अखमाए अणिस्ससाए अणाणुगामियत्ताए भवइ,तजहा-उमायंवा लभेज्जा,दीहकालियवा रोगायक पाउणेज्जा,केवली पण्णत्ताओ धम्माओ भंसेज्जा-॥एगराइयं भिक्खु पडिमं सम्मं अणुपालेमाणस्स अणगारस्स इमे तओठाणा हियाए जाव अणुगामियत्ताए भवइ तजहा—ओहिणाणेवा समुप्पज्जेज्जा,

को यावत् पूर्वोक्त प्रकार सम्यक् प्रकार सहन करे, इस प्रकार कायोत्सर्ग युक्त एक रात्रि के भिक्षुक की प्रतिमा आराधन करे यावत् आज्ञाका अनुपालक होवे यह बारवी भिक्षुक की प्रतिमा॥२७॥जो इस बारवी साधुकी प्रतिमाका सम्यक प्रकार आराधन नहीं करतेहैं उपसर्ग उत्पन्न हुवे चलित होते हैं उनको आगे कहेंगे वैसे अहित केकरता अशुभ के करता अयोग्यता के करता अनिस्तार के करता आगामिक काल में अनुगामि होवे, उन के नाम—१ उन्माद प्राप्त होवे अर्थात् बावले बने, २ बहुत काल तक रहे ऐसा महा रोग की प्राप्ति होवे, और ३ केवली प्रणित संयम धर्म से भ्रष्ट होवे और जो बारवी एक रात्रि की साधु की प्रतिमा है उसे सम्यक प्रकार से आराधन करेगा जिनाज्ञा प्रमाने पालेगा उन को आगामिक काल में तीन स्थानक हित के करता शुभ के करता क्षमा के करता यावत् आगामिक काल में अनुगमिक होवेंगे उन के नाम-

जाव रायहाणिस्सवा, ईसिं दावि पाए साहट्टु वग्घारिय पाणस्स ठाण ठाइत्तए, सेस तघेव जाव अणुपालेत्ता भवइ ॥ २१ ॥ एग राइयण भिक्खुपडिमं पडिवन्नस्स अणगारस्स निच्च वासट्ठकाएण जाव अहियासेइ कप्पइसे अट्ठमेणं भत्तेण अपाणएण बहिया गामस्सवा जाव रायहाणिस्सवा ईसिपब्भारगएण काएणवा एगपोग्गलगयाए दिट्ठीए अणिमिसिनयणे अहापणिहिएहिं गाएहिं सव्विंदिएहिं गुत्ते दोविपाए साहट्टु,

ग्रामादि क बाहिर कुछ अन्तर से ध्यानस्थ रहे (आगे८अंगुल पीछे४अंगुल अन्तर रख) पांव एकत्रकर दोनों हाथ लम्बे रख शरीरके आश्रयबिना प्रवर रख कायुत्सर्ग करे शेष विधि तैसे ही जानना यावत् आज्ञाका अनुपालक होवे यह इग्यारवी प्रतिमा॥२८॥ बारवी भी एक रात्रि और दिनकी भिक्षुक की प्रतिमा प्रतिपन्न हुवे साधु शरीर का ममत्व का त्यागकर यावत् सर्व परिषह सम्यक प्रकार से सहन करते हुवे अष्टम भक्त [तेले] का तप पानी बिना चौविहार करना कल्पता है वे ग्राम के यावत् राजधानी के बाहिर [स्मशान में] थोडीसी कायाको झुकाकर कायोत्सर्ग करे एक ही पुद्गल [वस्तु] पर अनिमेष [आंखो नहीं टमकाते] दृष्टी स्थापन करे यथा भणित गात्र-शरीर को सब इन्द्रिय पांचोंइन्द्रिय और मन को गुप्त करके दोनों पांवों को वक्र प्रकार स्थापनकर दोनों हाथोंको निराधार प्रलम्ब स्थापन कायोत्सर्ग युक्त खडे रहे 'वहां देवता सम्बन्धी,मनुष्य सम्बन्धी व तिर्यंच सम्बन्धी तीन प्रकारके परिषह उपसर्ग उत्पन्न होवे उन

॥ अष्टमी-दशा ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पंचहत्थुत्तरे होत्था तंजहा हत्थुत्तराहिं चुएचइत्ता, गब्भवक्कंते ॥ १ ॥ हत्थुत्तराहिं गब्भाओगब्भं साहरिए ॥ २ ॥ हत्थुत्तराहिंजाए ॥ ३ ॥ हत्थुत्तराहिं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइए ॥ ४ ॥ हत्थुत्तराहिं अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे

अब आठवा अध्ययन महावीर स्वामी के जीवन चरित्र का कहते हैं—उस काल उस समय में श्रमण भगवंत महावीर स्वामी के पांच काम हस्तोत्तरा [उत्तराफाल्गुनी] नक्षत्र में हुवे उन के नाम—१ हस्तोत्तर नक्षत्र में दूसरे देवलोक से चवके देवानंदा ब्राह्मणी के कूख में अवतरे २ हस्तोत्तर नक्षत्र में ही देवानंदा की कूखी से बियासीवी रात्रि में साहरण कर त्रिसलादेवी क्षत्रीयानी की कूख में हरिण गमेषी देवने स्थापन किये, ३ हस्तोत्तर नक्षत्र में ही जन्म हुवा, ४ हस्तोत्तर नक्षत्र में ही द्रव्य भाव मुण्डित हो गृहस्थावास छोड़ अनगार-साधु हुवे और ५ हस्तोत्तर नक्षत्र में ही अनुत्तर निर्व्याघात निरावरण कृत्स्न (अखंड)

चरी-अनुव उमुणा-यो. आठ महीने के ८ मास करके विहार और चार महीने एक स्थान चौमासे के काल रहने का जिस में कथन होने से पर्युषणाध्याय भी इस का नाम कहा है आचार कल्प होने से आचार कल्प भी इस अध्याय का नाम कहा है, (और कहते हैं कि-कल्प सूत्र का भी इसी में समावेश होता है.)

हस्त के पीछे का और चन्द्रमा के उत्तर दिशा में योग करता होनेसे हस्तोत्तर नक्षत्र कहा है

मणपज्जव णाणेवा समुप्पज्जेज्जा केवलणाणेवा असमुप्पन्नपुव्वे समुप्पज्जेज्जा, एवं खलु एसा एगराइया भिक्खु पडिमा अहासुत्त अहाकप्प अहामग्ग अहातच्च सम काएण फासित्ता पालित्तासोहित्ता तीरित्ता कीट्टित्ता आराहित्ता आणाए अणुपालित्ता भवति ॥ २७ ॥ एताओ खलु ताओ थेरेहिं भगवतेहिं बारस भिक्खु पडिमा पण्णत्ताओ॥ त्तिबेमि ॥ २८ ॥ इति भिक्खु पडिमाणाम सत्तमं दसा सम्मत्त ॥ ७ ॥ *

१ अवधि ज्ञान की प्राप्ति होवे २ मनःपर्यव ज्ञान की प्राप्ति होवे, और ३ केवल ज्ञान जो उनको प्रथम प्राप्त नहीं हुवा है, उस की प्राप्ति होवे यों निश्चय यह एक रात्रि की भिक्षुक की प्रतिमा सूत्रोक्त विधी प्रमाणे साधु के कल्प प्रमाणे न्याय मार्ग प्रमाणे, यथातथ्य सम्यक् प्रकार काया करके आराधे, पाले, स्पर्शन करे अतिचार रहित विशुद्ध पाले, पालकर पार पहोंचावे, कीर्ति सहित आराधे आज्ञा को अनुपालक होवे ॥ २८ ॥ यों निश्चय अहो जम्बू ! स्थविर भगवंतने बारे भिक्षुक की प्रतिमा कही तैसी मैंने तेरे से कही इति भिक्षुक प्रतिमा नामक सातवी दशा समाप्तम् ॥ ७ ॥

* * *

॥ नवमी-दशा ॥

तेणं कालेणं तेणं समएणं चंपानाम नयरी होत्था वण्णओ,पुण्णभद्दे चेइए, कोणिए राया धारणीदेवी सामीसमोसढे, परिसा निग्गया, धम्मोकहिओ, परिसापडिगया ॥१॥ अज्जो ! ति समणे भगवं महावीरे बहवे निग्गथाय निग्गंथीओय आमंतेत्ता एवं वयासी एवं खलु अज्जो! तीस मोहणिज्जठाणाइं जाइं इमाइं इत्थिओवा पुरिसोवा अभिक्खणं २ आयरमाणेवा समायरमाणेवा मोहणिज्जत्ताए कम्मंपकरेति, तंजहा (गाहा) जे

उस-काल उस समय में चंपा नामकी नगरी थी उसके ईशान कौन में पूर्ण भद्र नामक बगीचा था, यहां कोणिक नामका राजा राज करता था उनकी धारणी नामकी राणी थी यहां भगवंत श्री महावीर स्वामी पधारे, परिषदा धन्ने गइ, धर्म कथासुनाइ, परिषदा पीछीगइ इन सब का वर्णन उववाइ सूत्र से मानना ॥ १ ॥ अहो आर्यो ! इस प्रकार श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी बहुत साधु साध्वी को आमंत्रण कर बोलकर यों कहते हुवे-यों निश्चय अहो आर्यों तीस स्थान मोहकर्म उपार्जन करने के कहे हैं, जिन को जो कोइ स्त्री अथवा पुरुष वारम्वार आचरन करते हैं, विशेष प्रकार समाचरते हैं वे महा मोहनीय कर्म का बंध करते हैं उन तीस कर्तव्य के नाम आगे गाथा द्वारा कहते हैं तद्यथा—१ जो कोई त्रस प्राणी को पानी में डुबोकर अथवा किसी भी प्रकार पानी के प्रयोगकर मारता है वह महा मोहनीय कर्मोपार्जन करता है ॥ १ ॥ २ जो कोई प्राणियों के हाथ कर पकड़कर या किसी भी प्रकार

पवलवर णाणदसण समुप्पण्णा ॥५॥ साइणायपरिनिव्वुए भयव ॥ ९ ॥ जाव बहुण समणाण बहुण समणीण, बहुणं सावयाणं, बहुणसावियाणं बहुणदेवाण, बहुण देवीण मज्झगएचेव एवमाइक्खइ एवंभासेसेति एव पण्णवइ एवं परूवइ जाव मुज्जो २ उव उवदसेइ त्तिबेमि ॥ आयारकप्पनामट्ठमज्झयण सम्मत्तं ॥ ८ ॥ *

प्रतिपूर्ण प्रधान केवल ज्ञान केवल दर्शन की प्राप्ति हुई यह पांच कार्य तो हस्तोत्तर नक्षत्र में हुवे और स्वाति नक्षत्र में निर्वाण-मोक्ष पधारे यावत् शब्द से आचारांग सूत्र के १५ वा अध्याय का सपास यहां संपूर्ण कहना अर्थात् इस उत्सर्पनी काल के तीन आरे बीते चौथे आरे के ७५ वर्ष ८॥ महिने रहे तब भगवंत को दशवें देवलोक से चवकर नीच नाम कर्मोदय से देवानन्दा ब्राह्मणी की कूख में अवतरे तहां ८२ रात्रि रहे त्रियासीवे रात्रि को हिरणगमेसी देव इन्द्र के आदेश से देवानंद की कुक्षी से हरन कर त्रीसलादेवी क्षत्रियानी कुक्षी में स्थापे सवा नव महिने पूरे हुवे जन्म हुवा, चौसठ इन्द्र जन्मोत्सव किया द्रव्य वृद्धि होनेसे वृद्धिमान और महापराक्रमी होनेसे महावीर नाम स्थापा, २८ वर्ष बाद मातपिता स्वर्ग गये दो वर्ष अभिग्रहधारी रहे, वर्षीदान दे ३० वर्ष की वय में दीक्षा ली १२॥ वर्ष छद्मस्थ रहे, फिर केवल ज्ञान पाये, कुल्लकम ३० वर्ष केवली रहे, यावत् बहुत साधु साध्वी श्रावक श्राविका देवता देवी की परिषदा के मध्य पांच महाव्रत की २५ भावना सह अध्याय भाषा प्रकाश ५० दिन आषाढ़ सवत्सरी ७० दिन बाद चौमासा की समाप्ति करी, सब सर्व आयुष्य भोगकर मोक्ष पधारे इत्यादि सब कहना इति आठवी दशा संपूर्ण ॥८॥

दडेण, महामोहं पकुव्वइ ॥ ६ ॥ गूढाचारी निगूहेज्जा, मायमायाए वायए ॥ असच्च
वाईणिण्हाई, महामोहं पकुव्वइ ॥ ७ ॥ धंसेइ जोअभूएणं, अकम्मं अंतकम्मुणो,
अदुवा नूम मकासित्ति, महामोहं पकुव्वइ ॥ ८ ॥ जाणमाणो परिसए, सच्चमोसाइ
भासए ॥ अखीणझंझे पुरिसे, महामोहं पकुव्वइ ॥ ९ ॥ अणायगस्सणेयव्व, दार

लिगाल तथा मीमादि के फलकर दंडे कर पत्थर आदि कर उस को मारे तो महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ६ ॥ जो कोई आचारी नाम धराकर गुप्तपने अनाचार सेवन करे उस को छिपा कर रक्खे अपने दगलबाजी कर उसे ढके-अच्छादन करे असत्य वचन उच्चारे शास्त्र के अर्थ छिपावे तथा फिरावे अनर्थ रूप परिणमावे अर्थात् उत्सूत्र की प्ररूपना करे यह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ७ ॥ जो कोई किसी गुनीजन का यश ग्रामादि में विस्तरीत हो रहा है उसे श्रवण कर ईर्षा भाव से प्रज्वलित हो यह धर्मार्थ किसी काय को करता हो उस का झूठा भरम रखकर उस यश का निवारन करने अपयश फैलाने जो कोई पुरुष असद्भूत झूठा कलंक (मजा) उस पर चढावे अनाचार नहीं सेवन करनेवाले को भी अनाचार सेवन क्रिया चढावे अथवा अपने किये हुवे कुकर्मों उसने किये ऐसा कह अपना दोष अन्यपर स्थापन करे तो वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ८ ॥ जो जानता है कि यह बात साफ झूठी है तो भी परिषदा में बैठ कर मिश्र भाषा बोले अर्थात् सत्य झूट का निर्णय न हो ऐसी भाषा बोले झूठ वचन उच्चार कर क्लेश की वृद्धि करे वह महा मोहनीय कर्म को बंधे ॥ ९ ॥ जो कोई राजा का प्रधान, सेठ का मुनीम

पाणितसेपाणे,वारिमज्झे विगाहिय॥उदएणोकम्ममारेइ,महामोहंपकुव्वइ॥ १॥पाणिणासंपि
हित्ताणं, सोयमावरिय पाणीणं ॥ अंतोणदंत मारेइ, महामोहं पकुव्वइ ॥ २ ॥
जाय तेयं समारंभे, बहुउरुंभियाजण ॥ अंतो धूमेण मारेइ ॥ महामोहं पकुव्वइ
॥ ३ ॥ सीसंमि जो पहाणेइ,उत्तिमगंमि चेयसा ॥ विभज्जमत्थयं फाले, महामोहं
पकुव्वइ ॥ ४ ॥ सीसवेढेण जेकेइ, आवेढेइ अभिक्खणं ॥ तिव्वसुहं समायारे,
महामोहं पकुव्वइ ॥ ५ ॥ पुणो २ पणिहिए, बालेउवहसेजणं ॥ फलेण अदुवा

कर श्रोत्रादि इन्द्रियों द्वारा निकलता श्वासोश्वास का निरुंधन कर हृदय में घुन घुनाट करता हुवा मारे वह महामोहनीय कर्म बंधे ॥ २ ॥ ३ जो कोई अग्निकाय का समारंभ करे आज्वल्यमान अग्निको प्रज्वलित करे वह वाडादि में रहे जीवों का निरुंधन कर उनके नाक मुख आंखों में धूंवा प्रक्षेपकर मारे. वह महामोहनीय कर्म बंधे ॥ ३ ॥ ४ सब शरीर में उत्तमांग जो मस्तक है उस मस्तक में कोई खड्ग का मालका आदि किसी भी शस्त्र का प्रहार करके मस्तक को फोडकर फोडकर जो जीव घात करे, वह महामोहनीय कर्म बंधे ॥ ४ ॥ ५ जो कोई मस्तकादि शरीर में चमडा [भाल्म] बंधे वेष्टित करके धूपादि में खडा कर सूका कर इस प्रकार किसी का वध करेतो वह महामोहनीय कर्म का बंधकरे॥ ६ जो कोई चाबुक लकडे लगडे आदि अपणकी तथा दास अज्ञानी मूर्खकी हंसी मस्करीकरे चपको

महामाह पकुव्वइ ॥१४॥ जणिसिओ उव्वहति, जससाअभिगमिणय ॥ तस्सलुप्पइ
वित्तमि महामोहं पकुव्वइ ॥ १५ ॥ इस्सरेण अदुवा गामेणं, अणिस्सरेइसरिकए ॥
तरस सपरिगहियस्स, सिरीअ तुल मागया ॥१६॥ इस्सा दोसेण आइट्ठे, कलुसाउल

होता है १४ अज्ञानी जीव अपनी आत्माका अहित सम्पादन करता है, माया मृषान्कपट युक्त झूटे वचनों गार कर बहुत बकवाद कर लोकों को ठगता है, स्त्री के विषय का लम्पटी होता है वह महा मोहनीय कर्म को बंधे ॥ १३—१४ ॥ १५ जो कोइ जीव किसी राजा आदि महा पुरुष के प्रताप करके गुरु आदि महा पुरुष के प्रताप करके जगत में माननीय पूज्यनीय बना हो, वह पुन उन राजादि का व गुरु आदि का ही अपयश करे उन की पेठ प्रतीत गमानेका उपाय करे तो महामोहनीय कर्मका बंध करे ॥१५॥ १६ जोकोइ अगम अनिश्वर-निराधारया, उसको किसी राजादिने राजसत्ता देकर या धनादि देकर ईश्वर बनाया, वह समर्थ बन जिन राजादि के परताप करके अतुल्य अपार लक्ष्मी वैभव सुख सम्पदा प्राप्त की अथवा ग्राम के लोकोंने उसे बुद्धिवंत दक्ष मानकर अपना मुखीया बनाया पंच स्थापन किया अनिश्वर का ईश्वर असमर्थ को समर्थ किया, उनके प्रसाद से लक्ष्मी आदि अतुल्य सम्पदा प्राप्त की, फिर वह ऋद्धिगर्व में ऐश्वयता के गर्व में छककर अपने आश्रित जनोपर कलुषता भाव-द्वेषवृति कर तथा लोमादी दोषों से प्रेरित हो व्याकुल बन उन आश्रितों को दुःखदे त्रास उपजावे खान पान भोगोपभोग की

तस्सेवधसइ ॥ विउल विक्खाभइत्ताण, किच्चाण पडिवाहिरं ॥ १० ॥ उवसगतपि
जपित्ता पडिलोमाहिवग्गुहि ॥ भोगभोगावियारेइ महामोहं पकुव्वइ ॥ ११ ॥
अकुमारभूए जेकेइ कुमारे भूएति अहंवदे ॥ इत्थीविसय गेहिए, महामोह पकुव्वइ
॥ १२ ॥ अबंभयारी जेकेइ, बंभयारित्ति अहंवदे ॥ गद्दभेवगव मज्झे, विस्सरण
दइणदे ॥ १३ ॥ अप्पणो अहियं बाले, मायामोसंबहुभसे ॥ इत्थीविसय गेहीए,

राजा शेठ उस पर विश्वास कर उस को अपनी संपती की मुक्त्यारी दी हो वह प्रधान तथा मुनीम उस राजा की स्त्री को तथा धन को अपने हाथ में कर उस को निराधार बनावे अपना दावेदार बनावे उस को फिर अनेक प्रकार दुःख देवे रुदन करावे प्रतिलोम नीच शब्द बोलकर उसे संताप उपजावे उस को भोगउपभोग की अंतराय दे उस की वस्तु उस को भी भोगवन देवे नहीं, वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ १०—११ ॥ जो कोइ कुमारभूत न हो अर्थात् बाल ब्रह्मचारी न हो और लोकों में कहे कि मै कुमारभूत बाल ब्रह्मचारी हूं, इस प्रकार बोलता हुवा जो स्त्री के विषय में गृद्ध हो स्त्री संग करे वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ १२ ॥ जो कोई कुशीलीय। व्यभिचार का सेवन करनेवाला होकर भी लोकों में कहे कि मैं ब्रह्मचारी हूं, और ब्रह्मचारीयों की सम्प्रदाय में रहे वह जिस प्रकार गाइयों के टोले में गर्दभ होता है उस प्रकार जानना अपने साधु के रूप को धर्म को लज्जित-कलंकित करनेवाला मिथ्यावादी

॥ २१ ॥ तहेवाणतनाणीण, जिणाण वरदंसिणं ॥ तेसिं अवण्णवाले, महामोहं पकुव्वइ ॥ २२ ॥ णेयाउयस्स मग्गस्स, दुट्ठे अवहरइ बहु ॥ ततिप्पयंतो भावेइ, महामोहं पकुव्वइ ॥ २३ ॥ आयरिय उवज्झाएहिं, सुय विणय च गाहिए ॥ तंचेव खिसइबाले, महामोहं पकुव्वइ ॥२४॥ आयरिय उवज्झायाण, सम्म नो परितप्पइ ॥ अपडिपूयइ थेडे, महामोहं पकुव्वइ ॥ २५ ॥ अबहुसुएविजेकेइ, सुएण परिकप्पइ ॥

जो वर्णादरूप अनंत केवल ज्ञान केवल दर्शन के धारक श्री जिनेश्वर भगवान के अवर्णवाद बोले तो वह मूर्ख महामोहनीय कर्म बंधे ॥ २२ ॥ २० जो कोइ दुष्ट बुद्धि का धारक जिनेश्वर भगवंत का न्यायपंथ निस्तार कारक धर्म तथा धर्म के प्रवर्तक संघ जिन का अवर्णवाद बोले-निन्दा करे वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २३ ॥ २१ जो दीक्षा शिक्षा के दाता आचार्य भगवंत का, ज्ञान विज्ञान के प्रवर्तक उपाध्याय भगवंत का, कि जिनोने श्रुत चारित्र का विनयाभ्यास कराया हो न्याय पंथ में लगाया हो उन की निंदा करे, उन को खिसना करे, तुम क्या जानते हो वगैरे वचन बोल कर अपमान करे तो महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २४ ॥ २२ जो उक्त प्रकार के आचार्य उपाध्याय की अहंकारी बन कर अभीमान में छककर विनय भक्ति सेवा नहीं करे तो वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २५ ॥ २३ जो कोइ अबहु सूत्री होकर अर्थात शास्त्रार्थ के भाव भेद का जान हो कर अभिमान में छककर

पयसे ॥ जे अतरायचइए महामाह पकुव्वइ ॥ १७ ॥ सप्पजहा अंडपुड, भत्तार
जोवि हिंसइ ॥ सेणावइ पसत्थारं, महामोहं पकुव्वइ ॥ १८ ॥ जे णायगं वरट्ठस्स,
नेत्तार निगमस्सवा सेट्ठिंच बहुरवहंती सेट्ठं, महामोह पकुव्वइ ॥१९॥ बहु जणस्स
नेयारं, दीव ताणच पाणीण ॥ एतारिसं नरं हता ॥ महामोहं पकुव्वइ ॥२०॥ उव-
ट्ठियं पडिविरय, सजयं सुसमाहिय ॥ विउकम्म धम्मा उभसेइ, महामोहं पकुव्वइ

अंतराय करेवो महामोहनीय कर्म का बंधे ॥ १६ १७ ॥ १५ जिस प्रकार सर्पनी अण्डे उत्पन्न करके आपही उस का भक्षणकरे अर्थात् उन की रक्षक [माता] होकर उनकी ही भक्षक (घातक) बन जावे इस ही प्रकार स्त्री अपने पती की, सेनापति राजाको, शिष्य गुरुकी, विश्वास घात करे तो महामोहनीय कर्म बंधे ॥ १८ ॥ १६ जो कोइ देशाधिपति राजाकी, जो वाणिज्यादि के मालक नगर श्रेष्ठादि की जो बहु यशः कीर्तिके धारक के घात की इच्छाकरे वह महामोहनीय कर्म बंधे ॥ १९ ॥ १७ जो बहुत लोकों का स्वामी हो जिस प्रकार समुद्र में द्वीप आधार भूत होता है उस प्रकार बहुत जीवों को आधारभूत हो, इस प्रकार के जीव की घात चिन्तवे वह महामोहनीय कर्म बंधे ॥ २० ॥ १८ जो कोई दीक्षा ग्रहण करने का संपति सुसमाधीवंत साधु होने का अभिलाषी हुवा हो इस प्रकार निवृत्तिवंत-वैरागी को धर्म से भ्रष्टकर वैरागी का वैराग उतारे तो महामोहनीय कर्म बंधे ॥ २१ ॥ १९

महामोहंपकुव्वइ ॥ ३१ ॥ जेयमाणुस्सए भोए अदुवापरलोइए ॥ तेतिप्पियतो आसयति महामाह पकुव्वइ ॥ ३२ ॥ इड्डिजुइ जसोवण्णो, देवाण वल्वीरिय॥ तेसिं अवन्नवाले, महामोहं पकुव्वइ ॥३३॥ अप्परसमाणो पस्सामि, देवाजक्खायगुझगा॥ अन्नाणीजिणपूयट्ठी, महामोहं पकुव्वइ ॥ ३४॥ एतेमोहगुणवुत्ता, कम्मवाविच्च-भवट्ठगा ॥ जेउभिक्खू विवज्जेज्जा, चरिज्जसंगवेसए ॥ ३५ ॥ जपि जाणेइओपुव्व,

कोइ धर्मिक सज्जन सखातथा मित्र के अर्थे तथा स्वरूपा के भय वंशीकरण औचाटनादि मंत्र तंत्रादि मयुंजे वह महा मोहनीय कम बंधे ॥ ३१ ॥ २८ जो कोई इस भव मनुष्य संबंधी भोगों में व परलोक के देवादि संबंधी भोगों में अतृप्ति धरता अभिलाषी होवे वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ३२ ॥ २९ जो देवता महा ऋद्धिवंत गुणवंत बलवंत वर्णवंत होवे उन के अवर्णवाद बोले निन्दा करे वह महा मोहनीय कम बंधे ॥ ३३ ॥ ३० जो कोई के पास देवता न आता हो देवता को नहीं देखा हो और अपनी मान पूजा के अर्थ लोकों में कहे कि देवता ज्योतिषी विमान तथा व्यन्तर यक्षादि गुह्यक भवनपति इन चारों जात के देवमें से अमुक जाति का देवता मेरे पास आता है, तो वह महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ ३४ ॥ यह उक्त ३० बोल महा मोहनीय कर्मागमन करने के तीर्थंकर भगवतने कहे, उन को अनय के हेतु जान साधु छोडे और आपनी आत्मा के लिये चारित्रादि गुन की गवेषना करे ॥ ३५ ॥ जिनोंने दीक्षा धारन किये पहिले

सज्झायवायंवदइ महामोहं पकुव्वइ ॥२६॥ अतवस्सिय जेकेइ, तवेण परिकप्पइ ॥सव्वलोग
परित्तणे, महामोहं पकुव्वइ॥२७॥साहरणट्ठा जेकेइ गिलाणंमिउवट्ठिए॥पभूण कुव्वइ किच्च
मज्झंप्पेसेते कुव्वइ॥२८॥सेढेणियडिय पण्णाणे, कलुसाउल चेयसे॥ अप्पणोय अबोहिए,
महामोह कुव्वइ॥ २९॥जे कहा अधिकरणाय सपउजे पुणोपुणो ॥सव्वतित्थाण भेयाए,
महामोहं पकुव्वइ ॥३०॥ जेय आहम्मिएजोए सपउजे पुणोपुणो॥ महाहेउ सहीहेउ,

लोगों से कहे कि मैं बहुसूत्री हूं, मैंने सब शास्त्र पढे हैं, इस प्रकार स्वध्यायवाद वदे झूठी प्रशंसा करे तो महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २६ ॥ २८ जो कोइ अतपस्वी होकर सब लोगों में अपना तपस्वी नाम धारन करावे तो महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २७ ॥ २९ जो कोइ साधु शरीरादि कर सुदृढ होकर मद अभिमान में छका हुवा चिन्तवे कि मैं बड़ा हूं ज्ञानी हूं तपस्वी हूं इत्यादि अभिमान कर उनके तप संयम ज्ञानादि गुन की वृद्धि के अर्थ गिलानी रोगी असमर्थ साधुओं की वैयावच्च नहीं करे विचार करे कि यह मेरा काम नहीं करते हैं तो मैं उन का काम क्यों करूं ! इस प्रकार धूर्तता करके मायावि पना धारन करे व अबोधी अपनी आत्मा का अहित करता हुवा महा मोहनीय कर्म बंधे ॥ २८–२९ ॥ ३१ जो कोई क्लेश की उत्पादक अनेक जीवों के उपमर्दक, कुशास्त्र ज्ञान, दर्शन, चारित्र की भेदक, चारों तीर्थ में फूट पडनेवाली कथा करे उपदेश दे वह महा मोहनीय कर्मका बंध करे ॥ ३० ॥ २७ जो

॥ दशमी-दशा ॥

तण कालेण तेण समएण रायगिहे णामं णयरे होत्था वण्णओ, गुणसिलए चेइए ॥ सेणिएनाम रायाहोत्था, रायवण्णओ, एव जहा उववाईए जाव चेलणाए सद्धि विहरति ॥ १ ॥ ततेण से सेणिएराया अण्णयाकयाइ ण्हाएकयवलिकम्मे कयको-उय मगलपायच्छित्ते सिरसा कंठमालकडे आविद्धमणिसुवण्णे, कप्पियहारद्धहार

उस काल उस समय में राजगृही नामक नगर था, उसका वणन जानना, गुनसिला नामक चैत्य था राजगृही नगरी में श्रेणिकराजा राज करता था, राजा का वर्णन जैसे उववाइ सूत्र में कहा तैसा यावत् चेलणारानी के साथ सुख भोगवता विचरता था ॥१॥ तव श्रेणिकराजा अन्यदा किसी वक्त स्नान किया कुल्ल किये कौतुक मगलार्थ तिलक छापे किये मस्तक से पांव तक शृगार सजा, गले में माला पहनी, यथाविधि सुवणके भूषण मणिजडित पहने आठारे सरे पूर्णहार नवसरे आधेहार तीन सरेहार, लम्बा लटकता कमर का कन्दोरा, जिससे अपने शरीर की शोभा की, गले में गोप अंगुलीयों में मुद्रिका धारन की यावत् कल्पवृक्ष के समान अल्कारों से अलंकृत भूषणों से भूषित नृपति बना हुवा कोरंट वृक्ष की माला वाला छत्र मस्तक पर धारन कराता यावत् जैसे ग्रह नक्षत्र तारोंओं के वृन्द में चन्द्रमा

किवाकिवमहुजढं ॥ तवंतावाणिसेवेत्ता, ओहिं भायारवंसिया ॥ ३६ ॥ आयरगुचे सुरूप्पा, धम्मेट्ठिमा अणुत्तरे ॥ तमोवमे सपदोसो, विसमसी विसोजहा ॥ ३७ ॥ सुवंतदोससुरूप्पा, धम्मट्ठिविसिसापरे ॥ इहेव लभ्मतिकिर्सि, पेचाप सुगतिवरं ॥ ३८ ॥ एवं अभिसमागम्म, सूरादढ़ परकम्मा ॥ सव्वमोह विप्पमुक्का, जाई मरणामितीच्छ्या विबेमि ॥ ३९ ॥ इति महामोहमियं नवमं दसा सम्मत्ता॥ ९ ॥

काम किये हो बहुत कर्म बंधे होवे उन कर्मों का जानकर पाप का क्षय करने यथाचार शुद्ध तप का सेवन करे ॥ ३६ ॥ आचार गुप्तीवंत शुद्धात्मा क्षांति आदि दश विधि प्रधान धर्म का पालन करे जिस प्रकार सर्प कांचली का त्याग करता है ॥ ३७ ॥ और जिस से वे सब संचित पाप का त्याग करे जो शुद्धात्मा त्याग न किये भोग की इच्छा वांच्छा नहीं करता है धर्म में अपनी आत्मा को स्थिर स्थापता है वह इस लोक में भी कीर्ति को प्राप्त करता है और परलोक में देवादि सुगति को प्राप्त करता है ॥ ३८ ॥ अहो शूरवीर दृढ पराक्रमीयों ! इस प्रकार जिनेंद्र का उपदेश जानकर जो सर्वथा प्रकार मोह से विमुक्त होवे हैं वे जन्म मरण के बंधन को छेद परम सुखी होवे हैं ऐसा भगवंतने कहा वैसा मैं कहता हूं इति महा मोहनीय स्थान नाम अध्ययन नवमी दशा संपूर्ण ॥ ९ ॥ *

णाणिय देवकुलाणिय सभाउय पवाउय, पणियगिहाणिय पणियसालाउय, जाणसालाउय, छुहाकम्मताणिय, वाणियकम्मताणिय कट्ठकम्मताणिय इंगालकम्मताणिय, वणकम्मताणिय दब्भकम्मताणिय, जे तत्थवमहत्तरगा अण्णयाचिट्ठंति तेण एवं वदह एवं खलु देवाणुप्पिया ! सेणियराया भभसारपुत्ते आणवति-जयाणं समणं भगवं महावीरे आदिकरे तित्थकरे जाव संपाविओकामे, पुव्वाणुपुव्विं चरेमाणे गामाणुगामं दुइज्जमाणे, सुहसुहेण विहरमाणे, जाव संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे

१२ तृणादि बनता हो ऐसी शालाओं में, १३ व्यापारीयों के मकान में १४ सूतारों [बढ़इयों] के मकानों में १५ कोयले निष्पन्न हो उस स्थानों में, १६ वृक्षों का छेदन होता हो तथा वस्त्र पूनाते हो ऐसे स्थानों में, और १७ दर्भादि के गद्यादि बनते हो एसे स्थानों में, इत्यादि स्थानों जाकर जो जहां महत्तर स्थानक के मालक हों अथवा जिस का वह स्थान हो उस की आज्ञा से यहां उस का रक्षपाल रहता हो, उन से ऐसा कहो—श्रेणिक राजा (अपरनाम भभसार राजा) आज्ञा करता है, हुकम देता है कि जिस वक्त श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी धर्म की आदि के करता, चारों तीर्थ के स्थापक यावत् मोक्ष के अभिलाषी, पूर्वानुपूर्व चलते हुवे, ग्रामानुग्राम रहते हुवे, सुख सुख से विचरते हुवे, यावत् संयम

तिसरय पालंबपलंबमाणे कडिसुत्तय सुकयसोभे पिणिद्ध गेवेज्जअ अंगुलेजग जाव कप्परुक्खएचेव अलंकिए विभूसिए णरिंदे, सकोरंटमल्लदामेण छत्तेण धारिज्जमाणे जाव ससीवपियदसणे नरवई जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सिंहासणे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सीहासणवरंसि पुरत्थाभिमुहे निसीयति २ त्ता, कोडुंबिय पुरिसेसद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी गच्छहणं तुमं देवाणुप्पिया ! जाई इमाइ रायगिहस्स नगरस्स बहिया तंजहा आरामाणिवा, उज्जाणाणिवा, आएसणाणिय, आयत

शोभता है इस प्रकार भीतिका उत्पन्न करने वाला नृपति जहां बाहिर की उपस्थान शाला-राज्यसभा थी जहां राज्य सिंहासन था वहां आया, आकर सिंहासन पर पूर्वाभिमुख बैठा ॥ बैठकर कोटुम्बिक पुरुष को बोलाया बोलाकर यों कहने लगा-अहो देवानुप्रिय तुम जो इस राजगृही नगरी के बाहिर १ स्त्री पुरुष के क्रीडा करने के पुष्पादि के आरामों में २ अनेक प्रकार के वृक्षो पत्र पुष्प फलादि की शोभाकर शोभित उद्यानों में, ३ कुंभकारादि की शाला में, ४ यक्षादि देवों के आयतन मंदिरों में ५ नागादि देवों के देवालयों में ६ सभा के स्थानों में, ७ पानी की प्रपा के स्थानों में, ८ किरियानों की वक्खारों में, ९ किरियानोंकी दुकानों में, १० रथादि वाहन की शालाओं में, ११ क्षुर कर्म (नापिक) की शाला में

णाणिय चित्रकुलाणिय मसाउय पवाउय, पणियगिहाणिय पणियसालाउय, जाणसालाउय, लुहाकम्मताणिय वाणियकम्मताणिय कट्ठकम्मताणिय इंगालकम्मताणिय, वणकम्मताणिय, दतकम्मताणिय, जे तत्थवमहत्तरगा अण्णयाचिट्ठति तेण एव वदह एव खलु देवाणुप्पिया ! सेणियराया भभसारपुत्ते आणवति-जयाणं समणे भगव महावीरे आदिकरे तित्थकरे जाव संपाविओकामे, पुव्वाणुपुव्वि चरेमाणे गामाणुगाम दुइज्जमाणे, सुहसुहेण विहरमाणे, जाव संजमेण तवसा अप्पाणं भावेमाणे

१२ चूनादि बनता हो ऐसी शालाओं में, १३ व्यापारीयों के मकान में १४ सूतारों [बढाइयों] के मकानों में १५ कोयले निष्पन्न हो उस स्थानों में, १६ वृक्षों का छेदन होता हो तथा वस्त्र बुनाते हो ऐसे स्थानों में, और १७ चर्मादि के वस्त्रादि बनते हो ऐसे स्थानों में, इत्यादि स्थानों जाकर जो जहां महत्तर-स्थानक के मालिक हों अथवा जिस का वह स्थान हो उस की आज्ञा से वहां उस का रक्षपाल रहता हो, उन से ऐसा कहो—श्रेणिक राजा (अपरनाम भभसार राजा) आज्ञा करता है, हुकम देता है कि जिस वक्त श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी धर्म की आदि के करता, चारों तीर्थ के स्थापक यावत् मोक्ष के अभिलाषी, पूर्वानुपूर्व चलते हुवे, ग्रामानुग्राम रहते हुवे, सुख सुख से विचरते हुवे, यावत् संयम

इह मागच्छेज्जा इह समोसरेज्जा, तयाणं तुम्हे समणस्स भगवओ महावीरस्स अहा पडिरूवं उग्गहं अणुजाणह अहापडिरूवं उग्गहं अणुजाणेज्जा सेणियस्सरन्नो भंभसारे एयमट्ठपिय णिवेदेह ॥ २ ॥ तएण से कोडुंबियपुरिसे सेणिएरन्नो भंभसारेणं एवं वुत्तासमाणा हट्ठजावहियया करयल जाव एवं सामि तहत्ति विणएणं पडिसुणेइ एवं सामितहत्ति आणाविणएण पडिसुणित्ता सेणियस्सरण्णो अंतियाओ पडिनिक्खमंति २ त्ता रायगिहं णयरं मज्झंमज्झेण निगच्छंति २ त्ता जाइं इमाइं रायगिहस्स नगरस्स

तप कर अपनी आत्मा भावते हुवे यहां पधारे तब यहां समवसरे तब तुम श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी को यथाप्रतिरूप अवग्रह स्थानकादि जो उन के चाहिये उस को ग्रहण करने की आज्ञा देना आज्ञा देकर फिर भंभसार श्रेणिक राजा को भगवान के आगम का निवेदना करना (बधाइ देना) ॥२॥ तब वह कौटुम्बिक पुरुष भंभसार श्रेणिक राजा के पास उक्त आज्ञा श्रवण कर हृष्ट तुष्ट हुवा हाथ जोड दशों नख एकत्रित कर मस्तक पर चढाकर आवर्तनकर यों बोला-अहो स्वामिन् तथास्तु इसप्रकार माविनय आज्ञा का स्वीकार किया, आज्ञा स्वीकार कर श्रेणिक राजा के पास से निकला निकल कर राजग्रही नगरी के मध्य मध्य में होकर जो उस राजग्रही नगरी के बाहिर आराम यावत् जा यहां उस के मालिक थे जिन की मालकी में जो स्थान थे उन को यों कहा-श्रेणिक राजा की आज्ञा है कि श्री महावीर स्वामी

बहिया आरामाणिय जाव जे तत्थ महत्तरया अण्णया चिट्ठति तेणं एवं वयति जाव सेणियस्स रण्णो एयमट्ठं पिय निवेदेज्जा महपिय भवतु, दोचपि एव वदति २ त्ता जामेवदिसिं पाउब्भूया तामेवदिसिंपडिगया ॥३॥ तेण कालेण तेणं समएणं समणे भगवं महावीरे पाउब्भूया आदिकरे तित्थकरे जाव गामाणुगाम दूइज्जमाणे जाव अप्पाण भावेमाणे विहरति ॥ ४ ॥ तएण रायगिहे णयरे सिंघाडग तिय चउक्क चच्चर जाय परिसानिग्गया जाव पज्जुवासेति ॥ ५ ॥ तएणं ते महत्तरगा

पधारे जो उन को स्थानकादि कल्पने योग्य वस्तु हो उसकी आज्ञा देना और फिर भगवत पधारने की वधाई मुझे देना, यह उन को प्रियकारी होगा यों दो तीन वक्त कहकर वह कौटुम्बिक पुरुष जिस दिशा से आया था उस दिशा पीछा गया ॥ ३ ॥ उस काल उस समय में श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी धर्म की आदि के करता चतुर्विध तीर्थ के स्थापक यावत ग्रामानुग्राम रहते हुवे यावत् राजग्रही नगरी के गुणसिल बगीचे में पधारे तप संयम कर अपनी आत्मा को भावते हुवे विचरने लगे ॥ ४ ॥ तब राजग्रही नगरी के शृंगाटक पंथ में त्रिक पंथ में चौरास्ते में बहुत रास्ते मिले वहां लोगों भगवंत महावीर स्वामी का आगम सुन हृष्ट तुष्ट हुवे यावत परिषदा दर्शनार्थ आई, सेवा भक्ति करने लगी ॥ ५ ॥ तब उस बगीचे के महत्तरक पुरुषों को उक्त

जेणव समणे भगवं महावीर तेणेव उवागच्छइ २ त्ता समण भगव महावीर तिक्खुत्तो वदति नमसति वदित्ता नमंसित्ता नामगोय पुच्छति, नामगोयं पुच्छित्ता, नामगोयं पधारेति २ त्ता एगयओविमिलंति एगयओमिलित्ता एगतमेव कमिति २ त्ता एव वयासी—जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया भमसारे दसण कंक्खति, जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया दसण पीहेइ, जस्सणं देवाणुप्पिया ! सेणिएराया दसण पत्थेति, जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया दस्सण अभिलासेति जस्सण देवाणुप्पिया ! सेणिएराया भमसारे नामगोयस्स

समाचार मिलने से जहां श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी थे तहां आया, आकर श्रमण भगवंत महावीर स्वामी को तीन वक्त वंदन नमस्कार किया, वंदना नमस्कार कर भगवंत का नाम गोत्र पुच्छा नाम गोत्र पूछकर अवधारा सब महत्तरए एकत्र मिले, मिलकर एकान्त में गये एकांत में जाकर यों बोले-अहो देवानुप्रिया! श्रेणिकराजा जिनके दर्शन को चहाता है, जिन के दर्शन की अनुप्रेक्षा करता है, जिन के दर्शन की याचना करता है, जिन के दर्शन का सदैव अभिलाषी रहता है, जिन का नाम गोत्र मात्र ही श्रवण करने से हृष्ट तुष्ट होता है, वही यह श्रमण भगवत श्री महावीर धर्म की आदि के करता साधु प्रमुख

रिसत्रणयाए हट्ठतुट्ठे जाव भवति, सेणे समणे भगव महावीरे आइगरे तित्यगरे जाव सव्वण्णू सव्वदरसी, पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे गामाणुगाम दूइज्जमाणे, सुहसुहेण जाव विहरमाण, इहमागए इहसंपत्ते जाव अप्पाण भावेमाणे विहरति, त गच्छहं देवाणुप्पिया ! सेणियरस रन्नो एयमट्ठ निवेदेमो, पियमे भवसु तिकट्टु एयमट्ठ अण्णमण्णरस वयण पडिसुणाति, अण्णमण्णस्स पडिसुणेत्ता, जेणेव रायगिहे णयरे तणेव उवागच्छइ २ त्ता रायगिह णयर मज्झंमज्झेण जेणेव सेणियस्स रण्णो गिहे जेणेव सेणिएराया तेणेव उवागच्छइ २ त्ता सेणिय रायं करयलपरिग्गहिय जाव

चार तीर्थ के स्थापक यावत् सर्वज्ञ सर्वदर्शी पूर्वानुपूर्व चलते ग्रामानुग्राम रहते सुखसुख से विचरते यहां आए यहां समाप्त हुवे यावत् अपनी आत्मा को भावते हुवे विचरते हैं इस लिये अहो देवानुप्रिय ! चलो श्रेणिक राजा को यह कथन निवेदन करे, वधाइ दे, यह उन को प्रियकर होगा इस प्रकार विचार किया परस्पर मान्य किया मान्यकर जहां राजग्रही नगरी थी तहां आये आकर राजग्रही नगरी के मध्य मध्य म होकर जहां श्रेणिक राजा का भुवन जिस में जहां श्रेणिक राजा थे उन के पास आये, आकर हाथ जोड करांजली मस्तक पर स्थापन कर श्रेणिक राजा को जयहो विजयहो यों कह बधाये, बधाकर

जएण विजएण वधावेति २त्ता एव वयासी जस्सण सामी! दसणकखति जाव सण समण भगव महावीरे गुणसिलए चेइए जाव विहरति तस्सण देवाणुप्पियाण पियं निवेदेमो पियमे भवतु ॥ ६ ॥ तएण से सेणिएराया तेसिं पुरिसाण अतिए एयमट्ठ सोच्चा निसम्म हट्ठतुट्ठ जावहियए, सीहासणाओ अब्भुट्ठेइ २त्ता जहा कोणिओ जाव वदति नमसति, वदित्ता नमसित्ता ते पुरिसे सक्कारेइ सम्माणेइ सक्कारेत्ता सम्माणित्ता विउल जीवियारिह पीतिदाण दलयति २ त्ता पडिविसज्जेइ २ त्ता, नगरगुत्तिए

यों कहने लगा अहो देवानुप्रिय! जिन के दर्शन को आप चाहते हो यावत् वेही श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी गुनसिल चैत्य में यावत् तप संयम से आत्मा भावते हुवे विचर रहे हैं यह देवानुप्रिया को प्रियकारी प्रितिवदाइ देता हूं सो आप को प्रिय करता होवो ॥ ६ ॥ तब श्रेणिक राजा उन पुरुषों के पास वक्त कथन श्रवण करके अवधार करके हर्ष संतोष पाया सिंहासन छोड खडा हुवा, खडा होकर जिस प्रकार उववाइ सूत्र में कोणिक राजा का जिनवंदन का वर्णन चला है उस ही प्रकार श्रेणिक राजाने भी वहां सभा में से वदना नमस्कार किया, उस पुरुष का सत्कार सन्मान किया विस्तीर्ण-बहुत काल पर्यंत भोगवे इतनी आजीविका रूप-धन प्रीतिदान दिया, देकर वीसर्जन किया, विसर्जन करके नगरगुप्तिक-कोटवालको बोलाया, बोलाकर यों कहने लगे अहो देवाणुप्पिया! राजगृही

सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! रायगिह नयर सब्भितर वाहिरियं आसिय समज्झिय उवलित्त जाव करित्ता पच्चुप्पिणाति ॥ ७ ॥ तएण से सोणि० राया सेणावईहिं सद्दावेइ २ त्ता एवं वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! हय गय रह पायकाणचतुरंगिणिणि सेण सज्जावेइ २ त्ता एयमाणतिय पिच्चाविणह ॥ ८ ॥ तएण से सेणिएराया जाणसालिय सद्दावेइ २ त्ता एव वयासी—खिप्पामेव भो देवाणुप्पिया ! धम्मियं जाणप्पवर जुत्तामेव उवट्ठवेहिं उवट्ठवित्ता मम एयमाणत्तिय पच्चप्पिणह ॥ ९ ॥ तएण से जाणसालिए सेणिएणं रण्णा

नगरी को बाहिर स भीतर से पानी का छिटकाव करो झाडकर कचरा कंटकादि दूर डालो, भवनादि को लीपा पोता स्वच्छ करो रास्ते में मचानों बधा इत्यादि सजाइ सभा यह मेरी आज्ञा पीछे मेरे सुमत करो ॥ ७ ॥ तब श्रेणिक राजा ने सेनापति को बोलाया, बोलाकर यों बोले अहो देवानुप्रिय ! सीघ्रता से हाथी घोडे रथ पायदल चतुरंगनी सेना सज करो यावत् यह मेरी आज्ञा पीछी मेरे सुमत करो ॥ ८ ॥ तब श्रेणिक राजा ने यान (रथ) शाला के मालक को बोलाया बोलाकर यों कहने लगे अहो देवानुप्रिया ! शीघ्रता से धर्मिक रथ प्रधान सज करो जोत कर यहां लावो स्थापन करो, मेरी यह आज्ञा पीछी मेरे सुमत करो ॥ ९ ॥ तब वह रथ शाला का मालिक श्रेणिक राजा का वक्त वचन

एवं वुत्तासमाणा हट्ठतुट्ठा जाव हियया जेणेव जाणसाला तेणेव उवागच्छइ २ त्ता जाणसालं अणुपविसइ २ त्ता जाणगं पच्चोरुभइ २ त्ता जाणगं संपमज्जइ २ त्ता जाणगणीणेइ २ त्ता जाणाइं संवट्टेति २ त्ता दूसपीहणिइ २ त्ता, जाणाइं समिल करेइ २ त्ता जाणाइं वरभंड मंडियाइं करेइ २ त्ता, जेणेव वाहणसाला, तेणेव उवागच्छति २ त्ता वाहणसालं अणुपवेसति २ त्ता, वाहणाइं पच्चुविक्खति २ त्ता वाहणाइं पमज्जइ २ त्ता वाहणाइं अफालेइ २ त्ता वाहणाइं णीणेति २ त्ता वाहणाइं दूसपविसेति २ त्ता, वाहणाइं समील करेइ २ त्ता वाहणाइं वरभंडमंडियाइं करेइ २ त्ता

सुन कर हृष्टतुष्ट हुवा हृदय में आनंद पाया जहां रथशाला थी वहां आया ले जाने के योग्य धार्मिक रथ को देखे, देख कर योग्य रथों को ऊपर नीचे किये रथों को वस्त्रादि से झाडे, झाडकर रथशाला से बाहिर निकाले, निकलकर एक स्थान स्थापन किये, फिर उन रथों को वस्त्र [खोली] पहिनाया, रथो को चारों तरफ से बराबर ढके, उन रथों में गादी तकीये आदि भंडोपकरण स्थापन किये, रथों को सर्व प्रकार के भूषणों (घुघरे आदि से) विभूषित किये रथशाला में जिस स्थान बैल बंधे थे तहां आये वाहनशाला में प्रवेश किया रथोंको जोतने लायक बैलों को देखे, उन बैलों को हाथ फेरा कर होस्यार किये, झटक पूंछ साफ किये, उने खोलकर बाहिर निकाले, उनको झूलादि वस्त्र पहनाये

जाणगं जोएति २ त्ता, वट्टमंगाहेति २ त्ता पउगलट्ठि, पआएय सम्म आरुहइ २ त्ता, अतरासमयदसि जेणेव सेणिएराया, तेणेव उवागच्छति २ त्ता ततो करयल जाव एव वयासी—जुत्तेवे सामी ! धम्मिएजाणअप्पवरे इट्ठा भद्दत वग्गुगाहिं ॥१०॥ तएण से सेणिएराया भभमारे जाणसालियस्स अतिए एवमट्ठं सोच्चा निसम्म हट्ठ तुट्ठ जाव मज्जणघर अणुपविसति २ त्ता नाय कप्परुक्खए चेव अलंकिय विभूसिय णरिंदे जाव मज्जणघराओ पडिनिक्खमइ २ त्ता जेणेव चिल्लणादेवी तेणेव उवाग

सब बेलोंको एकत्र किये, बेलोंको घुघरमाल आदि भूषणों से भूषित किये, उनको रथों से जोथे जोतकर उनकी रस्सी ग्रहण की, माणा (लकडी) ग्रहण की, उस रथपर अपने बैठने के स्थान, बराबर बैठे, बैठकर जहां श्रेणिक राजा था तहां आये आकर दोनों हाथ जोडकर यों बोले अहो स्वामिन् ! आपकी आज्ञा प्रमाने रथ जोतकर सज्ज किये हैं यहां लाकर स्थापन किये हैं ॥ १० ॥ तब श्रेणिक राजा भंभसार रथशाला के मालिक से उक्त वचन श्रवण कर हृष्ट तुष्ट हुवा यावत् मजन स्नान करने के घर में प्रवेश किया यावत् कल्प वृक्ष के समान अलंकृत विभूषित नृपति बनकर यावत् मंजन घर से निकला, निकलकर जहां चिल्लना रानी थी तहां आया, आकर चिल्लना रानी से इसप्रकार बोला-अहो देवानुप्रिये! श्रमण

च्छइ २ त्ता चिल्लण देविं एवं वयासी—एव खलु देवाणुप्पिए! समणे भगव महावीरे आदिकर तित्थकरे जाव पुव्वाणुपुव्वि चरमाणे जाव सजमेण तवसा अप्पाण भावेमाणे वि०रति त महाफल देवाणुप्पिए! तहारूवाणं अरिहताण जाव त गच्छामो देवाणुप्पिए ! समण भगवं महावीर वदामो णमसामो सक्कारेमो सम्माणेमो, कल्लाण मंगलं देवय चेइयं पज्जुवासामो, एतेण इहभवेय परभवेय हियाए सुहाए खमाए निस्सेसाए जाव अणुगामियत्ताए भविस्सति ॥ ११ ॥ तएणं सा चिल्लणादेवी, सेणियस्स

भगवंत श्री महावीर स्वामी धर्मकी आदि करता, चार तीर्थके स्थापक यावत् पूर्वानुपूर्व चलते यावत् संयम तप से आत्मा को भावते हुवे यहां के गुणसिला नामक बगिचे में विचर रहे हैं अहो देवानुप्रिये ! तथारूप अरहंत भगवंत के नाम गोत्र का श्रवन करने में ही महाफल होता है तो व्याख्यान सुन प्रश्नोत्तर करने के फल का तो कहना ही क्या ? इसलिये अहो देवानुप्रिये ! चलो श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी को वदना नमस्कार करे, सत्कार सन्मान देवे, वे कल्याणकारी है, मंगलिक है देवाधी देव हैं ज्ञान वन्त हैं, जिन की पर्युपासना-सेवा भक्ति करे यह सेवा भक्ति इस भव में परभव में हित की कर्ता सुख की कर्ता, क्षमा की कर्ता, निस्तार की कर्ता यावत् भविष्यत में परम्परा से कल्याण कर्ता होगा ॥ ११ ॥

ण्णाअतिण एयमट्ठ सोचा निसम्म हट्ठ तुट्ठे जाव पडिसुणेति२ त्ता जेणेव मजण घरे तेणेव उवागच्छति२ त्ता, ण्हाया कयबलि कम्मा कयकोउय मगल पायच्छित्ता, किं ते वर पायपंत णेउर मणि मेहल हाररइयवत्थे उवचिय कुडग खुडुय एगावलि कट्ठमुरज तिसरयवरवलय, हेमसुत्तय कुडल उज्जोय वियाणाणोरयणभूसियगी, वीणसुय वत्थपवर परिहिया दुगुल्ल सुकुमाल कत रमाणज्जओ उत्तरिज्जा, सव्वोय सुरभि कुसुम

तव पर चिल्लनादेवी श्रेणिक राजा के पास उक्त कथन श्रवन कर अवधारकर हर्ष संतोष पाई यावत् वचन मान्य किया, मान्यकर जहां मजन (स्नान करने का] घर था तहां आई स्नान किया, कुछे किये कौतुक मंगलार्थ तिलक छापे किये फिर प्रधान नेपुर पांवोंमें पहने मणिमय मेखला-कन्दोरा कमर में पहना हृदय पर हार धारन किये, कुंडलों कान में धारन किये, मुद्रिका से अंगुलीयों मंडित की एक सरा सुवर्ण दोरा, मुरज-मादलिये, तीनसरा हार, उत्तम वलिये (चूडीयों) सुवर्ण सूत्र, इत्यादि भू षणों से सज्जा हो कुंडलों से मुख को उद्योतित किया रत्न जडित भूषणों से विभूषित हैं अंगोपांग जिस में तैसे ही विना सूत जाति के वस्त्रों धारण किये क्षोम युगल सुकुमाल वस्त्र का कंसकारी रमणिय निगकारी नाक के वायु से उडे ऐसे और शरीर नहीं देखा वे ऐसे मकडी के जाले जैसे वस्त्र धारन किये वनस्पति जातिके पत्र फूल फल के निष्पन्न हार तुरे गजरे आदि अनेक प्रकारके फूलोंके भूषण धारन किये हैं

सुदर रचित पलव सोहत कत विकसत चित्तमालावर चंदण चचिया वराभरण भूसीयगी कालागुरु धूव धूविया सिरिसमाणवेसा बहुहिं खुज्जाहिं चिकातियाहिं जाव महत्तरगा वंदपरिक्खित्ता, जेणेव बाहिरिया उवट्ठाणसाला जेणेव सेणिएराया तेणेव उवागच्छति २ त्ता ॥ १२ ॥ तएण से सेणिए राया चिल्लणाए देवीए सद्धि धाम्मिय जाणप्पवर दुरूहति २ त्ता सकोरटमल्ल दामेण छत्तेणं धारज्जमाणेण उवत्राइयगमएण

सर्व ऋतु के सुगंधि फूलों से बनाई हुई मनम्य शोभित कांतकारी है दर्शन जिस का विलास रूप आश्चर्य उत्पादक माला धारन की, उत्तम गोशीष चन्दन से शरीर को चर्चित किया, प्रधान वस्त्र भूषणों कर भूषितांगी बनी जिस के वस्त्र भूषण कृष्णागार धूप कर धूपित थे, घर साक्षात् लक्ष्मी सामान वेष कर शोभित बनी ॥ बहुत-कुब्जादासीयों, २ चिलात देश की दासीयों, ३ बापन देश की, ४ बर्बर देश की ५ बाउस देश की ६ ऋपिगणिक देश की ७ लाउगन देश की, ८ योनिक देश की ९ पल्हादि देश की, १० ल्हासिक देश की, ११ लाउसिक देश की १२ मरब देश की, १३ दामिड देश की, १४ सिंघल देश की १५ पुलिन्द देश की, १६ पुष्कल देश की, १७ बहुली देश की, १८ मुरंडी देश की १९ संवर देश की, २० पारसी देश की इत्यादि देश की दासीयों के परिवार से परिवरी हुई जहां बाहिर की उपस्थान सभा जहां श्रेणिक राजा थे तहां आई ॥ १२ ॥ तब श्रेणिक राजा चिल्लना रानी के

जाव पज्जुवासेति ॥ एव चिल्लणावि जाव महत्तरग परिक्खित्ता जेणेव समेण भगव महावीरे तेणेव उवागच्छइ २ त्ता समण भगव महावीर वंदित्ता नमंसित्ता सेणियरायं पुरओ काओ ठ्ठियाच्चेव जाव पज्जुवासति ॥ १३ ॥ तएण समणे भगव महावीरे सेणियस्स रण्णो भभसारस्स चिल्लणाए देवीए तीसे महइ महालियाए परिसाए इसि परिसाए, जइ परिसाए, मणुयपरिसाए देवपरिसाए, अणेगसयाए जाव धम्मोकहिओ ॥ परिसा पडिगया, सेणियोराया पडिगया ॥ १४ ॥ तत्थेगइयाण निग्गथाणय निग्गं-

साथ धार्मिक रथ पर आरूढ हुवे, आरुढ होकर, कोरंट वृक्ष के फूलों की माला का छत्र सिर पर धारन करते हुवे यावत् उववाइ सूत्रमें कहे अनुसार भगवत के पास आकर सेवाभक्ति करने लगे ॥ १२ ॥ इस प्रकार चिल्लना देवी यावत् पुरुषों से परिवरी हुइ जहां श्रमण भगवत श्री महावीर स्वामी थे तहां आई तहां आकर श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी को वंदना नमस्कार किया, वंदना नमस्कार कर श्रेणिक राजा को आगे रखती हुई आप पीछे मर्याद से खडी हुइ भगवंत की सेवा भक्ति करनेलगी ॥ १३ ॥ तब श्रमण भगवंत श्रीमहावीर स्वामी श्रेणिकराजा भंभसार, और चिल्लनारानी इत्यादि जो वह महापरिषद एकत्र हुई थी ऋषियो की परिषद, यतियों की परिषद मनुष्यों की परिषद देवताओं की परिषद, अनेक सहस्रोगम जिन को यावत धर्म कथा कही ॥ परिषदा पीछी गई श्रेणिक राजा चिल्लनारानी भी पीछी

थीणय सेणिय राय चिल्लणादेवी पासित्ताण इमेएयारूवे अज्झत्थिए जाव संकप्पे समुप्पज्जित्था, अहोणं सेणिए राया ! महिड्डिए जाव महासुक्खे, जेणं ण्हाए कयबलिकम्मे कयकोउय मंगल पायच्छित्ते सव्वालंकार विभूसिए चिल्लणाए देवीए सद्धिं उरालाइं माणुसगाइं भोगाइं भुंजमाणे विहरइ ण मे दिट्ठादेवा देवलोगंसि सक्खं खु अय देवे। जइ इमस्स तवनियम बंभचेरगुत्ति फलवित्तिविसेसे अत्थितया वयमवि आगमेस्साइं इमाइं एयारूवाइं उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं

गई ॥ १४ ॥ उस वक्त उस समवसरण में रहे हुवे साधु साध्वीयों श्रेणिक राजा और चिल्लनारानी को देखकर इस प्रकार का अध्यवसाय-विचार यावत् संकल्प उत्पन्न हुवा-अहो इति आश्चर्य यह श्रेणिक राजा महा ऋद्धिका यावत् महासुख का भोक्ता है जो स्नान कर कुल्लेकर कौतुक मंगलार्थ तिलक छापे कर सर्व अलंकारों से अलंकृत विभूषित हो चिल्लनारानी के साथ उदार प्रधान मनुष्य सम्बन्धी भोगोपभोग भोगवते विचरता है हमने देवलोक के देवताओं को देखे नहीं परन्तु प्रत्यक्ष निश्चय यही श्रेणिक राजा ही देवता है इस लिये यदि हमारे अनशनादि तप किया अभिग्रहादि नियम किये, ब्रह्मचर्य की गुप्ती धारन की, इत्यादि अनुष्ठान आराधन का कष्ट उठाया यह जो सच्चे हैं और इस का फल हम प्राप्त होता हो तो जिस प्रकार के उदार प्रधान मनुष्य संबंधी भोग श्रेणिक राजा को प्राप्त हुवे हैं वैसे ही आगामिक काल में हमें भी उदार

भुजमाणे विहरामो, सेत्त साहु ॥ १५ ॥ अहोण चिल्लणा देवी ! महिड्डिया जाव महासुक्खा जाणण्हाया कयबलिकम्मा जाव सव्वालंकारविभूसिया सेणिएणरन्ना सर्द्धि उरालाइ जाव माणुस्सगाइ भोगभोगाइ भुजमाणी विहराति, ण मे दिट्ठातु देवीओ देवलोगसि सक्खं खलु अय देवी ! जइ इमस्स सुचरियस्स तवनियम बभचेरवासी अट्ठारसहस्स सीलागधरा कल्लाण फलविचिविसेसे अत्थिवयमवि, आगमिस्साणं इमाइ एतारूवाइ उरालाइ माणुस्सगाइ भोगभोगाइ भुजमाणी विहरामो,

मनुष्य संबंधी काम भोग भोगवते विचरे इस प्रकार साधुओंने नियाना किया ॥१५॥ अहो इति ! आश्चर्य चिल्लना देवी महाऋद्धि की धारक यावत् महा सुख की भोक्ता जो स्नान करके कुल्ले करके यावत् सर्व प्रकार के अलंकारों से अलंकृत होकर श्रेणिक राजा के साथ उदार प्रधान यावत् मनोज्ञ यावत मनुष्य सबंधी ये काम भोगोपभोग भोगवती हुई विचरती है, हमने देवलोक की देवियों नहीं देखी परतु प्रत्यक्ष में यह देवी है, जो हमारे अनशनादि तप कर अभिग्रहादि नियमों का ब्रह्मचर्य की गुप्ती का अठारह हजार प्रकार सील्लांग रथ को धारन करने का कल्यानकारी फल वृत्ति विशेष हो तो हम भविष्य काल में जिस प्रकार चिल्लना रानी सुखोपभोग भोगवती है वैसी हम भी भोगवती विचरे ऐसा साध्वीयोंने

सेच साहुणी ॥ १६॥ अज्जो त्ति समणे भगवं महावीरे तेणं बहवे निग्गंथाय निग्गथीओय आमंतित्ता एव वयासी—सेणिय रायं चिल्लणं देवि पासित्ता इमेएतारूवे अज्झत्थिए जाव समुप्पज्जित्था अहोणं सेणिएराया महिड्डिए जाव वयमवि भूजामो सेत्त साहु ॥ अहोण चिल्लणादेवी महिड्डिया सुंदरा जाव सेत्त साहुणी ॥ सेणूणं अज्जो ! अट्ठे समट्ठे ? हंता अत्थि ॥ १७ ॥ एव खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते-इणमेव निग्गंथे पावयणे सच्चे अणुत्तरे पडिपुण्णे केवलिए समुद्धे णेयाउए सल्लकत्तेण सिद्धि-

नियाना किया ॥ १६ ॥ अहो आर्यो ! इति श्रमण भगवंत श्री महावीर स्वामी उन साधु साध्वीयों को बोलाकर यों कहने लगे—अहो निर्ग्रंथ निर्ग्रंथियों ! श्रेणिक राजा चिल्लना रानी को देखकर इस प्रकार अध्यवसाय यावत् उत्पन्न हुवे अहो इति आश्चर्य श्रेणिक राजा महाऋद्धि का धारक महा सुख का भोक्ता यावत् साधुओने नियाना किया और अहो आश्चर्य चिल्लना देवी महाऋद्धि धारक यावत् महा सुख की भोक्ता अत्यन्त सुदर यावत् साध्वीयोंने नियाना किया अहो आर्यो ! निश्चय से यह अर्थ सच्चा है ? वे सब बोले हां भगवान ! सत्य है ॥ १७ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तों मैंने इस प्रकार के धर्म की प्ररूपना कि है कि जो निग्रन्थ के प्रवचन-तीर्थंकर भाषित द्वादशांग रूप जो जो धर्म है वह सर्व धर्मों में अनुत्तर प्रधान धर्म है, प्रतिपूर्ण है निःकेवल रागद्वेष रहित है, अत्यन्त शुद्ध पवित्र निर्मल है,

मग्गे मुत्तिमग्गे णिज्जाणमग्गे, णिव्वाणमग्गे अवितहमविसंधि सव्वदुक्खप्पहीणमग्गे इच्छविया जीवा सिज्झति बुज्झंति मुचति परिनिव्वायति सव्वदुक्खाणमत करति ॥१८॥ जस्सण धम्मस्स निग्गथे सिक्खाए उवट्ठिए विहरमाणे पुरादिगिंछाए पुरा पिवासाए पुरावायातवेहिं पुरापुट्ठे विरूवरूवेहिं परिसहोवसग्गेहिं उदिण्ण कामजाए

न्यायरूप है, मायादि तीनो शल्य का नाशक है, सर्व कार्यार्थ सिद्ध करने का रास्ता है, कर्म बन्धन से मुक्त करने का रास्ता है, संसार से पार होने का रास्ता है जहां से पीछा आना नहीं ऐसा निर्वाण स्थान प्राप्त करने का रास्ता है अवितथ्य निसंदेह रास्ता है जन्मादि या शरीरादि सर्व दुःखों का क्षय करने का रास्ता है इस मार्ग में जो जीवों स्थिर हो कर रहे हैं वे जीवों सर्व अर्थ की सिद्धिकर सिद्ध हुवे हैं केवल ज्ञान केवल दर्शन कर लोकालोक के सर्व भाव के जानने देखने वाले हुवे, कर्म फासी से मुक्त हुवे हैं छूटे हैं, कषाय दावाग्नि को बुझाकर शीतलीभूत हुवे हैं, शारीरिक मानसिक सर्व दुःखका क्षय किया है ॥ १८ ॥ इस धर्म सम्बन्धी असेवना ज्ञान की और ग्रहणा आचार की इन दोनों शिक्षा में जो निर्ग्रन्थ उपस्थित सावधान हुवे हैं इस ही शिक्षा प्रमाने जो विचरते प्रवर्तते हैं इस शिक्षा में प्रवर्तते हैं क्षुधा तृषा वायु-शीत, ताप इत्यादि विविध प्रकार के परिषह कर तथा देव मनुष्य तिर्यंच सम्बन्धी उपसर्गों स्पर्शित हुवे, तथा मोहोदय काम विकार का उदय हुवे

यावि विहरेज्जा ॥ १९ ॥ सेय परक्कमेज्जा सेयपरक्कममाणे पासेज्जा, जे इमे उग्गा उग्गपुत्ता महामाउया भोगा भोगपुत्ता, महामाउय तेसिणं अणतरस्स, अइज्जायमाणस्सवा णिज्जायमाणस्सवा पुरओ महंदासी दास किंकर पुरिसा अंतो परिक्खत्त छत्तभिंगार गहाय निगच्छति ॥ तयाणतरंचण पुरओ महा आसा आसवरा, उभओ तेसिं णागा णागवरा, पिट्ठओ रहा रहवरा, सगिल्ली सेउधरिय, सेयछत्ते, अब्भुग्गए भिंगारे, पग्गहिय तालियंटे पवियन्न सेयचामरा वालवीयणाए, अभिक्खण

उस को सम्यक् प्रकार सहन करे संयम धर्म में विशुद्धवृत्ति से विचरे यथा उचित पराक्रम करे ॥ १९ ॥ उक्त प्रकार संयम धर्म में प्रवर्तता हुवा अपनी ज्ञान दृष्टी से देखे जो यह प्रत्यक्ष उग्रकुलोत्पन्न उग्र के पुत्रों, महा माता से जन्म पाये हुवे अर्थात् उत्तम आस्तिक, भोग कुलोत्पन्न भोग के पुत्रों महा माता से जन्म पाये हुवे इत्यादि का अन्तरमें अर्थात् ग्रामादि से गमन कर आते हुवे नगर में तथा गृह में प्रवेश करते हुवे या अपने घर से विदेशमें जाते हुवे जिनों के आगे महावृन्द दास दासी नोकर नोकरनी चलते हैं. पायदलों के परिवार से परिक्षिप्त-वेष्टित कितनेक छत्र धारन कर रहे हैं कितने पानी की झारी ग्रहण कर चलते हैं तदनन्तर उन के आगे बडे घोडे चलते हैं प्रधान हाथी दोनों तरफ चलते हैं, जिन के पीछे रथ चलते हैं इस प्रकार बहुत घोडे हाथी रथ पायदल के समुदाय से परिवरे हुवे, जिन के सिर पर

अचति जायइ णिजातिय सप्पभा, सपुव्वावरचण, ण्हाये कयबलीकम्मे जाव सव्वालंकार विभूसिया, महति महालियाए कूडागार सालाए, महति महालियसि सिंहासणसि जाव सव्वराइणिएणं जोतिणाज्झियायमाणाणं, इत्थिगुम्म परिवुडे महयाहय नट्ट गीय वाइय तंति तल तालतुडिय घण मुयग मद्दल पडुप्पवाय रवेण उरालाइं माणुस्सगाइं भोगभोगाइं भुंजमाण विहरति तस्सण एगमवि आणवेमाणस्स जाव चत्तारि पंच अवुत्ता चेव अब्भुट्ठेति भण देवाणुप्पिया ! किं करेमो किं आहारामो किं

उज्वल श्वेत छत्र धारन किया है, अभ्युद्गत-सन्मुख मगट ग्रहण किये हैं तालपत्र पंखे उत्कृष्टता से वींजा रहे हैं ढलराते हैं श्वेत चामरों उन का देखनेको बहुत से लोगों घर के बाहिर आते हैं घर के अंदर जाते हैं उस की प्रभा कांतिशोभित है ऐसे स्नान कर कुछे कर यावत् सब अलङ्कारों कर अलंकृत महा विस्तारवत कुटागार शाला के सामान घर में, महा जबर यावत् रत्न जडित सिंहासन पर रोशनी की ज्योति झगमगती हुइ के प्रकाश में, स्त्रीयों के वृन्द कर परिवरा हुवा महा जबर महा नाटक गीत वादित्र तंत्रिक ताल तालीयों तृन्ति-तदुरादि घन मृदंग मादल पटह पवाइ इत्यादि के नाद युक्त प्रधान मनुष्य संबधी भोगोपभोग भोगवता विचरता है वह एक मनुष्य को बोलाता है तब यावत् चार पांच स्त्री पुरुष खडे होजाते हैं और वे कहते हैं कि—अहो देवानुप्रिय ! हम क्या करें ? क्या भोजन निष्पन्न करें ? क्या लाकर देवें ?

उवणेमो किं अविदामो किंते हियं इरिथय किंते आसगस्स सदति ॥ २० ॥ ज पासित्ता निग्गथे निदाण करेइ जइ इमस्स तव नियम बमचेर वासस्स तंचेव जाव साहु ॥ २१ ॥ एव खलु समणाउसो ! निग्गथे निआणं किच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइ अप्पडिक्कंते कालमासे कालकिच्चा अन्नयरेसुदेवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, महिड्ढियेसुवा जाव चिरठितीएसुवा सेण तत्थदेवे भवति महिड्ढिए जाव ठिइए ॥ २२ ॥ ताओ देवलोगाओ आउक्खएण भवक्खएण, अणतर चयं चइत्ता जेइमे उग्गपुत्ता महामाउया तेसिण अण्णयरसि कुलसि पुत्तत्ताए पच्चायति, सेण तत्थ

क्या कराना चाहते हैं ? क्या तुमारी इच्छा है ? किस को चाहते हो ? किस पर रुचि है ? ॥ २० ॥ इत्यादि पुण्य के ठाठ अवलोकन कर जो कोई श्रमण निर्ग्रंथ नियाना करें कि जो हमारे इस तप नियम संयम ब्रह्मचर्य का फल भविष्य में होवे तो हमारे को भी उक्त प्रकार के सुख की प्राप्ति होवो ' ॥ २१ ॥ तब निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! कोइ साधु साध्वी उक्त प्रकार का नियाना करे, अन्तिम अवस्थान का उस की आलोचना निंदना प्रतिक्रमना नहीं करे वह काल समाप्त हुवे मृत्यु पाकर देवलोक में देवतापने उत्पन्न होवे वह देवता महाऋद्धि का धारक यावत् दीर्घ बहुत सागरोपम बहुत पल्योपम की स्थिति का धारक हो ॥ २२ ॥ फिर वह उस देवलोक से आयुष्य का स्थिति का भव का क्षयकर निरंतर वहां से

दारए भवति सुकुमाल पाणिपाए जाव सुरूवे ॥ २३ ॥ तएण से दारए उमुक्कबाल भावे विण्णाय परिणाय मेत्ते जोवणगमणुपत्ते सयमेव पेइय दाय पडिवज्जति तस्सेवअइजायमाणस्सवा णिज्जायमाणस्सवा पुरओ जाव दासी दास जाव किंते आसगस्स सदति ॥ २४ ॥ तस्सण तहप्पगाररस पुरिस जायस्स तहारूवे समणेवा माहणेवा उभओ कालं केवली पण्णत्त धम्म

चाकर इस मृत्यु लोक में उग्रकुल को पुत्र उत्तम माता के पक्ष वाले इस प्रकार के किसी कुल में पुत्र पने उत्पन्न होवे वहां लडका होवे वह सुकुमाल हाथ पांव के तले वाला यावत् सुरूप हुवे ॥ २३ ॥ तब वह बालक बाल्यावस्था से मुक्त हो विज्ञान अवस्था को प्रणमित हो यौवन अवस्था को प्राप्तहो स्वयं-अपनी मालकी घर में प्राप्तकरे उसके देश से आते हुवे देशांतर को जाते हुवे आगे पीछे दास दासी उक्त प्रकार सब करना एक को बोलावे चार पांच जने खडे होवें और पूछें कि क्या करते हो, चाहे सो प्रकार का जो नियाना करके पुरुषो में उत्पन्न होता है इसको कोई तथाप्रतिरूप श्रमण-तपस्वी-साधु माहण-मत मारो २ ऐसे उपदेश के करता* दोनों वक्त [प्रथम पहर में और अन्तिम (चौथे) प्रहर में केवली भगवंत का कथा हुवा धर्म कह सकते हैं ? हां कह सकते वह उस धर्म को सुन सकता है मान्य कर सकता है ?

---

* श्रमण शब्द का साधु और माहण शब्द का श्रावक भी अर्थ करते हैं

उवणेमो किं अविद्धामो किंते हिय इत्थिय किंते आसगस्स सदति ॥ २० ॥ ज पासित्ता निग्गंथे निदाण करेइ जइ इमस्स तव नियम बंभचेर वासस्स तंचेव जाव साहु ॥ २१ ॥ एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथे निआण किच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइ अपडिक्कते कालमासे कालकिच्चा अन्नयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, महिड्डियेसुवा जाव चिरठितीएसुवा सेण तत्थदेवे भवति महिड्डिए जाव ठिइए ॥ २२ ॥ ताओ देवलोगाओ आउक्खएण भवक्खएण, अणंतर चयं चइत्ता जेइमे उग्ग-पुत्ता महामाउया तेसिण अण्णयरसि कुलसि पुत्तत्ताए पच्चायति, सेण तत्थ

क्या कराना चाहते हैं ? क्या तुमारी इच्छा है ! किस को चाहते हो ' किस पर रुचि है ! ॥ २० ॥ इत्यादि पुन्य के ठाठ अवलोकन कर जो कोई श्रमण निर्ग्रंथ नियाना करें कि, जो हमारे इस तप नियम संयम ब्रह्मचर्य का फल भविष्य में होवे तो हमारे को भी उक्त प्रकार के सुख की प्राप्ति होवो ' ॥ २१ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! कोइ साधु साध्वी उक्त प्रकार का नियाना करे, अन्तिम अवस्थान स्थ उस की आलोचना निंदना प्रतिक्रमना नहीं करे वह काल समाप्त हुवे मृत्यु पाकर देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे वह देवता महाऋद्धि का धारक यावत् दीर्घ बहुत सागरोपम बहुत पल्योपम की स्थिति का धारक हो ॥ २२ ॥ फिर वह उस देवलोक से आयुष्य का स्थिति का भव का क्षयकर निरंतर वहां से

निगंथी सिक्खाए उवट्ठिया विहरमाणी पुरादिगंछाए जाव उदिण्णकामा जाव विहरेज्जा, साय परक्कमेज्जा साय परक्कममाणी पासेज्जा ॥ २७ ॥ से जाइ इमाओ इत्थियाओ भवंति—एगा एगजाया, एगाभरणाविहिणा तेलपिलाइवा सुसंगोपिया चेलपिलाइवा सुसपरिग्गहिया रयण करडग समाणी, तीसेणे अइजाय माणिएवा, निज्जायमाणिएवा पुरओ मह दासीदास जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ २८ ॥

यह ग्रहण आसेवन शिक्षा को अंगीकार कर विचरे उसे क्षुधादि परिषह देवादि उपसर्ग या मोहोदय से काम विकार उत्पन्न हो उसे समभाव से सहे संयम मार्ग में सदैव पराक्रम (उद्यम) करे ॥ २७ ॥ वह पराक्रम करती हुई देखे कि यह स्त्री वह एक ही जगत् में उत्पन्न हुई उस सामान्य अन्य नहीं ऐसी रूपादि गुणवान् एक ही है, जाति के रत्नमय आभरण को धारण करनेवाली तेल की शीशी की माफक मातपित्रों से तथा पतिघर से रक्षित होकर रही हुई, अत्यन्त गोपकर छिपाकर अर्थात् सर्व दुःखों से बचाकर वृद्धि की हुई, उत्तम जरी आदि के वस्त्र की संदूक के सामान संरक्षण कराई हुई, बहुत श्रेष्ठ प्रकार प्रेम पूर्वक ग्रहण कराई हुई रत्नों के करंड [तिजोरी] सामान प्रियकारी, यह श्वसुरघर पितृ घर को जाती हुई पितृ घर से श्वसुर घर को जाती हुई उस के आगे पीछे दास दासी आदि का वृन्द होवे यावत् वह एक को बोलावे और चार पांच खड़ आवे, क्या इच्छा है ? क्या वस्तु तुमे स्वादिष्ट है ?

माइक्खेज्जा ? हंता माइक्खेज्जा, सेण पडिसुणेज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे अभविएणंसे तस्सधम्मस्स सवणयाए, सेयं भवति, महिच्छे, महारंभे, महापरिग्गहे अहम्मिए जाव दाहिणगामे नेरइए आगमेस्साए दुल्लभ बोहिया भवंति ॥ २५ ॥ एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफल विवागे ज णो संचाएति केवलि पण्णत्तं धम्म पडिसुणित्तए ॥ १॥२६ ॥ एवं खलु समणाउसो! मए धम्मे पण्णत्ते तं जहा इणमेव निग्गंथे पावयणे सच्चे जाव सव्व दुक्खाण अंतकरेइ जस्सणं धम्मस्स

यह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् उक्त प्रकार का नियाना करने वाला श्रमण माहण के पास धर्म श्रवन नहीं कर सकता है क्योंकि नियाने के प्रभाव से वह प्राप्त रुचि में महा इच्छा वाला होता है महा आरंभ करने वाला होता है अधर्मी होता है यावत् दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होने वाला होता है और उस को आगमिक काल में बोधबीज सम्यक्त्व की प्राप्ति होना दुर्लभ होता है ॥ २५ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाने का इस प्रकार पापरूप विपाक होता है वह केवली प्रणित धर्म को श्रवण करने समर्थ नहीं होता है यह प्रथम नियाना कहा ॥ १ ॥ २६ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तों ! मैंने धर्म कहा तद्यथा— निर्ग्रन्थ के प्रवचन यावत् सर्व शारीरिक मानसिक दुःख के अन्त का करता उस धर्म में साध्वी उपस्थित हुई

निग्गंथी सिक्खाए उवट्ठिया विहरमाणी पुरादिगछाए जाव उदिण्णकामा जाव विहरेज्जा, सायं परक्कमेज्जा साय परक्कममाणी पासेज्जा ॥ २७ ॥ से जाइ इमाओ इत्थियाओ भवंति—एगा एगजाया, एगाभरणाविहिणा तेलपिलाइवा सुसंगोपिया चेलपिलाइवा सुसपरिग्गहिया रयण करडग समाणी, तीसेणं अइजाय माणिएवा, निज्जायमाणिएवा पुरओ मह दासीदास जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ २८ ॥

यह श्रमणी अमेवन शिक्षा को अंगीकार कर विचरे उसे क्षुधादि परिषह देवादि उपसर्ग या मोहोदय से काम विकार उत्पन्न हो उसे समभाव से सहे संयम मार्ग में सदैव पराक्रम (उद्यम) करे ॥ २७ ॥ यह पराक्रम करती हुई देखे कि यह स्त्री यह एक ही जगत् में उत्पन्न हुई उस सामान्य अन्य नहीं ऐसी रूपादि गुणवान् एक ही है, जाति के रत्नमय आभरण की धारण करनेवाली तेल की शीशी की माफक मातपित्रों से तथा पतिघर से रक्षित होकर रही हुई, अत्यन्त गोपकर छिपाकर अर्थात् सर्व दुःखों से बचाकर वृद्धि की हुई, उत्तम जरी आदि के वस्त्र की संदूक के सामान संरक्षण कराई हुई, बहुत श्रेष्ठ प्रकार प्रेम पूर्वक ग्रहण कराई हुई रत्नों के करंड [तिजोरी] सामान प्रियकारी, यह श्वसुरघर पितृ घर को आती हुई पितृ घर से श्वसुर घर को जाती हुई उस के आगे पीछे दास दासी आदि का वृन्द होवे यावत् यह एक को बोलावे और चार पांच उठ आवे, क्या इच्छा है ? क्या वस्तु तुमे स्वादिष्ट है ?

माइक्खेज्जा ? हंता माइक्खेज्जा, सेण पडिसुणेज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे अभविएणसे तस्सधम्मस्स सवणयाए, सेय भवति, महिच्छे, महारंभे, महापरिग्गहे अहम्मिए जाव दाहिणगामे नेरइए आगमेस्साणं दुल्लभ बोहिया भवंति ॥ २५ ॥ एव खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफल विवागे ज णो संचाएति केवलि पण्णत्तं धम्मं पडिसुणित्तए ॥ १॥२६ ॥ एव खलु समणाउसो! मए धम्मे पण्णत्ते त जहा इणमेव निग्गंथे पावयणे सच्चे जाव सव्व दुक्खाणं अंतंकरेइ जस्सणं धम्मस्स

यह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् उक्त प्रकार का नियाना करने वाला श्रमण ब्राह्मण के पास धर्म श्रवन नहीं कर सकता है क्योंकि नियाने के प्रभाव से वह मास रुचि में महा इच्छा वाला होता है महा आरंभ करने वाला होता है अधर्मी होता है यावत् दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होने वाला होता है और उस को आगमिक काल में बोधबीज सम्यक्त्व की प्राप्ति होना दुर्लभ होता है ॥ २५ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाने का इस प्रकार पापरूप विपाक होता है वह केवली भाषित धर्म को श्रवण करने समर्थ नहीं होता है यह प्रथम नियाना कहा ॥ १ ॥ २६ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तों ! मैंने धर्म कहा तद्यथा— निग्रन्थ के प्रवचन यावत् सर्व शारीरिक मानसिक दुःख के अन्त का करता उस धर्म में साध्वी उपस्थित हुई

निगंथी सिक्खाए उवट्ठिया विहरमाणी पुरादिगंछाए जाव उदिण्णकामा जाव
विहरेज्जा, सायं परक्कमेज्जा साय परक्कममाणी पासेज्जा ॥ २७ ॥ से जाइ इमाओ
इत्थियाओ भवंति—एगा एगजाया, एगाभरणाविहिया तेलपिलाइवा सुसंगोपिया
चेलपिलाइवा सुसपरिग्गहिया रयण करडग समाणी, तीसेणं अइजाय माणिएवा,
निज्जायमाणिएवा पुरओ मह दासीदास जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ २८ ॥

वह श्रमण असेवन शिक्षा को अंगीकार कर विचरे उसे क्षुधादि परिषह देवादि उपसर्ग या मोहोदय से
काम विकार उत्पन्न हो उसे समभाव से सहे संयम मार्ग में सदैव पराक्रम (उद्यम) करे ॥ २७ ॥ वह
पराक्रम करती हुई देखे कि यह स्त्री वह एक ही जगत् में उत्पन्न हुई उस सामान्य अन्य नहीं ऐसी
रूपादि गुणवान् एक ही है, जाति के रत्नमय आभरण की धारण करनेवाली तेल की शीशी की माफक
मारिओं से तथा पतिघर से रक्षित होकर रही हुई, अत्यन्त गोपकर छिपाकर अर्थात् सर्व दुःखों से
बचाकर वृद्धि की हुई, उत्तम जरी आदि के वस्त्र की संदुक के समान संरक्षण कराई हुई, बहुत श्रेष्ठ
प्रकार प्रेम पूर्वक ग्रहण कराई हुई रत्नों के करंड [तिजोरी] समान प्रियकारी, वह श्वसुरघर पितृ
घर को आती हुई पितृ घर से श्वसुर घर को जाती हुई उस के आगे पीछे दास दासी आदि का वृन्द
होवे यावत् वह एक को बोलावे और चार पांच उठ आवे, क्या इच्छा है ? क्या वस्तु तुमे स्वादिष्ट है ?

ज पासित्ता णिग्गंथी णिदाण करेइ जाई इमस्स सुचयस्स तव नियम जाव भुंजमाणा विहरामि सेत्तं साहुणी ॥ २९ ॥ एवं खलु समणाउसो ! णिग्गंथी णिदाणं किच्चा, तस्स ठाणस्स अणालोइए अपडिक्कंते कालमासे कालंकिच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति महिड्ढिएसु जाव साणं तत्थ देवे भवति जाव भुंजमाणे विहरइ ॥ ३० ॥ साण ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइ क्खएणं अणंतर चयं चइत्ता जे इमे उग्गपुत्ता महा माउया भोगपुत्ता महामाउया,

या प्रकृति को अनुकूल है। ॥२८॥ इस प्रकार सुखानुभव करती स्त्रीको यह निर्ग्रन्थिनी देखकर विचार करे कि जो हमारे तप संयमादि करणिका फल होवे] मैं भी भविष्य काल में इस ही प्रकार का सुखोपभोग करती विचरू ! इस प्रकार साध्वी नियाना करे ॥ २९ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! साध्वी उक्त प्रकार का नियाना कर उसकी आलोचना प्रतिक्रमना किये विना काल के अवसर में काल मास होकर अन्य किसी देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे वह देवता महाऋद्धिक यावत् वह साध्वी वहां देवी हो कर देव सम्बन्धी भोग भोगवती विचरे ॥ ३० ॥ फिर उस देवलोक से आयुष्य स्थिति भवक्षय क्षय करके अनन्तर चवकर जो यहां उग्रकुल हो महा मोती हो-निर्मल जाति हो, भोगकुल हो, महा माता

एतेसिण अण्णयरसि कुलसि दारियत्ताए पच्चायति, साण तत्थ दारिया भवति मुकुमाला जाव सुरूवा ॥ ततेण तं दारियं अम्मापियरो उमुक्कबालभावे जाव विण्णाय परिणायमित्त जोव्वणग मणुपत्ते पडिरूवेणं सुक्केणं पडिरूवेण भत्तारस्स भारियत्ताए दलयंति, साणं तस्स भारिया भवति, एगा एग जाया इट्ठा कंता जाव रयण करडग समाणी, तीसे जाव अतीजायमाणीएवा निज्जायमाणीएवा, पुरओ महं दासीदास जाव किं ते आसगस्स सदति ॥ ३१ ॥ तीसेणं तहप्पगाराए इत्थीयाए

हो, ऐसे उत्तम अन्य किसी प्रकार के कुल जाति में पुत्री पने उत्पन्न होवे, वह वहां लडकी सुकोमल सुरूप शरीर की धारक होवे तब वह लडकी बाल्यावस्था से मुक्त हो विज्ञान अवस्था को परिणमित हो यौवन अवस्था को प्राप्त हो, यथा उचित प्रतिरूप सुरूप की धारक होगी तब उस को दान में देवें प्रतिरूप यथा उचित युवक को भरतार बनावे, उस को भारिया बनावे, तब वह एक ही भारिया होवे अर्थात् उस पर दूसरी शोक न होने से अकेली अपने पति को इष्ट कंत प्रिया मनोज्ञ यावत् रत्नकरंड के समान होवे जिस वक्त वह कहीं जावेगा या आवेगा तब उस के आगे पीछे बहुत दास दासी यावत् क्या आज्ञा देते हो! यहां तक कहना उस नियाने के प्रभाव से वह स्त्री उक्त ऋद्धि पावे ॥ ३१ ॥ प्रश्न

जं पासित्ता णिग्गंथी णिदाणं करेइ जाई इमस्स सुचयस्स तव नियम जाव भुजमाणा निहरामि, सेत्त साहुणी ॥ २९ ॥ एवं खलु समणाउसो ! णिग्गंथी णिदाणं किचा, तस्स ठाणस्स अणालोइए अपडिकंते कालमासे कालंकिचा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति महिड्ढिएसु जाव साणं तत्थ देवे भवति जाव भुजमाणे विहरइ ॥ ३० ॥ साण ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएणं ठिइ क्खएणं अणंतर चयं चइत्ता जे इमे उग्गपुत्ता महा माउया भोगपुत्ता महामाउया,

या प्रकृति को अनुकूल है! ॥२८॥ इस प्रकार सुखानुभव करती स्त्रीको वह निर्ग्रन्थिनी देखकर विचार करे कि जो हमारे तप संयमादि करणिका फल होवे] मैं भी भविष्य काल में इस ही प्रकार का सुखोपभोग करती विचरूं ! इस प्रकार साध्वी नियाना करे ॥ २९ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! साध्वी उक्त प्रकार का नियाना कर उसकी आलोचना प्रतिक्रमना किये बिना काल के अवसर में काल प्राप्त होकर अन्य किसी देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे वह देवता महाऋद्धिक यावत् वह साध्वी वहां देवी हो कर देव सम्बन्धी भोग भोगवती विचरे ॥ ३० ॥ फिर उस देवलोक से आयुष्य स्थिति भवका क्षय करके अनन्तर चवकर जो यहां उग्रकुल हो महा माता हो-निर्मल जाति हो, भोगकुल हो महा माता

पुरादिगम्छाए जाव सयपरक्कममाणे पासिज्जा इमाओ इत्थिया भवति एगा एगजाया जाव किं ते आसगस्स सदाति, जं पासिता निग्गंथे निदाण करेइ दुक्ख खलु पुमत्ताए, इत्थितणयं साहु जे इमे उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया एतेसिण अण्णयरेसु उच्चावएसु महासमरसगामेसु उच्चावयाइ सत्थाइ उरसिचेव पडिसवेदेति, तं दुक्खं खलु पुमत्ताणए इत्थीयाणसाहुज्जइ, जइ इमं तवनियम बम्भचेरवासस्स फलमित्थित्रिसेसे अत्थिवयमवि

प्रकार की शिक्षा में निर्ग्रंथ उपस्थित होते हैं अंगीकार कर विचरते हैं वे क्षुधादि परिषह देवादि उपसर्ग मोहोदय आदि का पराजय करते हैं उन के देखने में आवे—यह स्त्री एकाकी है पति को अत्यन्त प्रियकारिणी है यावत् एक बोलाये चार पांच आज्ञा ग्रहण करने तत्पर होते हैं इस प्रकार उस को देख नियाना करे कि— निश्चय कर पुरुषपना है यह तो बड़ा दुःखदायी है जिसे अनेक संसारिक कष्ट उठाने पड़ते हैं परंतु स्त्री का जन्म है सो सुखदायी है—अच्छा है, प्रत्यक्ष देखाता है जो इस जगत में उग्र कुलोत्पन्न पुत्र है महा माता से जन्म पाये हुवे हैं भोग कुलोत्पन्न पुत्र हैं महा माता से जन्म पाये हुवे हैं इत्यादि में अन्य को ऊंच नीच संग्राम उत्पन्न हुवे उस महा समर संग्राम में ऊंच नीच खड्गादि तीन बाणादि शस्त्रकर हृदय भेदाने से महा दुःख को वेदते हैं इत्यादि दुःख पुरुषों को ही होता है परंतु स्त्रियों को नहीं होता है, इसलिये स्त्री का जन्म ही अच्छा है जो

तहाम्वे समणेवा माहणेवा उभओकाल केवालि पण्णत्तं धम्म माइक्खेजा ? हंता माइक्खेजा ॥ साण भंते ! पडिसुणेज्जा ? णोइणट्ठे समट्ठे, अभवियाणं सा तस्स धम्मस्स सवणयाए सेयं भवति–महिच्छा महारंभा महापरिग्गहा जाव दाहिण गामिए णेरइए आगमिस्साए दुलभ बोहियाएवि भवति एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफलविवागे जं णो संचाएति केवली पण्णत्त धम्म पडिसुणेत्ता ॥२ ॥३२॥ एवं खलु समणाउसो ! मएधम्मे पण्णत्ते-इणमेव निग्गंथ पावयणे जाव अंतं करेइ जस्सणं धम्मस्स निग्गंथे सिक्खाए उवट्ठिए विहरमाणे

उस को तथारूप श्रमण माहण केवली भाषित धर्म सुना सकते हैं क्या ? हां सुना सकते हैं वह स्त्री धर्म सुन सकती है क्या ? अहो शिष्य ! यह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् नहीं सुन सकती है उस नियाने के योग्य वह धर्म सुनने के अयोग्य होती है, वह महाइच्छा-तृष्णा महा आरंभ महा परिग्रह करके दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होती है और आगमिक काल में बोधबीज सम्यक्त्व की प्राप्ति उसे दुर्लभ होगा ॥ अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाना का इस प्रकार पाप रूप फल का विपाक होवाहै, वह केवली भाषित धर्म सुन ही नहीं सकती है ! ॥ ३ ॥ ३२ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने इस प्रकार धर्म कहा है यह निर्ग्रंथ के प्रवचन है यावत अन्त के करनेवाले हैं, इस धर्म की दोनों

पुराद्दिगम्छाए जाव सेयंपरक्कममाणे पासिज्जा इमाओ इत्थिया भवति एगाएगजाया जाव किं ते आसगरस सदाति, जं पासिता निग्गंथे निदाण करेइ दुक्ख खलु पुमत्ताए, इत्थितणय साहु, जे इमे उग्गपुत्ता महामाउया मोगपुत्ता महामाउया एतेसिणं अण्णयरेसु उच्चावएसु महासमरसगामेसु उच्चावयाइ सत्याइ उरसिचेन पडिसंवेदेति, तं दुक्खं खलु पुमत्तापय इत्थीयाणसाहु ज्जइ, जइइमं तवनियम वभचेरवासस्स फलमिचिविसेसे अत्थिवयमवि

मकार की शिक्षा में निर्ग्रंथ उपस्थित होते हैं अंगीकार कर विचरते हैं वे क्षुधादि परिषह देवादि उपसर्ग मोहोदय आदि का परांजय करते हैं उन के देखने में आवे—यह स्त्री एकाकी है पति को अत्यन्त प्रियकारिणी है यावत् एक बोलाये चार पांच आज्ञा ग्रहण करने तत्पर होते हैं इस प्रकार उस को देख नियाना करे कि— निश्चय कर पुरुषपना है यह तो महा दुःखदायी है उसे अनेक सांसारिक कष्ट उठाने पडते हैं परंतु स्त्री का जन्म है सो सुखदायी है—अच्छा है, प्रत्यक्ष देखाता है जो इस जगत में उग्र कुलोत्पन्न पुत्र है महा माता से जन्म पाये हुवे हैं भोग कुलोत्पन्न पुत्र हैं महा माता से जन्म पाये हुवे हैं इत्यादि में अन्य को ऊंच नीच संग्राम उत्पन्न हुवे उस महा समर संग्राम में ऊच नीच खड्गादि नीच शस्त्रादि शस्त्रकर हृदय भेदाने से महा दुःख को वेदते हैं इत्यादि दुःख पुरुषों को ही होता है परंतु स्त्रियों को नहीं होता है, इसलिये स्त्री का जन्म ही अच्छा है जो

आगमेस्साणं जाव इमेयारूवाइं उरालाइं इत्थिभोगाइं भुंजिस्सामो सेत साहु ॥३३॥ एवं खलु समणाउसो ! निग्गंथे निदाण किच्चा तस्सठाणस्स अणालोइय अपडिक्कंते जाव अपडिवज्जित्ता कालमासे काल किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, जाव सेण तत्थ देवे भवति महिड्डिए जाव विहरति ॥३४॥ सेणं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएण जाव अण्णयरंसि कुलंसि दारियत्ताए पच्चायाति, जाव तेण दारिय जाव भारियत्ताए दलयति, साण तस्स भारिया भवति, एगा एग जायाजाव तहेव सव्वं

मेरे इस तप नियम ब्रह्मचर्य का फल आगामिक काल में प्राप्त हो तो भविष्य काल में उक्त प्रकार की स्त्री जैसे सुख भोक्ता स्त्री होवूं उदार प्रधान स्त्री संबंधी भोगोपभोग भोगवती हुई विचरूं यह साधु भाविय कहा ॥ ३३ ॥ यों निश्चय कहो श्रमण आयुष्मन्तो ! यों साधु नियाना करते हैं उस नियानेके स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना प्रायश्चित्त लिये बिना काल के अवसर में आयुष्य पूर्ण देवलोक में महा ऋद्धिक यावत् महा सुख का भोक्ता देवता होता है ॥ ३४ ॥ उस देवलोक से आयुष्य का भव का स्थिति का क्षय कर यावत् उच्च कुल में पुत्रिपने उत्पन्न होवे यावत् वह कन्या को पतिके सुपरत करे, वह उस की भार्या बने, एकाकी यावत् उक्त प्रकार सब कहना वह घर के बाहिर जाते

माणियव्वं ॥ तीसेण अइजायमाणीएवा जाव किं ते आसगस्स सदति॥ ३ ५॥ तीसेण तह-प्पगाराए इत्थियाए तहारूवे समणेवा माहणेवा धम्म आइक्खेज्जा?हता आइक्खेज्जा जाव साण पडिसुणेज्जा? णो इणट्ठे समट्ठे अभवियाणं,सा तस्स धम्मस्स सवणयाए, साय भवति महिच्छा जाव दाहिणगामिए णेरइए,आगमेस्साण दुल्लभ बोहियाएवि भवति॥ ३ ६॥एवखलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफल विवागे भवति ज णो संचाएति केवलि पण्णत्त धम्म पडिसुणित्तए ॥ ३ ॥ ३ ७ ॥ एव खलु समणाउसो ! मए

आते पीछी दास दासी आदि का परिवार उस के साथ रहे यावत् एक बोलाने से चार पांच आवे क्या आज्ञा देते हो ऐसा कहे ॥ ३५ ॥ प्रश्न—वह इस प्रकार की स्त्री साधु माहण के पास केवली भणित धर्म श्रवण कर सके ? यह अर्थ योग्य नहीं अर्थ धर्म श्रवण करने योग्य नहीं होती है, परंतु वह महा इच्छा महा परिग्रह से दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होवे आगामिक काल में दुर्लभ बोधी होवे ॥ ३६ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तों ! उस नियाने के फल इस प्रकार विपाकरूप होते हैं यावत् केवली भणित धर्म की प्राप्ति नहीं कर सकता है ॥ ३ ॥ ३७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा यह निर्ग्रंथ के प्रवचनों की आराधना कर यावत् सब दुःख का अंत करते हैं

आगमेस्साणं जाव इमेयारूवाइं उरालाइं इत्थिभोगाइं भुंजिस्सामो सेत साहु ॥३३॥ एवं खलु समणाउसो! निग्गंथे निदाण किञ्चा तस्सठाणस्स अणालोइय अपडि कंते जाव अपडिवज्जित्ता कालमासे काल किञ्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, जाव सेण तत्थ देवेभवति महिड्डिए जाव विहरति ॥३४॥ सेणं ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं भवक्खएण जाव अण्णयरसि कुलंसि दारियत्ताए पञ्चायाति, जाव तेण दारियं जाव भारियत्ताए दलयति, साण तस्स भारिया भवति, एगा एग जायाजाव तहेव सव्व

मेरे इस तप नियम ब्रह्मचर्य का फल आगमिक काल में प्राप्त हो तो भविष्य काल में उक्त प्रकार की स्त्री जैसे सुख भोक्ता स्त्री होवूं उदार प्रधान स्त्री संबंधी भोगोपभोग भोगवती हुई विचरूं. यह साधु भाप्रिय कहा ॥ ३३ ॥ यों निश्चय करो श्रमण आयुष्मन्तो ! यों साधु नियाना करते हैं उस नियानेके स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना प्रायश्चित्त लिये बिना काल के अवसर में आयुष्य पूर्ण देवलोक में महा ऋद्धिक यावत् महा सुख का भोक्ता देवता होता है ॥ ३४ ॥ उस देवलोक से आयुष्य का भव का स्थिति का क्षय कर यावत् उच्च कुल में पुत्रिपने उत्पन्न होवे यावत् वह कन्या को पतिके सुपरत करे, वह उस की माया पन, एकाकी यावत् उक्त प्रकार सब करना वह घर के बाहिर जाते

नामए अंबपेसियातिवा, अबाडग पेसियातिवा, मातुलिंग पेसियातिवा, मसपेसियातिवा उच्छुखडियातिवा सयलि फलियातिवा बहुजणस्स आसासणिज्जा पच्छणिज्जा पीहणिज्जा अभिलसणिज्जा एवामेव बइत्थिकावि बहुजणस्स आसासणिज्जा जाव अभिलसणिज्जा तं दुक्ख खलु इत्थितणए पुमत्तणयं साहु जइ इमस्स तवणियमस्स जाव अत्थि अहमवि आगमेस्सणं इमाई एतारूवाइ पुरिस भोगाइ भुंजिस्सामो सेत साहु॥ २९॥ एवं खलु समणाउसो! निग्गथी णिदाणकिच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइय अप्पडिक्कता जाव अपाडवज्जित्ता, कालमासेकालंकिच्चा अण्णयेरसु देवलोएसु देयत्ताएउववत्तारो

लोगों के आस्वादनीय होते हैं बहुत खाना चाहते हैं, बहुत इन की मांग मेला करते हैं बहुत इन की अभिलाषा करते हैं, इस ही प्रकार जगत् में स्त्री जाति की भी बहुत लोगों को आस्वदने (मागवने) योग्य होती है, मांगने योग्य देखने योग्य, अभिलाषा करने योग्य होती है, अर्थात् स्त्री का कोई भी पेन नहीं पहने देते हैं इसलिये निश्चय स्त्री जाति बड़ी दुःखदायी होती है, परंतु पुरुषपना बहुत अच्छा है इस लिये यदि जो मेरे तप संयम ब्रह्मचर्य के फल भविष्य काल में होवे तो मैं भी आगमिक काल में इस प्रकार पुरुष होकर सुखोपभाग की भोक्ता बनूं तो अच्छा ॥ ३० ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! साध्वी नियाना कर के उस स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किये विना काल के अवसर में काल करके अन्य किसी देवलोक में देवता पने अवतार लेता है वहां वह देवता

धम्म पण्णत्ते इणमेव निग्गंथे अतपावयणसेच्च जावे केरति जस्सणं धम्मस्स निग्गंथीए सिक्खाए उवट्ठिया विहरमाणी पुरा दिगिंछाए जाव उदिण काम जाययावि विहरेज्जा॥ ३८॥ साय परक्कममाणी पासेज्जा स जे इमे उग्गपुत्ता महामाउया तेसिण अणतरस्स अइजायमाणेवा २ जाव किं ते आसगस्स सदति ज पासित्ता निग्गंथी निदाण करेइ दुक्ख खलु इत्थित्तणए दुस्संचाइ जाव गामंतराइ जाव सन्निवेसंतराइ, सेजहा

उस धर्म की दोनों प्रकार की शिक्षामें निर्ग्रंथी साध्वी सावधान होती हैं यावत् विचरती हैं वे प्रथम क्षुधादि परिषह देवादि उपसर्ग मोहोदय कामेच्छा को समभाव से जय करते हुवे विचरते हैं ॥ १८ ॥ यों सदैव पराक्रम करते हुवे देखे कि ये जो यह होते हैं उग्रकुलोत्पन्न महा माता के पुत्र, भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र वन में कोई भी घर के बाहिर जाते या पीछा घर में आते तब बहुत दास दासीयों साथ रहते हैं यावत् एक को बोलाने से चार पांच खडे होते हैं वे पूछते हैं आप को किस की रूची है ॥१९॥ उक्त प्रकार गृहस्थ के सुखोपभोग देखकर साध्वी नियाना करे कि स्त्रीपने में तो बडा दुःख भोगवना पडता है कहीं स्वेच्छा से आवागमन कर सके नहीं यावत् स्वेच्छा से ग्रामानुग्राम यावत् सन्निवेस आदि में फिर सके नहीं कदापि आवागमन करे तो स्त्री जाति कैसी है कि यथा दृष्टान्त—जैसे आम्र के फल, अम्बली के फल, बीजोरे के फल, मंस जाति फल, इक्षु के टुकडे, सालली वृक्ष के फल यह फलों बहुत

माणेहिं माणुस्सएहिं कामभोगेहिं निव्वेयगछेज्जा माणुस्सगा खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया सडण पडण विद्धसण धम्मा, उच्चार पासवण खेल जल्ल सिंघाण वंत पित्त सुक्क सोणिय समुब्भवा, दुरूवा उस्सास निस्सास दुरूत्त मुत्त पुरिस पुण्णा वतासवा पित्तासिवा खेलासिवा जल्लासिवा पुच्छा पुव्वचणं अवस्स-विप्पजहणिज्जा, संति देवा उड्ढ देवलोगंसि तेणं तत्थ अण्णेसिं देवाण देविओ अभिजुंजिय २ परियारेति अप्पणा चेव अप्पणा वेउव्विता २

करते हुवे मनुष्य सम्बन्धी ये काम भोग से वैराग्य भाव को प्राप्त हुवे वे विचार करें कि—यों निश्चय मनुष्य सम्बन्धी काम भोग अधुव अनित्य अशाश्वत सडनी पडनी विध्वंसनाशी इन का धर्म [स्वभाव] है यह मनुष्य का शरीर विष्टामूत्र श्लेष्म स्वेद सेडा वमन पित्त शुक्र रक्त इत्यादि अशुची का स्थान है देखने में ही विद्रूप देखाते हैं श्वास निश्वास भी दुर्गंधमय आते हैं विष्ट मुत्रकर पूर्ण भरा हुवे है वमन पित्त श्लेष्म भेद सदैव श्रवता-भरता रहता है और इन को आयुष्य पूर्ण हुवे पहिले व्याधी वियोग हुवे तथा आयुष्य पूर्ण हुवे अवश्य छोडने ही पडते हैं, इस से तो अच्छे वे है जो उर्ध्व देवलोक में देवता हैं तहां वे अन्य किसी देवता की देवीको अपने वश में करके सब प्रकार भोग भोगते है तथा आप स्वय ही यह देव

भवति सेण तत्थ दवे भवति, महिड्ढिए जाव चइत्ता, जेइमे उग्गपुत्ता तहेव दारए भवति जाव किं ते आसगस्स सदति तस्सण तहप्पगारस्स पुरिसस्स जायस्स जाव अभविएणं, से तस्स धम्मस्स सवणयाए, सेत भवति महिच्छा जाव पडिसुणिचए जाव दाहिण गामिएणेरइए जाव दुल्लभ बोहियाएवि भवति ॥ ४ ॥ ॥ ४० ॥ एवं खलु समणाउसो ! मएधम्मे पण्णत्ते, इणमेव निग्गंथे पावयणे तहेव जस्सण धम्मस्स निग्गथोवा निग्गथीवा सिक्खाए उवाट्ठए विहरमाणे पुराविगिच्छाए जाव उदिण्ण कामभोगे विहरेज्जा, ॥ ४१ ॥ सेयं परक्कमेज्जा सेय परक्कम-

महाऋद्धिवंत सुख का भोक्ता होता है यावत वहां से चवकर यहां उग्रकुल में पूर्वोक्त प्रकार पुत्र पने होवे यावत् उक्त प्रकार सुख का भोगवने वाला बन वहां उस पुरुष को साधु महान धर्मोपदेश सुनावे परंतु वह सुने नहीं धर्म श्रवन करन के अयोग्य होता है परतु वह महा इच्छा वाला यावत् दक्षिणदिशा की नरक में उत्पन्न होता है यावत् आगामिक काल में दुर्लभ बोधी होता है ॥ यों निश्चय इस प्रकार नियाना करनेवाला केवली भणित धर्म श्रवण मात्र भी कर सकता नहीं है ॥ ४ ॥ ४० ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा यह निग्रन्थ के प्रवचन यावत् सब दुःख के अन्त के करता हैं इस ही प्रकार यावत निग्रन्थ-साधु अथवा साध्वी दोनो प्रकार की शिक्षा में सावधान हो परिषह उपसर्ग मोहोदय का पराभव करते हैं संयम धर्म में पराक्रम फोडते है ॥ ४१ ॥ इस प्रकार संयम में पराक्रम

अप्पणाचेव अप्पाण विउव्विचा २ परियारति अप्पणीणियाए अभिजुञ्जियइ परियारेति जाव तचेव पुमचार पव्वायति जाव किं ते आसगस्ससयति ॥ ४३ ॥ तस्सण तहप्पगारस्स पुरिस जायस्स तहारूवे समणेवा माहणेवा जाव पडिसुणेज्जा ? हंता पडिसुणेजा, सेणं सद्दहेज्जा पतिइजा रोएज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे अभविएणं सेय तस्स धम्मस्स सद्दहणाए २ सेय भवति महिच्छा जाव दाहिणगामीए नेरइए, आगमेस्साएणं दुल्लभबोहिएयावि भवइ ॥ एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफलवि

रूप वैक्रय कर परस्पर भोग करे, तथा अपनी देवी को अपने वश में कर भोग कर वहां से चवकर पुरुषपने उत्पन्न होवे वह घर से निकल गमनागमन करे तब उस के साथ बहुत दास दासी रहे यावत् एक बोलाते चार पांच आवे क्या चाहते हो ? यों कहे इस प्रकार सुख पावे ॥ ४२ ॥ प्रश्न—उक्त प्रकार के नियाने करनेवाले पुरुष को भी कोई साधु महान धर्मोपदेश करे तो वह उसे श्रवन करे क्या ? हां श्रवन कर सकता है प्रश्न—वह उस धम पर श्रद्धा प्रतीति रुचि कर सकता है क्या ? वह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् श्रद्धा प्रतीति रुची नहीं कर सकता है यह सम्यक्त्व प्राप्त करने योग्य नहीं होता है यह केवली भाषित धर्म की श्रद्धा प्रतीत रूची नहीं करता हुवा वह महा इच्छावाला यावत् दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होनेवाला होता है, उसे भविष्य में बोध बीज की प्राप्ति दुर्लभ होती है

परियारेति अप्पणामजितियाए देवीए अभिजुजिय२ परियारेति ॥जइ इमस्स तव तंचेव सव्व भाणियव्व जाव वयमवि आगमेस्साण इमाई एतारूवाइ दिव्वाइं भोगभोगाइ भुंजमाणे विहरामो, सेत्तं साहु ॥ ४२ ॥ एव खलु समणाउसो ! निग्गंथोवा निग्गंथीवा णिदाण किच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइय अपडिक्कते कालमासे काल किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवंति तंजहा—महिड्डिए महज्जुइएसु जाव पभासेमाणे, सेण अण्णेसिं देवाण अण्णदेविं अभिजुजिय परियारेइ

अपने दो रूप स्त्री का और पुरुष का वैक्रय करके परस्पर भोग करे तथा अपनी देवी को अपने वश में करके उस के साथ भोगकरे इस लिये जो मेरे इन तप अभिग्रह ब्रह्मचर्यादि का फल भविष्य में होवो मुझे उक्त प्रकार का देवतापना प्राप्त होवो जिस से मैं भी वैसे भोग भोगवता विचरूं. ऐसा साधु नियाना करे ॥ ४२ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! साधु अथवा साध्वी उक्त नियाना कर उस स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना काल के अवसर में आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे यह महा ऋद्धिक महा द्युतिवंत यावत् दशों दिशा में प्रकाश करता हुवा अन्य देवता की देवी को भी अपने वश में कर भोगवे अथवा अपने ही स्त्री पुरुष के दो

अप्पणाचेव अप्पाण विउरिवा २ परियारति अप्पणीणियाए अभिजुंजियइ परियारेति जाव तचेव पुमत्ताए पच्चायति जाव किं ते आसगस्ससदति ॥ ४३ ॥ तस्सण तहप्पगारस्स पुरिस जायस्स तहारूवे समणेवा माहणेवा जाव पडिसुणेज्जा ? हंता पडिसुणजा सेणं सद्दहेज्जा पतिइजा रोएज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे अभविएणं सेय तस्स धम्मस्स सद्दहणाए ३ सेय भवति महिच्छा जाव दाहिणगामीए नेरइए, आगमेस्साएणं दुल्लभबोहिएयावि भवइ ॥ एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफलवि

रूप वैक्रय कर परस्पर भोग करे, तथा अपनी देवी को अपने वश में कर भोग कर वहां से चवकर पुरुषपने उत्पन्न होवे वह घर से निकल गमनागमन करे तब उस के साथ बहुत दास दासी रहे यावत् एक बोलाते चार पांच आवे क्या चाहते हो ? यों कहे इस प्रकार सुख पावे ॥ ४२ ॥ प्रश्न—उक्त प्रकार के नियाने करनेवाले पुरुष को जो कोई साधु महान धर्मोपदेश करे तो वह उसे श्रवन करे क्या ? हां श्रवन कर सकता है प्रश्न—वह उस धर्म पर श्रद्धा प्रतीति रुचि कर सकता है क्या ? यह अर्थ योग्य नहीं अर्थात् श्रद्धा प्रतीति रूची नहीं कर सकता है वह सम्यक्त्व प्राप्त करने योग्य नहीं होता है यह केवली भणित धर्म की श्रद्धा प्रतीत रूची नहीं करता हुवा वह महा इच्छावाला यावत् दक्षिण दिशा की नरक में उत्पन्न होनेवाला होता है, उसे भविष्य में बोध बीज की प्राप्ति दुर्लभ होती है

यागे, जे णो संचाएति केवली पण्णत्त धम्मं सद्दहित्तएवा पतियत्तएवा रोइयत्तएवा ॥५॥ ४४ ॥ एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते, तचेव सेय परक्कमेज्जा सेयपरक्कममाणे माणुस्सएसु कामभोगेसु निव्वेयं गच्छेज्जा माणुस्सगा खलुकामभोगा अधुवा अणितिया असासया तहेव जाव सति उड्ढुदेवा देवलोगंसि तणं णो अण्णेसिं देवाणं णो अण्णदेविं अभिजुंजिय २ परियारेति अप्पणाचेव अप्पण विउव्विय २ परियारेति अप्पणत्तीयाए देवीए अभिजुंजिय २ परियारेति॥ जइ इमस्स

यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाने का उक्त प्रकार फल विपाक होते हैं जिस से वह केवली भणित धर्म की श्रद्धा प्रतीति रुची करने समर्थ नहीं होता है ॥ ५ ॥ ४४ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने निर्ग्रंथ प्रवचन रूप धर्म कहा यावत् सब दुःख का अंत करते हैं उस में निर्ग्रंथ पराक्रम फोड़ते हैं वे मनुष्य सबधी काम भोगों से विरक्त बने विचार करते हैं कि–मनुष्य के काम भोग अध्रुव अनित्य अशाश्वत हैं और ऊर्ध्व लोक में देवलोक में देवता हैं वे वहां अन्य देवता की देवी का वश में कर भोगवते नहीं है परंतु आप अपने स्त्री पुरुष के दो रूप बनाकर परस्पर भोग करते हैं या अपनी देवी को अपने वश में कर भोगवते हैं यदि मेरे तप संयम का ब्रह्मचर्य का फल हो तो मैं उक्त प्रकार का देवता हो भोग भोगवता विचरूं. इस प्रकार का नियाना करनेवाले साधु साध्वी इस ही

तवनियम तंचेय सव्वं जाव सेण सद्दहिज्जा पतिएज्जा रोएज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे अण्णत्थरुइ२ मायाए सेयं भवाति ॥ स जे इमे आरणिया आवासियाण गामणियतिवा कण्हि रहास्सिया णो बहुसजया णो बहुपडिविरया सव्वपाणभूयजीवसत्तेसु ते अप्पणा सच्चामोसाइं एवं विपडिवदति अहं ण हंतव्वो अण्णेहतव्वो, अहं नअज्झावेयव्वो अन्नो अज्झावेयव्वो अहं नपरितावेयव्वो अन्ने परितावेयव्वो अहं नपरिघेतव्वो, अन्ने परिघेतव्वो, अहं नउद्दवेयव्वो अन्न उद्दवेयव्वो, एवामेव तं इत्थिकामेहिं मुच्छिया

प्रकार के देवता हो भोग भोगवते हैं वहां से चवकर मनुष्य होते हैं वे श्रमण ब्राह्मण का उपदेश सुनते हैं परंतु श्रद्धा प्रतीत रुची नहीं कर सकते हैं यह जैन धर्म को छोडकर अन्य धर्म को करने की रुची वाला होवे किस प्रकार के धर्म की रुचि होवे सो कहते हैं—जो इसे अरण्य [वन] में वास करनेवाले तपस्वी अथवा ग्राम के नजीक में रहनेवाले तपस्वी किसी कार्य में रहस्य के करनेवाले [अनाचार को गुप्तपने सेवनेवाले] विशेष उन के संयम नहीं, विशेष उन के व्रत नहीं (थोडा २ इन्द्रिय संयम व्यवहारिक व्रत पालते हैं परंतु सम्यक्त्व न होने से गिनती में नहीं लिये) सर्व प्राणी भूत जीव सत्व की घात से निवृते नहीं, इस प्रकार अपनी आत्मा को रखते हुवे सत्यमृषा-मिश्र भाषा बोलते हैं, आगे कहेंगे ऐसी विपरीत भाषा बोलते हैं—हम उत्तम हैं इस लिये हम को मत मारो, परतु अन्य अधर्मियों को

गिद्धा गढिया अज्झोववण्णा जाव कालमासे कालंकिच्चा अण्णयराइं असुराइं किव्विसियाइं ठाणाइं उववत्तारो भवति॥ते तओ विप्पमुच्चमाणा भुज्जो २ एलमूयत्ताए जाव पच्चायति ॥४५॥त एवं खलु समणाउसो! तस्स निदाणस्स जाव ते संचाएति केवलिपण्णत्तं धम्मं सद्दहित्तए ॥ ६ ॥ ४६ ॥ एवं खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते जाव माणुस्सगं खलु कामभोगा अधुवा तहेव संति उड्ढदेवा देवलोगंसि णो अण्णेसिं

मारो इस को दण्डादि का प्रहार मत करो, अन्य को करो इस को किसी प्रकार परिताप मत उपजावो अन्य को उपजावो हमारी दासादि की तरह ग्रहण मत करो, अन्य को ग्रहण करो, इस को किसी प्रकार का उपद्रव मत करो अन्य को उपद्रव करो इस प्रकार के अपना भला और अन्य का बुरा हो ऐसा बोलते हैं वे पाखंडी की संबंधी काम भोग में मूर्च्छित हैं गृद्धि पने हैं, ऐसे हैं वे काल के अवसर में आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी असुरकुमार (भुवनपति) देव में तथा किल्विष देवता में उत्पन्न होते हैं और वहां से मर कर आगे बारम्बार बकरे मेंढे पने गूंगू बोबडेपने उत्पन्न होते हैं ॥४५॥ इस लिये यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उक्त नियाने का करनेवाला केवली प्रणीत धर्म की श्रद्धा प्रतीत रूची करने समर्थ नहीं होता है ॥ ६ ॥ ४६ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा यावत् सब दुःख का क्षय करता है उसे साधु साध्वी पाके वे मनुष्य संबंधी काम भोग को

देवाण, अण्णदेवी अभिजुंजिय २ परियारेति णो अप्पणा चेव अप्पाणं वेउव्विय २ परियारेति, नो अप्पणोच्चियाए देवीए अभिजुंजिय २ परियारेति। जति इमस्स तवनियम तचेव जाव एवं खलु समणाउसो! निग्गंथोवा निग्गंथीवा निदाणकिच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइय तचेव जाव विहरति, सेणं भवं अण्णभव अण्णोदेवो नो अण्णं देवीण अभिजुंजिय २ परियारेति, णो अप्पणाचेव, अप्पाण वेउव्विय २ परियारेति सेण ताओ देवलोगाओ आउक्खएण तहेव णवर हता सद्दहज्जा पतियएज्जा, रोएज्जा, सेण सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहो

अगर अनित्य जाने [इत्यादि कथन पूर्वोक्त प्रकार कहना] परंतु ऊर्ध्व देवलोक निवासी जो देवता हैं वे कैसे हैं कि न तो अन्य की देवी को अपने वश में कर भोगवते हैं और न अपन दो स्त्री पुरुष के रूप बनाकर भोग करते हैं परन्तु अपनी देवी का वश में कर भोग भोगवते हैं जो मेरे तप नियम का फल हो तो मैं भी इस प्रकार का देव होऊं यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो! साधु साध्वी नियाना कर उस स्थान की आलोचना प्रतिक्रमणा किये विना आयुष्य पूर्ण कर उस ही प्रकार के देवता होवे वहां से आयुष्य पूर्ण कर मनुष्य होवे वह श्रमण महाण के पास धर्म श्रवण कर सके उस की रूची भी कर सके परन्तु पांच अनुव्रत तीन गुणव्रत चार शिक्षाव्रत रूप श्रावक धर्म को अंगीकार नहीं कर सके पौषधोपवा-

वयत्ताइ पडिवज्जेज्जा णो इणट्ठे समट्ठे सेणं दसण सावए भवति, अभिगय जीवा जीवे जाव अट्ठिमिज्जा पेमाणुरागरत्ते अयमाउसो ? णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं-परमट्ठे सेस अणट्ठे भेणं एयारूवेणं विहारेणं विहरमाणे बहुइ वासाइं समणोवासग परियाग पाउणइ बहुइ वासाइं समणोवासग परियाग पाउणित्ता कालमासे काल किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, ॥ ४७ ॥ एवं खलु समणाउसो ? तस्स निदाणस्स, इमेयारूवे पावफल विवागे ज णो संचाएति, सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहोववासाइ पडिवज्जित्तए॥७४८॥एव खलु समणा

तादि व्रत प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक्त वह दर्शन [सम्यक्त्वी] श्रावक ही होता है जीवाजीव का ज्ञान होता है यावत् उस हड्डी की मिंजियों भी जिन प्रणित धर्म में परमानुरागरक्त हो वैसा होता है वह वार्तालाप के प्रसंग में कहता है कि–अहो आयुष्मन्तो ! निर्ग्रंथ के प्रवचन रूप धर्म है यही अर्थ है यही परमार्थ है शेष अनर्थ है वह इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यवहार में वर्तता हुवा बहुत वर्ष पर्यंत श्रमणोपासक की पर्याय का पालन कर, कालके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में देवतापने उत्पन्न होवे ॥ ४७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियान के इस प्रकार पाप रूप फल विपाक होते हैं. वह श्रावक के बारह व्रत पच्चखाणादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ४८ ॥

उसो? मएधम्मेपण्णत्ते तचत्र सव्व जाव सेय परक्कमेमाणे देवामाणुस्सएहिं काममागेहिं निवेयगच्छेज्जा, माणुसगस्स खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासय जाव विप्पजहणिज्जा, दिव्वावि खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया चलाचयणधम्मा पुणरागमणिज्जा, पच्छापुव्वंचण अवरसविप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमस्स जाव आगमेस्साणं जइ इमे भवति, उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया जाव पुमचाए पचायंति, तत्थण समणोवासए भविस्सामो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएण एसणिज्जेण असणं पाणं खाइम साइमेण पडिलाभेमाणे विहरइस्सामो, सेत्त साहु

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा यावत् उस में साधु साध्वी पराक्रम फोडते हैं वे देवता सबंधी और मनुष्य संबंधी काम भोग से निवृत्ति धारण करते हैं वे विचार करते हैं कि—मनुष्य संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य हैं अशाश्वत हैं छोडने योग्य हैं, तैसे ही देवता संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य अशाश्वत हैं सर्व चलविचल रूप धर्मधारी हैं सुख के दुःख रूप होजाते हैं कर्मोदय होते जीते ही और मरे बाद भी अवश्य छोडने पडते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम ब्रह्मचर्य का फल आगमिक काल में होवे तो मैं उग्रकुलोत्पन्न महामाता के पुत्र भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

ववासाइ पडिवजेज्जा, णो इणट्ठे समट्ठे सेग दसण सावए भवति अभिगय जीवा जीवे जाव अट्ठमिज्जा पेमाणुरागरत्ते अगमाउसो ? णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं-परमट्ठे सेस अणट्ठे,सेण एयारूवेण विहारेण विहरमाणे बहुइ वासाइ समणोवासग परियाग पाउणइ बहुइ वासाइ समणोवासग परियाग पाउणित्ता कालमासे काल किचा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति ॥ ४७ ॥ एवं खलु समणाउसो ? तस्स निदाणस्स, इमेयारूवे पावफल विवागे ज णो संचाएति, सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहोववासाइ पडिवजित्तए॥ ७४८ ॥एव खलु समणा

सादि व्रत प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक्त वह दर्शन [सम्यक्त्वी] श्रावक ही होता है जीवाजीव का ज्ञान होता है यावत् उस हड्डी की मिंजियों भी जिन भाणित धर्म में परमानुरागरक्त हो वैसा होता है वह वार्तालाप के प्रसंग में कहता है कि—अहो आयुष्मन्तो ! निर्ग्रंथ के प्रवचन रूप धर्म है यही अर्थ है यही परमार्थ है शेष अनर्थ है वह इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यवहार में वर्तता हुआ बहुत वर्ष पर्यंत श्रमणोपासक की पर्याय का पालन कर, कालके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में देवतापने उत्पन्न होवे ॥ ८७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियान के इस प्रकार पाप रूप फल विपाक होते हैं वह श्रावक के बारह व्रत पापपापवासादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ८८ ॥

उसो! मए धम्मपण्णत्ते तत्थ सव्व जाव सेय परक्कमेमाणे देवामाणुस्सएहिं कामभोगेहिं निव्वेयगच्छेज्जा, माणुसगस्स खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासय जाव विप्पजहणिज्जा, दिव्वावि खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया चलाचयणधम्मा पुणरागमणिज्जा, पच्छापुव्वंचणं अवस्सविप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमस्स जाव आगमेस्साण जइ इमे भवति, उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया जाव पुमत्ताए पच्चायति, तत्थण समणोवासए भविस्सामो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएणं एसणिज्जेण असणं पाणं खाइम साइमेण पडिलाभेमाणे विहरइस्सामो, सेच साहु

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो! मैंने धर्म कहा यावत् उस में साधु साध्वी पराक्रम फोड़ते हैं वे देवता संबंधी और मनुष्य संबंधी काम भोग से निवृत्ति धारण करते हैं वे विचार करते हैं कि—मनुष्य संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य हैं अशाश्वत हैं छोड़ने योग्य हैं, तैसे ही देवता संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य अशाश्वत हैं सब चलविचल रूप धर्मधारी हैं सुख के दुःख रूप होजाते हैं कर्मोदय होते जीते ही और मरे बाद भी अवश्य छोड़ने पड़ते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम ब्रह्मचर्य का फल आगमिक काल में होवे तो मैं उग्रकुलोत्पन्न महामाता के पुत्र भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

सवासाइं पडिवजेजा णो इणट्ठे समट्ठे से ण दसण सावए भवति, अभिगय जीवा जीवे जाव अट्ठिमिंजा पेमाणुरागरत्ते अयमाउसो ? णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेस अणट्ठे सेणं एयारूवेणं विहारेण विहरमाणे बहुइं वासाइं समणोवासग परियाग पाउणइ बहुइं वासाइं समणोवासग परियाग पाउणित्ता कालमासे काल किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति ॥ ४७ ॥ एव खलु समणाउसो ? तस्स निदाणस्स, इमेयारूवे पावफल विवागे ज णो सचाएति सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहोववासाइं पडिवजित्तए॥ ७ ४ ८॥ एव खलु समणा

सादि व्रत प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक्त यह दर्शन [सम्यक्त्वी] श्रावक ही होता है जीवाजीव का ज्ञान होता है यावत् उस हड्डी की मिंजियों भी जिन भणित धर्म में परमानुरागरक्त हो वैसा होता है यह वार्तालाप के प्रसंग में कहता है कि–अहो आयुष्मन्तो ! निर्ग्रंथ के प्रवचन रूप धर्म है यही अर्थ है यही परमार्थ है शेष अनर्थ है वह इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यवहार में वर्तता हुवा बहुत वर्ष पर्यंत श्रमणोपासक की पर्याय का पालन कर, कालके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में देवतापने उत्पन्न होवे ॥ ४७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाने के इस प्रकार पाप रूप फल विपाक होते हैं यह श्रावक के बारह व्रत पच्चखाण पौषधादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ४८ ॥

टसो?मएधम्मेपण्णत्ते तचव सन्व जाव सेय परक्कमेमाणे देवामाणुस्सएहिं कामभोगेहिं निवेयगच्छेज्जा, माणुसगस्स खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासय जाव विप्पजहणिज्जा, दिव्वावि खलु कामभोगा अधुवा अणितिया असासया चलाचयणधम्मा पुणरागमणिज्जा, पच्छापुव्वंचण अवस्सविप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमस्स जाव आगमेस्साण जइ इमे भवति, उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया जाव पुमत्ताए पच्चायंति, तत्थण समणोवासए भविस्सामो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएणं एसणिज्जेण असणं पाण खाइमं साइमेण पडिलामेमाणे विहरइस्सामो, सेत्त साहु

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा यावत् उस में साधु साध्वी पराक्रम फोरते हैं वे देवता संबंधी और मनुष्य संबंधी काम भोग से निवृत्ति धारण करते हैं वे विचार करते हैं कि–मनुष्य संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य हैं अशाश्वत हैं छोड़ने योग्य हैं, वैसे ही देवता संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य अशाश्वत हैं सर्व चलविचल रूप धर्मधारी हैं सुख के दु:ख रूप होजाते हैं कर्मोदय होते जीते ही और मरे बाद भी अवश्य छोड़ने पड़ते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम ब्रह्मचर्य का फल आगमिक काल में होवे तो मैं उग्रकुलोत्पन्न महामाता के पुत्र भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

वयासाइं पडिवज्जेजा, णो इणट्ठे समट्ठे से णं दंसण सावए भवति, अभिगय जीवा जीवे जाव अट्ठिमिंजा पेमाणुरागरत्ते अयमाउसो ? णिग्गंथे पावयणे अट्ठे अयं परमट्ठे सेस अणट्ठे से णं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे बहुइं वासाइं समणोवासग परियागं पाउणइ बहुइं वासाइं समणोवासग परियागं पाउणित्ता कालमासे काल किच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति ॥ ९७ ॥ एवं खलु समणाउसो ? तस्स निदाणस्स, इमेयारूवे पावफल विवागे जं णो संचाएति सीलव्वय गुण वेरमण पच्चक्खाण पोसहोववासाइं पडिवज्जित्तए॥ ७ ॥ ९८ ॥एवं खलु समणा

सादि व्रत प्रत्याख्यान भी नहीं कर सके फक्त यह दर्शन [सम्यक्त्वी] श्रावक ही होता है जीवाजीव का ज्ञान होता है यावत् उस ही की मिंजियों भी जिन भणित धर्म में परमानुरागरक्त हो वैसा होता है यह वार्तालाप के प्रसंग में कहता है कि–अहो आयुष्मन्तो ! निर्ग्रंथ के प्रवचन रूप धर्म है यही अर्थ है यही परमार्थ है शेष अनर्थ है वह इस प्रकार सम्यक्त्व धर्म के व्यवहार में वर्तता हुवा बहुत वर्ष पर्यंत श्रमणोपासक की पर्याय का पालन कर, कालके अवसर आयुष्य पूर्ण कर अन्य किसी देवलोक में देवतापने उत्पन्न होवे ॥ ९७ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाने के इस प्रकार पाप रूप फल विपाक होते हैं यह श्रावक के बारह व्रत पौषधोपवासादि नहीं कर सकता है ॥ ७ ॥ ९८ ॥

उसो ! मएधम्मेपण्णत्ते तंचेव सव्व जाव सेय परक्कमेमाणे देवामाणुस्सएहिं कामभोगेहिं निव्वेयगच्छेज्जा, माणुसगस्स खलु काममोगा अधुवा अणितिया असासय जाव विप्पजहणिज्जा, दिव्वावि खलु काममोगा अधुवा अणितिया असासया चलाचयणधम्मा पुणरागमणिज्जा, पच्छापुव्वंचण अवस्सविप्पजहणिज्जा, सति इमस्स तवणियमस्स जाव आगमेस्साण जइ इमे भवति, उग्गपुत्ता महामाउया भोगपुत्ता महामाउया जाव पुमत्ताए पच्चायति, तत्थण समणोवासए भविस्सामो अभिगय जीवाजीवे जाव फासुएणं एसणिज्जेणं असणं पाण खाइमं साइमेणं पडिलाभेमाणे विहरइस्सामो, सेत्त साहु

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा यावत् उस में साधु साध्वी पराक्रम फोडते हैं वे देवता संबंधी और मनुष्य संबंधी काम भोग से निवृत्ति धारण करते हैं वे विचार करते हैं कि–मनुष्य संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य हैं अशाश्वत हैं छोडने योग्य हैं, वैसे ही देवता संबंधी काम भोग भी अध्रुव अनित्य अशाश्वत हैं सब चलविचल रूप धर्मधारी हैं सुख के दुःख रूप होजाते हैं कर्मोदय होते जीते ही और मरे बाद भी अवश्य छोडने पडते हैं इसलिये जो मेरा तप नियम ब्रह्मचर्य का फल आगमिक काल में होवे तो मैं उग्रकुलोत्पन्न महामाता के पुत्र भोग कुलोत्पन्न महा माता के पुत्र यावत्

॥ ४९ ॥ एवं खलु समणाउसो ! निग्गथोवा निग्गथीवा निदाण किच्चा तस्सठाणस्स अणालाइय जाव देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, सेण ताओ देवलोगाओ आउक्खएण जाव किं ते आसगस्स सदति॥५०॥तस्सणं तहप्पगारस्स पुरिसजायस्स जाव पडिसुणेज्जा? हता पडिसुणेज्जा सेणं सद्दहेज्जा? हता सद्दहेज्जा सेणं सीलव्वय जाव पोसहोववासाइ पडिवज्जेज्जा ? हंता पडिवज्जेज्जा सेणं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ? णो इणट्ठेसमट्ठे, सेण समणोवासए भवति, अभिगय

पुरुष पने भवतार धारनकर, तहां में श्रमणोपासक (श्रावक) होवूंगा, जीवाजीव का जान यावत् यहां प्रासुक (निर्जीव) एषनीक (निर्दोष) असपानी पकान मुखवास साधु साध्वीयों को प्रतिलाभता हुवा विचरुंगा में ऐसा होवुंतो अच्छा ॥ ४९ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! साधु साध्वी नियानाकर उस स्थानकी आलोचना प्रतिक्रमण किये बिना आयुष्यपूर्णकर अन्य किसी देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे।

फिर वह उस दे ने आयुष्य का क्षयकर यावत् मनुष्यपने उत्पन्न होवे यावत् एक को बोलाते चार पांच खडे हो भाता है ! ॥ ५० ॥ प्रश्न उसको तथारूप श्रमण महाणका उपदेश श्रवण होवे क्या? हां होता है त रुची भी होवे! हां होती है प्रश्न-वह श्रावक के बाराव्रत पोषधोपवासादि करनी

जीवाजीवे जाव पडिलाभेमाणे विहरति ॥ सेणं एयारूवेण विहारेण विहरमाणे, बहुणिवासाणि समणोवासगपरियागं पाउणइ२त्ता अवाहति उप्पाणसिवा अणुप्पन्नेसिवा बहूइं भत्ताई अणसणाइ पच्चक्खाइ२त्ता बहुहिं भत्ताइ अणसणाइ छेदेइ२त्ता,आलोइए पाडक्कते समाहिपत्ते कालमासे कालंकिच्चा अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति॥५१॥ समणाउसो!तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफलविवागे जेणं णो संचाएति सव्वओ सव्वयाए मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारियं पव्वइत्तए ॥ ८ ॥ ५२॥ एवं

करने वाला भी होवे क्या? हां होता है प्रश्न-वह गृहस्थवास छोडकर साधुपना धारन कर सकता है क्या? यह अर्थ समर्थ नहीं अर्थात् साधुपना नहीं लेसकता है फक्त वह श्रावक पना ही धारन कर सक्ता है, वह श्रावक जीव अजीव का ज्ञान यावत् अशनादि साधुओं को प्रतिलाभता हुवा विचरता है यों बहुत वर्ष श्रावक पना पालकर बाधा-व्याधि प्राप्त होते अथवा नहीं होते संथारा करते हैं बहुत भक्त का अनशन का छेदन कर आलोयना प्रतिक्रमण कर समाधी युक्त काल के अवसर में काल प्राप्त हो अन्य किसी देवलोक में देवतापने उत्पन्न होता है ॥ ५१ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्यमन्तो! उक्त नियाने से इस प्रकार विपाक रूप फल होते हैं कि वह सर्व विरतिपना साधुपना धारन नहीं कर सक्ता है॥८॥५२॥यों निश्चय अहो

|| ४९ || एवं खलु समणाउसो ! निग्गथोवा निग्गथीवा निदाणं किचा तरसठाणस्स अणालाइय जाव देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति, सेण ताओ देवलोगाओ आउक्खएणं जाव किं ते आसगस्स सदति॥५०॥तरसणं तहप्पगारस्स पुरिसजायस्स जाव पडिसुणेजा? हता पडिसुणेजा सेणं सद्दहेजा? हता सद्दहेजा सेणं सीलव्वय जाव पोसहोववासाइ पडिवज्जेजा ? हता पडिवज्जेजा सेण मुंडे भविचा अगाराओ अणगारियं पव्वएज्जा ? णो इणट्ठेसमट्ठे, सेण समणोवासए भवति, अभिगय

पुरुष पने अवतार धारनकरु, वहां में श्रमणोपासक (श्रावक) होवूगा, जीवाजीव का ज्ञान यावत् यहां फासुक (निर्जीव) एषनीक (निर्दोष) अन्नपानी पकान मुखवास साधु साध्वीयों को प्रतिलाभता हुवा विचरूंगा मैं ऐसा होवुंतो अच्छा ॥ ४९ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! साधु साध्वी नियानाकर उस स्थानकी आलोचना प्रतिक्रमण किये विना आयुष्यपूर्णकर अन्य किसी देवलोक में देवता पने उत्पन्न होवे. फिर वह उस देवलोक से आयुष्य का क्षयकर यावत् मनुष्यपने उत्पन्न होवे यावत् एक को बोलाते चार पांच खडे हो बोले क्या आज्ञा है ! ॥५०॥प्रश्न उसको तथारूप श्रमण माहणका उपदेश श्रवण होवे क्या? हां होता है प्रश्न श्रद्धान प्रतीत रुची भी होवे? हां होवी है प्रश्न-वह श्रावक के बाराव्रत पोषधोपावासदि करनी

निग्गथोवा निग्गथीत्रा निदाणं किच्चा तस्स ठाणस्स अणालोइय अपडिक्कते सव्वं तंचेव, सेणं मुंडे भवित्ता अगाराओ अणगारिय पव्वएज्जा ? हंता पव्वएज्जा, सेण तेणेव भवग्गहणेण सिज्झेज्जा जाव सव्वदुक्खाण अंतकरेज्जा ? णो इणट्ठे समट्ठे ॥ सेणं भवति से जे अणगारा भगवतो इरिया समिया जाव बंभयारी, तेणं विहारेण विहरमाणे बहूहिं वासाहिं सामण्णपरियाग पाउणइ २ त्ता अबाहंसि उप्पणंसिवा जाव भत्त पच्चक्खाएज्जा, जाव कालमासे कालंकिच्चा, अण्णयरेसु देवलोएसु देवत्ताए उववत्तारो भवति ॥५४॥

यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उक्त प्रकार का जो साधु साध्वी नियाना करके उस स्थान की आलोचना प्रतिक्रमण किया विना आयुष्य पूर्ण कर महा ऋद्धिक देवता होवे वहां से चवकर उक्त प्रकार के कुल में उत्पन्न होवे प्रश्न—वह श्रमण माहण से धर्म श्रवण कर दीक्षा ले सकता है ? हां दीक्षा ले सकता है प्रश्न—वह उस ही भव में सिद्ध बुद्ध मुक्त होता है ? यह अर्थ समर्थ नहीं, अर्थात् मोक्ष प्राप्त नहीं कर सकता है फक्त वह साधु भगवत ईर्या आदि समिति समिता यावत् गुप्त ब्रह्मचारी इस प्रकार आचार पालते हुवे बहुत वर्ष साधुपना पालन कर बाधा उत्पन्न हुवे तथा विना बाधा ही संलेखना कर भक्त प्रत्याख्यान कर काल के अवसर में काल पूर्ण कर किसी देवलोक में देवतापने उत्पन्न

खलु समणाउसो ! मए धम्मे पण्णत्ते जाव सेय परक्कममाणे देवमाणुस्सएहिं काम भोगेहिं निव्वेयं गच्छेज्जा माणुस्सगा खलु काममोगा अधुवा जाव विप्पजहणिज्जा, देवावि खलु काममोगा अधुवा जाव पुणरागमणिज्जा, सतिजइ इमस्स तव नियम जाव वयमवि आगमेस्साण, जाइइमाइ कुलाइ भवति तंजहा—अतकुलाणिवा, पतकुलाणिवा, तुच्छकुलाणिवा, दरिद्द कुलाणिवा, किविण कुलाणिवा, भिक्खागकुलाणिवा, माहणकुलणिवा एएसिणं अण्णतरासि कुलसि पुमत्ताए पच्चायाति, एसमे आया परियाएसुणीहडे भविस्सति सेतंसाहु ॥ ५३ ॥ एवं खलु समणाउसो !

मैने धर्म कहा यावत उस में निर्ग्रंथ निर्ग्रंथी पराक्रम करे वे देवता संबंधी मनुष्य संबंधी काम भोग से विरक्त बने विचार करे कि निश्चय मनुष्य संबंधी काम भोग अध्रुव हैं यावत छोड़ने योग्य हैं तैसे ही देवता संबंधी काम भोग भी अध्रुव यावत् पुनरागमनी हैं जो मेरे तप संयम आदि करनी का फल हो तो मुझे आगे कहूंगा ऐसे कुलों में जन्म होवे उन कुलों के नाम—१ अन्तकुल-गरीब घर में, २ प्रांत कुल बहुत गरीब कुल में ३ तुच्छ कुल निर्धन कुल में ४ दरिद्र कुल में ५ कृपण कुल में, ६ भिक्षाचारी के कुल में, ७ ब्राह्मण के कुल में इन कुलों में के किसी भी कुल में पुत्रपने उत्पन्न होवूं कि जिस कर आगामिक काल में मुझे दीक्षा धारन करने में किसी प्रकार से अंतराय नहीं आवे. ऐसा हो तो अच्छा॥८१॥

अप्पाण भावेमाणस्स अणंते अणुत्तरे निव्वाघाए निरावरणे कसिणे पडिपुण्णे केवल वरणाणदसणे समुप्पज्जेज्जा ॥ ५६ ॥ तएण से समणे भगव अरहा भवति, जिणे केवली सव्वण्णुसव्वदारिसी, सदेवमणुयासुराए जाव बहूइ वासाइ केवलि परियाग पाउणइ, बहुइ वासाइ केवल परियाग पाउणित्ता अप्पणो आउसेस आभोएइ २ त्ता भत्तं पच्चक्खाइ २ त्ता बहुइ भत्ताइ अणसणाई छेदेति २ त्ता तओपच्छा चरमेहि उस्सासनिसासेहिं जाव सव्व दुक्खाण अत करेति ॥ ५७ ॥ त एव खलु समणाउसो ! तस्स अनिदाणस्स इमेयारूवे

घात जिस को किसी का पडना नहीं ऐसा निरावरण, जो खण्डित नहीं ऐसा कृत्स्न, और जो अधूरा नहीं ऐसा प्रतिपूर्ण प्रधान केवल ज्ञान केवल दर्शन को प्राप्त करते हैं ॥ ५६ ॥ तब वे भगवन्त अर्हन्त होते हैं जिनेश्वर होते हैं केवली होते हैं सर्वज्ञ सर्वदर्शी होते हैं, सर्व देवता मनुष्यों के वंदनीय पूज्यनीय होते हैं यावत् बहुत वर्ष पर्यंत केवली पर्याय का पालन कर अपना आयुष्य को अंत देखते हैं आयुष्य का अंत देखकर भक्त प्रत्याख्यान करते हैं, बहुत भक्त अनशन का छेदनकर तब फिर अन्तिम श्वासोश्वास सर्व शारीरिक मानसिक व जन्मादि सब दुःख का अन्त करते हैं ॥ ५७ ॥ यों निश्चय अहो श्रमण उस नियान नहीं करने का इस प्रकार का आत्म कल्याणकारी फल होता है नियाना नहीं करनेवाले

एवं खलु समणाउसो ! तस्स निदाणस्स इमेयारूवे पावफलविवागे ज णो संचाएति तेणेव भवग्गहणेण सिज्झेज्जा जाव सव्वदुक्खाणं अंत करेज्जा ॥ ५५ ॥ एवं खलु समणाउसो! मएधम्मे पण्णत्ते इणमेव निग्गंथे पावयणे,सेयं जाव परक्कमेज्जा, सव्वकामविरए, सव्वरागविरए, सव्वसंगातीते, सव्वसिणेहाक्कते, सव्वचारित्तपरिवुडे, तस्सणं भगवतस्स अणुत्तरेण णाणेण, अणुत्तरेणं दंसणेणं जाव अणुत्तरेण परिनिव्वाण मग्गेणं

होवे ॥ ५८ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! उस नियाना का इस प्रकार का फल रूप विपाक कहा है कि वह नियाना कृत उस ही भव में मुक्ति जाने समर्थ नहीं होता है ॥ ९ ॥ ५९ ॥ यों निश्चय, अहो श्रमण आयुष्मन्तो ! मैंने धर्म कहा है कि यह निर्ग्रंथ के प्रवचन हैं वे सर्व दुःख के अंत करनेवाले हैं इस से साधु साध्वी पराक्रम फोडते हैं वे सर्वथा प्रकारे काम विकार से विरक्त होते हैं सर्वथा रागद्वेष से विरक्त होते हैं सर्वथा-स्त्री आदि की संगती से विरक्त होते हैं, सर्वथा प्रकार का शरीरादि का स्नेह का छेदन करते हैं सर्वथा प्रकार की जो चारित्र की क्रियाओं है उस के परिवार से परिवरे हुवे विचरते हैं उन साधु भगवंत को साध्वी भगवती को अनुत्तर प्रधान ज्ञान प्रधान दर्शनप्राप्त होता है यावत् कषाय क्षय के मार्ग में अपनी आत्मा को भावते हुवे विचरते हैं वे जिस का अन्त नहीं हो ऐसा अनन्त जिस जैसा दूसरा नहीं ऐसा अनुत्तर,जिसको किसीसे घात नहीं हो ऐसा निर्व्या

सदेवमणुयासुराए परिसाए मज्झगएचेव एव आइक्खइ, एव भासेइ एव पण्णवेइ एव, परुवेइ आयातिट्ठाण नामज्झयण सअट्ठ, सहेऊ सकारण, ससुत्त, सअत्थ, सवागरण, जाव भुज्जो भुज्जो उवदसेत्तिबेमि ॥६०॥ इति दसवीदसा सम्मत्ता ॥१०॥ इति दसासुयखध सुत्त सम्मत्त ॥ २७ ॥

* * * *

सुरासुर सहित परिषदा के मध्य में विराजे हुवे ऐसा कहा ऐसा भाषा, ऐसा प्ररुपा यह आत्मा को कर्म रूप निदान (नियाना) ग्रहण करने का अध्याय अर्थ सहित, हेतु सहित, कारण सहित सूत्र सहित अर्थ सहित, वागरना-व्याख्या सहित यावत् वारम्वार उपदेशा ॥ ६० ॥ जैसा भगवतने कहा तैसा ही अहो जम्बु ! मैंने तेरे से कहा ॥ इति दशमी दशा सपूर्ण॥इति दशा श्रुतस्कन्धनामक सूत्र सपूर्णम्॥२७॥

कल्लाणे फलविवागे जं तेणेव भवग्गहणेणं सिज्झति जाव सव्व दुक्खाण अत करेति॥५८॥ तएण ते बहवे णिग्गथाय णिग्गथीओय समणस्स भगवओ महावीरस्स अतिए एयणट्ठ सोचा णिसम्म समण भगव महावीरं वदइ नमसइ तस्स ठाणस्स आलोइयति पडिक्कंति जाव अहारिह पायच्छिच तवो कम्मपडिवज्जति ॥५९॥ तेण कालेणं तेण समएण समण भगव महावीरे रायगिहे णयरे गुणसिलए चेइए बहुण समणाण बहुण समणीण बहुणं सावगाण बहुणं सावियाण बहुणं देवाण बहुण देवीण,

वे साधु साध्वी भगवंत उस ही भव में सिद्ध बुद्ध मुक्त परिनिर्वान हो सर्व दुःख का क्षय करते हैं ॥५८॥ तब वे बहुत से साधु साध्वीयों श्रमण भगवंत महावीर स्वामी के पास से उक्त कथन श्रवण कर अव धारकरके नियाने के फल से भयभीत हुवे, श्रमण भगवत महावीर स्वामी को वदना नमस्कार किया वंदना नमस्कार कर प्रथम जो श्रेणिक राजा चिल्लना राणीको देखकर नियाना किया था उसकी आलोचना निंदना प्रतिक्रमण किया, यावत् यथा उचित उस का प्रायश्चित्त रूप तप कर्म को अंगीकार किया ॥ ५९ ॥ उस काल उस समय में श्रमण भगवंत महावीर राजगृही नगरी के गुणसिल चैत्य में बहुत साधु, बहुत साध्वी, बहुत श्रावक, बहुत श्राविका, बहुत देवता, बहुत देवी, देवता सहित, मनुष्य सहित,

॥ इति सप्तार्विशातितम ॥

॥ दशा श्रुतस्कन्ध सूत्र-चतुर्थछेद-समाप्तम् ॥

वीराब्द २४४५ भाद्रपद वदी १२ शुक्रवार

शास्त्रोद्धार प्रारंभ
वीराब्द २४४२ ज्ञान पंचमी

इति
दशाश्रुतस्कंध सूत्र
समाप्तम्

शास्त्रोद्धार समाप्ति
वीराब्द, २४४६ विजयादशमी